हादसा

मूल्य : चालीस रुपये (40.00)

संस्करण : 1989
राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली द्वारा प्रकाशित
HADSA (Short Stories) by Raja Ram Singh

ISBN 81-7028-066-4

हादसा

राजाराम सिंह



राजपाल एण्ड सन्ज़

प्रिय बेटी राजलक्ष्मी को
सस्नेह समर्पित

क्रम

बंधक

"पानी···दो घूट पानी दे दो। हलक सूख गया है।" धनुप-बाण एक तरफ फेंककर, हांफते हुए बागुन झोंपड़ी के सामने पसर गया।

सेमा नन्हे बच्चे को छाती से चिपकाये झोपड़ी में लेटी थी। बिना उठे ही, हथेली का टेक लगाकर सिर उठाते हुए उसने पूछा—

"कुछ मिला?"

"कुछ नही।"

"कोई छोटा-मोटा शिकार भी नही?"

"मिलता तो मैं छिपा लेता क्या, या कि रास्ते में ही गटक जाता?" बागुन चिड़चिड़ा हो गया।

"तुम तो नाहक उखड़ रहे हो। बच्चों को क्या कहेंगे? क्या देंगे उनको? आज तीन दिन हो गये···। क्या कोई गोह-गिरगिट भी नहीं दीखा?"

"पहाड़ पर लावा फूट रहा है, सारा जंगल सुलग रहा है, आकाश में लपटें लपलपा रही हैं। ऐसे में बड़े-बड़े जीव-जन्तु तक तो बच नहीं सकते, तुम गिरगिट-गोह की बात कर रही हो। जो रहे, वे या तो पहाड़ छोड़कर नीचे चले गये, या इस आग में भस्म हो गये। एक साल हो तो एक साल, यहां तीन साल से लगातार मौसम भांय-भांय कर रहा है। पानी की एक बूंद नही पड़ी। धरती का कलेजा सूख गया है, माटी की छाती पर दरारें ही दरारें उग आई है। ऐसे में कौन शिकार मिल सकता है भला।"

"कोई पंछी-परिंदा भी नही रह गये।"

"बस गिद्ध-कौवे ही दीखते हैं, जंगल में कंकालो को नोचते हुए। कौवे साले तो तीर-धनुप हाथ में देखते ही कौवारोर करके पूरा जंगल सिर पर

उठा लेते हैं और आगे-आगे उड़ते हुए इतना हल्ला मचाते हैं कि कोई जीव-जन्तु या शिकार कही भूल से भी हो तो भाग जाये, या दुबककर छिप जाये। ये हरामी तो जनम के दुश्मन हैं, जैसे सारे जानवरों की रखवाली का इन्होंने ही ठेका ले रखा हो।"

"उस दिन जो जाघिल लाये थे, वह भी नही दीखी कहीं।"

बागुन चुप रह गया। एक पीड़ा उसके चेहरे पर उभरी और अन्दर तक बेधती चली गई, जैसे दुखती रग पर अनजाने में उंगली रख दी हो, किसी ने।

"कुछ दुख रहा है क्या ? ऐसे बेचैन क्यों हो रहे हो ?"

"वही भूल तो मां को लील गई। तभी से पूरा परिवार भी किसी न किसी बीमारी से बिलबिला रहा है।" लम्बा उच्छ्वास छोड़ते हुए बागुन ने कहा।

"तो क्या वह जाघिल चिड़िया नही थी ?"

"इस अकाल में जांघिल या टर्रे कहां मिलते हैं, सेमा। ये सब तो पानी के जीव हैं।"

"तो वह क्या था ? तुम तो उधर से ही छील-छालकर लाये थे कि पहचान में भी न आये।"

वह फिर चुप रह गया।

"बताते क्यों नहीं। कुछ बोलो भी। वही खाने के बाद मा जी को कै-दस्त जो शुरू हुई तो जान के साथ ही गई। छोटा बच्चा अभी तक नही उठ पाया। आज सुबह से उसका भी मुह-पेट चल रहा है। बदन बुखार से तप रहा है। छाती ही नही पकड़ी, रात से।"

"नही···नही···ऐसा मत कहो सेमा·· मेरे बच्चे को कुछ नही होगा··· कुछ नही होगा मेरे बेटे को···दोहाई बनदेवी की, शक्ति माता, भूल-चूक माफ कर दो मैया। जोड़ा मुर्गा चढाऊंगा, मेरा बेटा ठीक हो जायेगा तो।".

"क्यों झूठी मन्नत मानते हो। कही पूरी न हुई तो उलटी पड़ जायेगी। बेटा-बेटी की बात है, कोई बकरी-भेड़ की नही। यहां तो एक दाने की हाही पड़ी है, तुम जोड़ा मुर्गा चढ़ा रहे हो। कहां से लाओगे इतना ?"

बागुन फिर चुप कर गया।

"बताया नहीं, क्या लाये थे उस दिन।" सेमा ने फिर खोदा।

"अब बस भी करो, क्यों दबी आग को कुरेद रही हो।" उसने मुंह दूसरी तरफ फेर लिया।

"अब उठो भी, दो घूट पानी तो दे दो। कलेजा सुलग रहा है।"

"पानी तो है नहीं, क्या दू तुमको।"

"क्यों? तुम गई नहीं पानी लेने। क्या करती रही सुबह से?"

"कैसे जाती, बच्चा छोड़े तब न।" बांहो के बल धीरे-धीरे उठते हुए उसने कहा। मां की गोद से हटते ही बच्चा चीख पड़ा। वह फिर लेट गई और बच्चे को छाती से चिपकाकर थपकियां देने लगी, पर बच्चे का रोना बंद नही हुआ। उसने अपना स्तन उसके मुंह मे ठूंस दिया। स्तन उगलकर बच्चा रोता रहा। रोते-रोते हिचकियां लग गई। थोड़ी देर में पस्त होकर वह शांत हो गया।

"देख रहे हो न, बच्चे की हालत। मेरा जी तो पत्ता पर टंगा है। मैं तो कहती हूं, नीचे उतर चलो। एक-एक कर पूरी बस्ती के लोग चले गये, पहाड़ छोड़कर। तुम हो कि मा-बाप के लिए बैठे हो। नीचे बस्ती-बाजार में कही भी कोई काम मिल जायेगा। दिन फिरेंगे तो फिर लौट आयेंगे पहाड़ पर। कभी तो बारिश होगी।"

"कैसे चलू सेमा, बूढ़े बापू को अकेले पीछे छोड़कर। चल-फिर भी नही सकते, वरना साथ ही ले लेते। मा के जाने के बाद से तो वह जैसे अधमरे हो गये हैं। अब तो उठ-बैठ भी नहीं पाते ठीक से।"

"मैं सब समझती हूं। बूढ़े बाप के आगे हमारे बच्चे कुछ नही हैं। मर जांय तो मर जांय, तुमको क्या है? बड़ी बेटी को तो खा ही गये। अब··· अब···।" सेमा सिसकने लगी।

"तुम कैसी बात करती हो, सेमा, कुंटी के मरने का मुझे गम नही है क्या। पर करें तो क्या करें। बूढ़े बाप को कैसे छोड़ें पीछे, अकेले। अगर कही कुछ हो गया तो मुह आग देने वाला भी कोई नही रहेगा। वह भी तो बीमार हैं। लगता है, अब अधिक दिनों तक नही चल पायेंगे। फिर तो हम कहीं भी जा सकते हैं।"

"मैं कहती हूं, वह हम सबको चाटकर ही जायेंगे। तुम बैठकर उनकी

ठठरी अगोरो। मैं तो बच्चों को लेकर आज ही नीचे उतर जाऊंगी। एक गवा चुकी हूं। अब इन दोनों को नही मरने दूंगी।"

"कहां हैं बापू?"

"वो क्या लेटे हैं सामने पेड़ के नीचे।"

"जरा देख लू, क्या हाल है, उनका।" वह उठकर चला गया।

कमर मे लंगोटी लपेटे, नंगे बदन बुड्ढा दरख्त की सोर पर सिर टेके उतान सो रहा था। उसका पोपला मुंह खुला हुआ था, जिससे फुकुर-फुकुर सांस आ-जा रही थी। पेट कोही की तरह धंस गया था और शरीर गलकर कंकाल हो गया था। गले की नीली नसें तनी हुई थी।

"बाबू···बाबू।"

बुड्ढा सुगबुगाया, मुचमुचाती आंखें मलमलाईं और करवट घूमकर उठने की कोशिश करने लगा। बागुन ने लपककर सहारा देकर बैठा दिया।

"कैसी तबीयत है, बाबू?"

"ठी···ई···ई···क है····बेटा····आ···आ···।" खोंय-खोंय-खोंय-आक-खोंय-खोंय-खोंय। खासी जो शुरू हुई तो वह लोट-पोट हो गया। दम उखड़ गया। नाक-आंखो से पानी चसने लगा। जार-जार होकर वह घुटने छाती में समेटकर गठरी की तरह फिर जमीन पर ढेर हो गया। बागुन पास बैठकर उसकी पीठ सहलाने लगा। थोड़ी देर बाद थिर होने पर उठकर बैठते हुए बुड्ढे ने पूछा—

"क्या लाये बेटा, बच्चों के लिए?"

"अब जगल में कोई शिकार रह नहीं गया बापू। मीलों तक गया, पर न कही कोई कंदमूल फल दीखा, न जीव-जन्तु ही।"

"बेटा, जिन पेड़ों पर दीमक लगे होते हैं उनके आसपास विपतैया (छिपकली), गिलगिटान (गिरगिट) चपड़े जरूर होते है। लेकिन, बेटा, ये सब शिकार अकारी के हैं, तीर-धनुष के नहीं। भालू भी वहा आते हैं।"

"बापू, अब तो कही कोई दीमक-चूटारी नहीं दीखती। सब भस्म हो गये, इस अगिन में।"

"शेरघटा का पानी कभी नही सूखता बेटा। लेकिन है बहुत दूर। वहां जाने पर कुछ न कुछ जरूर मिल जाता। शाम तक जानवर पानी पीने तो

आते ही हैं।"

"वह तो कब का सूख गया है, बापू।"

"आंय, क्या कहा···शेरघटा भी सूख गया। तब तो परलय आने वाला है, बागुन बेटा। मेह देवता एकदम कुपित लगते है। फिर तो जितना जल्दी हो, बच्चों को लेकर नीचे उतर जाओ, जगल छोड़कर।"

"कैसे छोड दू बापू जंगल। तुम तो चल-फिर भी नही सकते। कैसे चलोगे हमारे साथ।"

"अब मेरी माया छोड़ बेटे। मेरी तो कट गई। अब अंतिम है। नन्हका बीमार है। कही कुछ हो गया तो कुनबे की सोर ही कबर जायेगी। तुम जाओ बेटे, जितना जल्दी हो, जंगल छोड़ दो।"

"नहीं बापू नही। मैं नही जाऊंगा, इस बीमारी-बेहाली की हालत में तुमको अकेले छोड़कर।"

"मैं अकेले नही हूं, मेरे लाल। तुम्हारी मां जो है, मेरे साथ। तुम लोगों के लिए न वह मर गई है। मेरे तो हर समय वह पास रहती है, उठते-बैठते, सोते-जागते, हमेशा बातें करती रहती है। उसको छोड़कर मैं कहीं नही जा सकता बेटे। तुम जाओ मैं···मैं···दिल से कह रहा हूं। मेह बरसने पर वापस आ जाना। मैं तुम्हारी राह देखूगा। एक काम कर, जाते समय अपने हाथ मे दो घूंट पानी पिलाता जा बेटे···गला सूखकर कांटा हो गया है।"

"पानी तो है नहीं बापू, नीचे से लाना पड़ेगा। अभी लाता हूं, जाकर।"

"अरे सुनो सेमा, लगता है, बापू तुम्हारी बात सुन लिए।" लौटकर बागुन ने कहा।

"सो कैसे?"

"तुम्हारी ही बात कह रहे थे।"

"का कह रहे थे?"

"इहै कि बच्चों को लेकर नीचे वस्ती-बाजार में चले जाओ। अभी किसी प्रकार जान बचाओ। मेह आने पर लौट आना।"

"वह कोई तुम्हारी तरह बोंका मनई थोड़े ही हैं। सब जानत हैं।

उनकी तो बीत गई। अब लाश के पीछे बाल-बच्चन को क्यों बधे। चलो उठा लो वारो को। डेगची-थाली भी ले लो। मैं छोटे को ले लेती हूं।"

"कैसे चले सेमा, बीमार बाप को पीछे छोड़कर। अगर कुछ हो गया तो गिद्ध-कौवे ही नोचेंगे।"

"तो तुम बैठे रहो बाप का कंकाल अगोरने के लिए। मैं तो अब नहीं रुकती। अगर मेरे बच्चे को कहीं कुछ हो गया तो मैं···तो मैं···" वह फिर सिसकने लगी।

"अरे···रे···रे तुम तो नाहक बिगड़ रही हो। बच्चे की मोह-माया मुझे नहीं है क्या। मैं भी चलता हूं, जरा बापू के लिए एक घड़ा पानी तो लाकर रख दूं। तुम लोगो को कोई ठाव धराकर देख लिया करूंगा बापू को आकर।" बागुन ने दोनो मटका उठाया और पानी के लिए नीचे चल पड़ा।

ऐसा वज्र अकाल कि पहाड़ के सारे सोते-झरने दम तोड़ गये थे। झील-झोर मे भी कहीं एक बूंद पानी नहीं था। पीने के पानी के लिए पहाड़ के लोगों को दो मील नीचे तमबा नदी पर जाना पड़ता था, जिसमे पानी की जगह तांबे के रंग का बालू भर गया था। कई हाथ गहरा बालू खोदने पर गड्ढे मे नीचे पसीने की तरह धीरे-धीरे नदी पसीजती थी। अंजुली से उलीच-उलीचकर लोग अपने बरतनों मे भरते थे पानी। घड़ा-भर पानी इकट्ठा करने मे आधा-आधा दिन लग जाता था। कभी-कभी तो दो-दो, तीन-तीन गड्ढे खोदने पर भी पानी की पसेई तक नहीं दीखती थी।

बागुन का मन बेचैन था। नन्हका की बीमारी को लेकर उसके दिमाग मे तरह-तरह की शकाएं उठ रही थीं। दोनो बांहो मे मटके लटकाए वह भागे चला जा रहा था। नदी पर पहुंचकर पहले से किसी और द्वारा खोदे हुए गड्ढे मे पानी भरकर वह ताबरतोर ऊपर लौट आया। तब तक सेमा झोंपड़ी का सामान समेटकर एक गट्ठर में बांध चुकी थी और चलने के लिए जैसे घोड़े पर सवार खड़ी थी।

बागुन, बापू को पेड़ के नीचे से उठाकर ले आया और झोंपड़ी में सूखे पत्ते के बिछावन पर गुदड़ी डालकर लिटा दिया। पानी से भरा घड़ा उसके सिरहाने रख दिया। सेमा ने एक टूटही डेगची और कटोरा बुड्ढ के लिए छोड़ दिया था। नदी से लौटते समय बागुन पाकुर की छाल भी लेता आया

था। छाल सिरहाने सहेजकर रखते हुए उसने बता दिया कि भूख लगने पर वह छाल उबालकर भूख मिटा सकता है। हालांकि वह अच्छी तरह जानता था कि छाल के पानी से बापू को दस्त लग सकती है। सब कुछ जानते हुए भी वह बापू के प्रति सहानुभूति दिखा रहा था। बापू भी खुश-खुश उसको ढेर सारी आशीषें दे रहा था। बाप-बेटे जानबूझकर एक-दूसरे द्वारा छले जा रहे थे, लेकिन इस छलावे के अलावा उनके पास और कोई विकल्प भी तो नही था।

सेमा नन्हें बच्चे को कंधे से चिपकाए आगे बढ़ गई थी। बागुन गठरी सिर पर उठाये बारो को गोद लेने के लिए ज्यों ही लपका, बारो जमीन पर पसरकर हाथ-पैर पीटने लगा और बाबा को भी साथ ले चलने के लिए जिद करने लगा। बागुन ने बहुत दुलराने, समझाने की कोशिश की, लेकिन बारो किसी तरह भी बाबा को छोड़कर जाने को तैयार नही हुआ। वह दौड़कर बाबा से लिपट गया और उसकी बाहें पकड़कर अपने साथ चलने के लिए खींचने लगा। बुड्ढे ने बच्चे को अपनी सूखी बांहों मे भर लिया और सीने की ठठरियों से चिपकाकर बच्चों की तरह पुक्का फाड़कर रो पड़ा। वह खूब जानता था कि उसकी जिन्दगी अब चन्द दिनों की रह गई है। जीतेजी अब फिर—फिर बेटे और पोतों से मुलाकात नही होनी है। आत्मा हाहाकार कर रही थी, फिर भी दिल पर पत्थर रखकर उसने बारो को पुचकारा, प्यार किया और समझा-बुझाकर बिदा कर दिया।

अगले डेढ घंटे में वे पहाड के नीचे से गुजरने वाली सड़क पर थे। हालाकि दुपहरी ढल चुकी थी, लेकिन आकाश मे अभी भी आग बरस रही थी और हवा मे लपटें उठ रही थी। सड़क पर इक्की-दुक्की गाड़िया फर्राटे से उनके पास से गुजर जाती थी। दो घूट पानी और दो टूक रोटी की तलाश में वे मुह उठाए मैदानी धरती और बस्ती-बाजार की ओर भागे जा रहे थे। ठांव कहां मिलेगा, मुकाम कहां होगा, यह उन्हें भी मालूम नही था। एक अनिश्चय, निराश और अंधकार भरा रास्ता उनके सामने था, पर उस निराशा में भी आशा की एक क्षीण किरण उनको खींचे लिये जा रही थी कि अन्न-जल से भरी-पूरी धरती पर सभ्य लोगो के बीच वे जा रहे हैं। उन्हे क्या मालूम कि जगल से निकलकर भेड़िये अब मैदानों में बस गये हैं।

पहाड़ के नीचे से आने वाली सड़क मैदानी इलाके में आकर एक बड़ी सड़क में मिल जाती थी। वहां तिराहे पर झोंपड़ियों में कुछ चाय-पान की दुकानें और एक होटल था, जहां इधर-उधर से आने वाली बसें-ट्रकें अक्सर रुक जाती थीं। रास्ते में तेज धूप और लू के ताप से, नन्हें बच्चे की हालत और बिगड़ गई थी। रह-रहकर वह चीख पड़ता था और रोते-रोते हिचकियां लग जाती थीं।

होटल के सामने एक चांपाकल था, जहां बैठा होटल का एक लड़का जूठे बर्तन धो रहा था। पानी देखकर उनकी प्यास भभक उठी। गठरी-पोटरी एक तरफ फेंककर वे चांपाकल पर टूट पड़े। लड़के को उनकी बेअदबी अच्छी नहीं लगी। उसने दरदराकर ऐसा डांटा कि वे हक्के-बक्के रह गये और बिना पानी पीये ही पीछे हट गए। बागुन डरकर बच्चों के साथ सड़क से दूर एक बबूल के दरख्त के नीचे जाकर बैठ गया। पानी देखकर प्यास और धुधुआने लगी। दम निकला जा रहा था। पेड़ के नीचे दुबके वे सब चांपाकल और होटल-मालिक की ओर टुकुर-टुकुर देखते रहे। कल काफी देर से खाली थी, पर बागुन की हिम्मत नहीं हो रही थी कि वह कल पर जाकर प्यास बुझा ले। साहस करके वह होटल-मालिक के पास गया और हाथ जोड़कर इशारे से पानी पीने की इजाजत मांगी। स्वीकृति में मुस्कराते हुए होटल-मालिक ने हाथ हिला दिया।

पानी पीकर पूरा परिवार तृप्त हो गया। सेमा ने तो मल-मलकर हाथ-पैर भी धोये, चेहरे और आंखों में छींटे मारे और बाल संवारे। वह घुटने तक एक टुकड़ा लपेटे थी। ऊपर बण्डी डाले थी, जिसकी बांहें नहीं थीं। गले में सतरंगी गुरिया और लाल मूंगों की दो मालाएं पहने थी। खुले अंगों पर गोदने के निशान स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। ठोड़ी और दोनों गालों के बीच काले तिल जैसे गोदने गुदे थे। माथे पर टिकुली की जगह गोदने की गोल बिन्दी थी। बाहों में मछलियां फड़क रही थीं। एक बांह पर शृंगार करती युवती और दूसरी पर नाचते मोर के गोदने के निशान थे। गोल चिकनी दोनों पिण्डलियों पर अहेरी और उन्मत्त हिरनी के चित्र उकेरे गये थे। अनायास ही लोगों की नजरें कल पर टिक गईं। होटल-मालिक टकटकी बांधे घूरे जा रहा था। ऐसा यौवन, ऐसी कद-काठी, तीखे नाक-नक्श और

गठीला बदन, उसने आज तक वनवासियों में नही देखा था। पानी पी लेने पर होटल वाले ने इशारे से बागुन को अपने पास बुला लिया। सेमा गठरी के पास चली गई।

बातचीत के दौरान भोले-भाले बागुन से उसने सारी बातें पूछ लीं। उसे यह भी मालूम हो गया कि इनकी मजबूरी बच्चे की बीमारी है, जिसके तुरन्त इलाज के लिए उन्हें रुपये चाहिए। लेकिन इस बात पर उसे यकीन नहीं हो रहा था कि लड़की उसकी पत्नी और तीन बच्चों की मां है। देखने मे अभी भी वह कमसिन अनछुई कुंआरी लगती थी। उम्र कोई सोलह-सत्रह साल से अधिक नही दीखती थी। लड़की उसकी निगाहों में गड़ गई। उसे हासिल करने के लिए उसका दिमाग जाल बुनने लगा। उसने बागुन को बताया कि बच्चे का इलाज कोडीघाट अस्पताल मे हो सकता है, जो यहा से दस मील दूर है। इलाज मे कम-से-कम दो-तीन सौ रुपये तो लगेंगे ही।

बागुन उसके हाथ-पैर जोडने लगा, मिन्नतें करने लगा कि वह उसे तीन सौ रुपये दे दे। बदले में उसका शरीर बंधक रख ले। वह जब तक रुपया चुका नही देगा, उसके यहां काम करता रहेगा।

होटल वाले को लगा, उसका तिकड़म काम कर रहा है। शिकार खुद-ब-खुद जाल में फंस रहा है। उसने उदासीनता दिखाते हुए कहा—

"मैं तुझ-जैसे जंगली को बंधक रखकर क्या करूंगा। काम-धंधा भी बंद करवाना है क्या। हां, तुम्हारे पास कोई सोने-चांदी का जेवर हो तो रख सकता हूं।"

"हम जगलियों को गुरिया-मूगा के अलावा सोना-चादी कहां मिले सरकार।"

"तब भाग जा यहां से। कोई और रास्ता देख। ऐसे फोकट में कोई रुपये नही देगा। तेरे जैसे रोज छत्तीस उतरते हैं, पहाड़ से, ऐसे ही मरते-खपते। जा भाग जा, मेरा वक्त मत जाया कर, खामखां में।"

बागुन मुंह लटकाये भारी कदमो से वापस अपने बच्चो के पास लौट आया और गठरी सिर पर उठाकर आगे चल दिया।

सेमा का यौवन, उसके बदन का कसाव, हिरनी-जैसी चंचल बड़ी-बड़ी आंखें, कानों तक खिचे हुए बांके कोर, होटल वाले के दिल में फिर सालने

लगे। बागुन कुछ कदम ही आगे बढ़ पाया था कि होटल वाले ने हांक लगाई और हाथ के इशारे से उसे पुनः अपने पास बुलाया। बागुन की आंखें चमक उठीं। गट्ठर नीचे रखकर भागता हुआ वह उसके पास पहुंच गया।

"तेरे बच्चे की बीमारी मुझसे देखी नहीं जाती। अगर जल्दी इलाज नहीं हुआ तो बचना मुश्किल होगा। तू तो मेरे किसी काम का है नहीं। एक उपाय है। अगर तू चाहे तो मैं पैसे दे सकता हूं।"

"बोलो मालिक, मैं जरूर करूंगा। मुझे पैसे चाहिए, चाहे मेरी जान भी ले लो।"

"सोच लो। इतना आसान नहीं है, मान लेना। मैं तो तेरे बच्चे की जान की खातिर कह रहा हूं।"

"मैं सब कुछ करने को तैयार हूं सरकार। आप बताओ तो सही।"

"अपनी घरवाली को यदि तुम बंधक रख दो तो मैं पैसे दे सकता हूं।"

बागुन का खून खौल उठा। शिराएं तन गईं। रगों का सारा लहू खोपड़ी में चढ़कर उबलने लगा। जी में आया आंखें निकाल ले इसकी। अगर अनुप-बाण पास रहा होता तो अब तक कलेजे के पार होता बाण। क्रोध से तिलमिलाकर पैर पटकता हुआ वह तेजी से वापस लौट गया।

"क्या हुआ? इतना क्यों उबल रहे हो? गाली-वाली दी क्या?" सेमा ने आश्चर्य से पूछा।

"बकवास बन्द करो और भाग चलो यहां से।" उसने लपककर गठरी उठाई और बारो की बांह पकड़कर घिराते हुए तेज-तेज चल दिया। भूख से बिलबिलाता नन्हा बारो उसके साथ चल नहीं पा रहा था और बार-बार खाने के लिए कुछ मांगता हुआ जमीन पर पसर जाता था। क्रोध में बागुन ने उसे पीट दिया। बारो जमीन पर पछारा खाकर चीखने लगा। घसीटते हुए वह तिराहे से आगे, बड़ी सड़क के पार, उसको ले गया और बेहया के झुरमुटों के बीच पटक दिया। गठरी एक तरफ फेंककर वह खुद भी पसरकर बैठ गया। उसकी आंखों में अभी भी खून चढ़ा हुआ था।

सूरज ढल रहा था, लेकिन मौसम में अभी भी तपिश थी। तेज गर्म लू चल रही थी। सड़क पर गाड़ियों का आना-जाना बढ़ गया था। उसने देखा, सवारियों से भरी बसें, जीपें आते ही दो नौजवान छोकरे मिट्टी की हांडी

में पानी और गिलास लेकर दौड़ पड़ते है और प्यासे लोगो में पानी की लूट हो जाती है। एक गिलास का वे अठन्नी लेते हैं। उसके दिमाग मे आया, यदि वह भी दो-एक डेगची पानी वेच ले तो शाम को रोटी मिल सकती है। गठरी से उसने पुरानी फूटी-पिचकी काली-कलूटी एक डेगची निकाली, जिसका गला कटा हुआ था। पानी भरकर बस आने के इन्तजार में वह सड़क के किनारे खड़ा हो गया। पानी पिलाने के लिए उसने टीन का डिब्बा ले लिया था। एक वस आते ही वह दौड़कर उसमे चढा ही था कि कंडक्टर ने धक्के मारकर नीचे ठेल दिया। इतने मे वे दोनो छोकरे बस में घुसकर पानी पिलाने लगे। वह हक्का-बक्का-सा नीचे खड़ा देखता रह गया। बस चले जाने पर पानी वाले छोकरे गालिया देते हुए उस पर टूट पड़े और लात-घूसो से कचूमर बना दिये। उसकी डेगची भी पत्थरो से मारकर तोड दिये।

पहर-भर रात जा चुकी थी। चारों तरफ मनहूस अंधेरा फैल गया था। बागुन अपने बच्चों के साथ बेहया के झुरमुटो मे पड़ा था। वह बेहद डरा हुआ था और अपने-आपको असुरक्षित महसूस कर रहा था। उसे लगता, रात के अंधेरे में उसके साथ कुछ भी अनहोनी हो सकती है। जगल मे खखार जानवरो के बीच भी उसे कभी ऐसा भय महसूस नही हुआ था। बारो रोटी के लिए रिरिया रहा था और बार-बार उसका मुह नोच रहा था। सेमा छोटे बच्चे को सीने से चिपकाये लेटी थी। छोटे बच्चे की बीमारी बढ़ गई थी। अब वह रह-रहकर चिहुक उठता था और रोते-रोते उसके हाथ-पैर ऐंठ जाते थे। बच्चे के साथ सेमा भी सिसकने लगी थी। बच्चे के इलाज के लिए वह बार-बार बागुन को कोंच रही थी। बागुन चुप था। तंग आकर सेमा ने कहा, "यदि तू कुछ नही कर सकता तो मुझे ही कही बेच दे, या गिरवी रख दे, लेकिन मेरे बच्चे को बचा ले। मैं इसके लिए अपना तन भी बेचने के लिए तैयार हूं। तू बोलता क्यो नही? कैसा कठबाप है?" बागुन फिर भी चुप था। इतने मे दो आदमियो की छाया उनके पास आती हुई महसूस हुई। बागुन अदककर एकदम उठ बैठा।

"हा-हा-हा···डर गये···अरे भाई जगली लोग तो बड़े बहादुर होते हैं। अच्छा खैर, देख। तेरे को एक बात कहने आये हैं अपन लोग। ये धंधे

की बात है। धंधे में बाप, बेटे का नहीं होता। अगर तुमने यहां पानी पिलाने की कोशिश की तो बताये देते हैं, तुम्हीं या हमीं। बहुत बड़ी दुनिया है। तू और कोई जगह ढूंढ ले। और फिर तेरे को पानी बेचने की क्या जरूरत है। तेरे पास तो टकसाल है टकसाल। बस भुनाता जा और मौज-मस्ती करता जा। ऐसा कड़क माल नहीं मिलता है, देशवासियों को।" इतने में छोटा बच्चा कराहने लगा।

"च···च···च लगता है, तेरा बच्चा बीमार है। लू लग गई है क्या? आज ही उतरा है न पहाड़ से। कुछ खाया-पिया कि नहीं? देख भाई एक बार फिर कहे देते हैं, तू बाल-बच्चे वाला है। हमारे धंधे में टांग अड़ायेगा तो ठीक नहीं। हम पानी जरूर बेचते हैं, लेकिन यहां के बादशाह हैं, बादशाह। तेरे को देखना है तो चल हमारे साथ।"

"अरे यार, इसका बच्चा बीमार है। कहां घसीटेगा इसे।" दूसरे ने कहा।

"ऐं···अच्छा रहने दे भाई। हम अभी आते हैं।" दोनों छोकरे हंड़िया (चावल की शराब) पीकर टन्न थे और नशे में झूमते हुए बागुन को डराने-धमकाने आये थे।

थोड़ी ही देर में वे दोनों फिर लौट आये। साथ में एक डेगची भात भी ले आये। डेगची उसके सामने रखते हुए, एक ने कहा, "ले भाई, तू हमारा भाई है। कभी हम भी भूखे थे, तुम्हारी तरह। खा ले भर पेट। तू भी क्या याद करेगा। बच्चों को भी खिला दे। लेकिन एक बात याद रखना, धंधे में भाई, भाई का नहीं होता। ये ले पांच रुपये किराये के। सुबह होते ही यहां से भाग जाना समझा। डेगची भी रख ले। तेरी डेगची हम लोगों ने तोड़ दी थी न।" कहते हुए वे दोनों झूमते हुए वहां से चले गये।

मंगरा डेगची पर टूट पड़ा। बागुन ने भी दो-चार कौर जो खाया-पिया अन्दर धकेला, लेकिन सेमा नहीं उठी। बागुन ने बहुत समझाया, मनाया कि दो कौर खा ले, मगहरा को भी दो दाना खिला दे, लेकिन सेमा में कोई हरकत नहीं हुई।

रात में बच्चे की हालत और बिगड़ती गई। बागुन बेचैन था। छोटे बच्चे की याद उसके मन को बेध रही थी। रह-रहकर वह सोचता, अब

सेमा खुद अपने को बेचने की बात कह रही है, तो क्यों न होटल वाले की बात बता दे। लेकिन शब्द उसके मुह से नहीं फूट रहे थे। बहुत हिम्मत करके उसने कहा, "सेमा···सेमा···सुन रही हो···क्या सचमुच तुम···तुम अपना···मेरा मतलब है अपने को···।···चुप क्यो हो···बोलो···वह भी मेरे···मेरे जिन्दा जी···सेमा··?"

"हां···हा···हां···मैं···तन बेचूगी, अपने को गिरवी रखूंगी। तेरे को इतनी ही शर्म है, तो क्यों नही बच्चे के इलाज का इन्तजाम करता। लाज लगती है, तो जाकर कहीं डूब मर। मैं बेचूंगी अपने को···और चारा ही क्या है ··।" वह हिचक-हिचककर सिसकने लगी।

बागुन काफी देर तक चुप रहा। फिर धीरे-धीरे बोला, "सेमा···तुम नाराज मत हो···मैं···मैं खुद अपने को बेचने को तैयार हू, यदि कोई खरीदे तो···। वह होटल वाला है न···वह कह रहा था कि यही दस मील पर कोई अस्पताल है···इलाज हो जायेगा···बच्चा एकदम ठीक हो जायेगा, लेकिन···लेकिन···दो-तीन सौ रुपये लगेंगे···सुन रही हो न···दो-तीन सौ रुपये···। वह देने को भी तैयार है···खुद कह रहा था···लेकिन अगर धनुष-बाण रहा होता तो मैं बाण उसके कलेजे के पार कर दिया होता···।" उसकी नसें फिर तन गईं। काफी देर चुप रहने के बाद वह फिर बोला, "वैसे वह भी वही कह रहा था···जो तुम कह रही हो···सुन रही हो न···।"

"क्या कह रहा था? साफ-साफ क्यों नही बताते। बुझौवल क्यो बुझाते हो?"

"कह रहा था···कह रहा था कि···" कहते-कहते वह गला साफ करने लगा जैसे गले में कोई भारी चीज अटक गई हो। "··· अब मैं क्या बताऊं··· वही जो तुम कह रही हो···। लेकिन तीन सौ देगा और बच्चा ठीक हो जायेगा···फिर तीन सौ जुटाकर छुड़ा लेंगे। कोई हमेशा की बात थोड़े ही है···।"

"साफ-साफ क्यों नही कहते कि तीन सौ में तुम मुझे उसके हाथ बेचना चाहते हो।"

"च···च···च···बेचने की बात कौन करता है···बात बंधक की है।

जब तीन सौ होंगे, देकर छुड़ा लायेंगे···बच्चे का इलाज तो हो जायेगा। तुम भी तो यही चाहती हो···।"

"ठीक है, मैं तैयार हूं। उठो चलो, अभी चलो।"

"नहीं···नहीं···अभी नहीं···सुबह होने दो। रात के अंधेरे में जाने पर, जो देखेगा, क्या सोचेगा।"

"तुमको रात के अंधेरे का डर है। अब तो न जाने कितनी अंधेरी रातें उसके यहां गुजारनी पड़ेगी। क्या तुम यह नहीं जानते। तब कहां मुंह दिखाओगे। लेकिन मैं तैयार हूं। मेरा बच्चा ठीक तो हो जायेगा न। उठो, और देर मत करो, चलो, मैं तैयार हूं।" कहते हुए वह उठ बैठी और बच्चों को उठाकर चलने के लिए तैयार हो गई। बागुन चुपचाप उठकर उसके साथ चल दिया।

"अभी पहर-भर रात गई होगी। पैसा मिलते ही कोई सवारी करके बच्चे को अस्पताल ले जाना। देर मत करना। ठीक हो जाने पर, मुझे खबर कर देना।" बागुन सिर झुकाये चलता रहा।

होटल खुला था। कुछ ग्राहक बैठे थे। सामने सड़क पर दो-चार ट्रकें खड़ी थी। वे सब जाकर होटल के पीछे खड़े हो गये। उनको देखते ही होटल वाला लपक कर उनके पास आ गया। उस समय वह शराब के नशे में धुत था। बिना कुछ बोले ही उसने लुंगी की मुर्री से नोटों का बंडल निकाला और सौ-सौ की तीन नोटें बागुन की तरफ बढा दीं। कांपते हाथों से बागुन ने नोटें थाम लीं। उस समय उसका बदन पसीने से नहा आया था, जैसे गीले कपड़े की तरह किसी ने उसे निचोड़ दिया हो।

"देखो भाई यह तुम्हारी अमानत है। जैसे गहना-गीठो रखते हैं, वैसे ही इसको भी अमानत समझकर रख लिया। काम करेगी, खायेगी। मूल पर ब्याज तो लगेगा ही। सब दस परसेंट महीना लेते हैं। मैं तुमसे पांच ही लूंगा। हिसाब-किताब जेठ की पूर्णमासी के माथे। छुड़ाना हो तो साल-भर का एक सौ अस्सी रुपये सूद और तीन सौ मूल, यानी पूरे चार सौ अस्सी लेकर आना, लेकिन बीच में नहीं। बोलो ठीक है न। तो बच्चों को पकड लो और भेज दो अन्दर।"

सेमा ने नन्हें बच्चे को ज्यों ही बागुन को पकड़ाकर अन्दर जाने के

लिए कदम उठाया, बच्चा चीख पड़ा। सेमा वहीं ठिठक गई और पुन: बच्चे को गोद में लेकर पुचकारने लगी। बारो भी मां-मां करते हुए उसकी टांगों से लिपट गया और जोर-जोर से रोने लगा।

"देखो भाई यह सब नौटकी करनी हो तो भाग जाओ यहां से। मेरा पैसा वापस कर दो, वर्ना बच्चे पकड़ो और चंपत हो जाओ।" होटल वाला बिगड़ गया।

सेमा ने बच्चे को फिर बागुन की बांहों में दे दिया, लेकिन बच्चा देते समय वह फूट-फूटकर रो पड़ी। होटल वाले ने बारो को उसकी टांगों से खींचकर अलग कर दिया और बांह पकड़कर सेमा को अन्दर खींचकर सिटकनी चढा दी। बच्चे बाहर रोते-चीखते रहे। अन्दर सेमा बिलखती-बिलबिलाती रही। धीरे-धीरे बच्चों के रोने-चीखने की आवाजें दूर होती गई।

रक्तबीज

देवेन भोजपुर स्टेशन उतरा तो एक बज रहा था। गर्मी के दिन थे। तेज लुक्कड़ चल रहा था। रह-रहकर बवंडर के साथ हवा मे धूल के बगूले उठ रहे थे। रेल की चमचमाती पटरियों और नंगे प्लेटफार्मों पर चिलचिलाती दुपहरी कमर लपलपाती हुई नाच रही थी। पूरे बारह वर्षों बाद वह ससुराल जा रहा था। गाव करीब छः कोस दूर बीहड़ देहात मे पड़ता था। साथ में पत्नी और दोनों बच्चे भी थे।

स्टेशन पर कदम रखते ही बारह साल पुरानी यादे ताजा हो उठी। लगा, अभी कल की ही बात है। यही पर मेंहदी-महावर रचे, पाजेब मे झनर-झनर झनकते पत्नी के पाव, पहली बार उसने देखे थे, जब गाड़ी चढने के लिए उसने डोली से बाहर कदम रखे थे। चुनरी-पिछौरी मे छुईमुई-सी सिकुडी-सिमटी पत्नी को गाड़ी मे उसकी बगल में बैठाते हुए, नाइन ने आखों ही आंखों मे, इशारों से, ढेर सारी बातें कह दी थी। वह रोमांच से सिहर उठा था। रास्ते-भर कितनी बेताबी थी, घूंघट के पीछे छिपे मुखड़े की एक झलक पा लेने की। वह कमलिनी की नाल-सा नाजुक छरहरा बदन अब फूलकर बैलट बन गया था। उसने पत्नी की ओर भेदभरी नजरों से देखकर मुस्करा दिया।

"ऐसे क्यो घूर रहे हो जी।" पत्नी ने टोका। वह झेप गया, जैसे चोरी करते पकडा गया हो। देवेन को इस इलाके से, यहां. के लोगो से, धरती-आकाश और आबोहवा से, ताल-तलैया, बाग-बगीचे और चिड़िया-चुनमुन से एक विशेष प्रकार का रागात्मक लगाव था। ससुराल का नाम लेते ही सलहज-सालियों की यादें बरबस ही दिल मे हिलोरें लेने लगती थी और एक भीनी-भीनी मिठास अन्दर ही अन्दर घुलती चली जाती थी। मन

"स्साला जवान लड़ाता है, हमरा सामने। तीन फाल (कदम) का एक रुपैया लेगा रे हरामजादा। भाग जा इहवां से।" झपटते हुए वह सज्जन बस की ओर बढ़े ही थे कि पीछे से उसने अंगरखे का खूंट पकड़ते हुए एक बार फिर चवन्नी मांगी। उलटकर उस सज्जन ने ऐसा हाथ मारा कि वह बिलबिलाकर दूर जा गिरा। "स्साला चोरकट, जेबे मां हाथ डालता है रे।" वह पलटकर खड़े हो गये और शोर मचाते हुए गालियों की झड़ी लगा दी। इतने में कुछ लोग वहां इकट्ठे हो गये और जेब में हाथ डालने के लिए सब के सब छोकरे को फटकारने लगे। छोकरे के मुंह और नाक से खून बह रहा था। वह धीरे-धीरे उठा और उस सज्जन की ओर घूरते हुए दूर चला गया। उस समय उसकी आखों में अंगारे सुलग रहे थे।

शादी-ब्याह का समय होने के कारण बस अड्डे पर भीड़ काफी थी। देहात के लोग बोरा-बोरी, गठरी-बकुचे में तरह-तरह का सामान बांधे बस के इन्तजार में बैठे थे। बस आते ही भर्र से भागकर लोगबाग अन्दर, बाहर, ऊपर, नीचे जहां जगह मिली, चमगादड़ की तरह लटक गये। वह खड़ा देखता रह गया। इतने में बस का खलासी उसके पास आया और डबल रेट पर आगे की एक पूरी सीट का सौदा करके उसका सूटकेस लेकर बस के ऊपर रख दिया और अन्दर की भीड़ को धकियाते हुए अगली सीट खाली करवाकर उसको बैठा दिया। पहले से बैठे लोग हिकारत से उसकी तरफ देखते हुए भुनभुनाकर रह गये। ज्योंही बस बाजार से बाहर पोखरे के मोड़ पर पहुंची, एक सिपाही ने डंडा हिलाते हुए बस को रुकने का इशारा किया। भद्दी गाली देते हुए ड्राइवर ने ब्रेक लगा दी। सिपाही के साथ उसकी बीवी, पांच बच्चे, टाट मे बंधे दो गट्ठर और एक बक्सा था। बीवी का पेट भारी था। शायद छठा नागरिक देश को कृतार्थ करने वाला था।

"मेम साहब के तकलीफ न होय दीवान जी। जगह त नइखे देखात।" खलासी ने डरते-डरते कहा।

"करे स्साला हेतना पबलीग वास्ते जगे है, हमरी मेमिन वास्ते नाही। का बूझता है गड़िया जायेगा आगे हीया से, बिना हमरा लिये। अगली सीट समुच्चे खाली कराओ नही तो ठीक नाही। चला हो मलकिनी, उठ जा धीरे-धीरे। हई समान चढ़वाव रे स्साला, मुंह का ताकता भुच्चड़ नाईं।"

सिपाही ने खलासी को डाटते हुए कहा ।

"अगली सिटिया पर त एगो हाकिम बइठल वानी दीवान जी। तहरा मेमिन के दुसरी सिटिया पर बैठा दी।"

"समुच्चे देश के चराई हम, आ तू हमही के चरावताड़ा। हई लउरिया देखताड़ा कि ना। जौने घरी हतना ढासब न, त छीक ना आई। पूरी-पूरी असीये खाली हो जाई, भन्न से। करे साला हाकिम-हुकुम हेही खटहरा से चली कि अपना जीप में जाई रे। कवना हाकिम है, तनी हमहूं देखी त।" कहते हुए उचककर वह अगली सीट पर देवेन की तरफ क्रोध से घूरने लगा।

"एगो पेंट पहिरला से हाकिम बन जाता रे, तहरा बहिनी के···। हमरा पेंटवा नइखीं देखात। हमरा से बढ़ के हाकिम भइल बा। साला लोग जिनकी भर चटकल मिल में···घसीटता औ कलकाता से जब मुलुक आता तो पेंट डटा के हाकिम बन जाता। इनकी छोकरी के···।"

देवेन पानी-पानी हो गया। उसने पत्नी की ओर देखा। पत्नी ने शर्म से नजरें झुका लीं। दोनों बच्चे उसका मुंह ताकने लगे।

"हेजी बहिर-बाण है का जी। सुनाई नइखे देत त अबहीयें कनवा खुल जाई। सीट खाली करता है कि नाहीं।" देवेन को खिड़की के रास्ते से डंडे से कोंचते हुए सिपाही ने कहा। अपमान से देवेन का चेहरा लाल हो गया। पर उसने सीट खाली कर देने में ही खैरियत समझी। बीवी-बच्चों सहित उठ कर वह खड़ा हो गया। बस में खड़े लोग हस दिये। कुछ मनचले जले पर नमक छिड़कने के लिए बोली-ठोली बोलने लगे। किसी प्रकार लटकते-झूलते, धक्का खाते वह गोला पर पहुंच गया। सड़क का साथ यहीं तक था। आगे देहात का बीहड़ शुरू हो जाता था। बस रुकते ही लोग खमखमा-कर उतरने लगे।

सवारियों के उतर जाने पर खलासी ने एक बूढ़े आदमी को बुलाकर उसका सूटकेस पकड़ा दिया और गांव तक पहुंचाने की हिदायत दे दी। खलासी की मेहरबानी के प्रति वह मन-ही-मन कृतज्ञ हो उठा। पूरी बस खाली हो चुकी थी। लेकिन एक बूढ़ा आदमी परेशान-सा बार-बार बस के अन्दर-बाहर, ऊपर-नीचे चढ़-उतर रहा था। कभी वह अपना माथा पीट

रहा था तो कभी छाती धुन रहा था। एकाएक बूढ़ा भोंकार मार कर रोने लगा और "हाय हम लुट गईनी, हाय हम लुट गईनी" चिल्लाते हुए ड्राइवर के पास जाकर बिलखने-बिलबिलाने लगा। बीच-बीच में उछककर वह कूदने लगता जैसे उसके पैर अंगारों के ढेर पर पड़ गये हों। उसकी बातों से लगा, कल उसकी बेटी की शादी है। बारात के स्वागत के लिए वह दो टीन घी, तेल, मसाला, साग-सब्जी, कपड़ा-लत्ता और शादी का सारा असबाब बाजार से खरीदकर लौट रहा था। खलासी ने जबरदस्ती उसका सारा सामान बस के ऊपर रखवा दिया था। यहां उतरा तो सामान गायब था। वह बार-बार ड्राइवर को झकझोरकर अपने सामान के बारे में पूछ रहा था। एकाएक ड्राइवर उठा और उसे धकियाते हुए तेजी से जाकर बस में बैठ गया। खलासी एक अदा हाथ में लिये मस्ती से झूमता-गुनगुनाता हुआ बस की ओर बढ़ रहा था। ड्राइवर ने पों-पों भोंपू बजाते हुए बस का इंजन स्टार्ट कर दिया। इतने में बूढ़ा आदमी जिबह किये जा रहे बकरे की तरह घिघियाता हुआ पीछे से दौड़कर आया और बस के आगे पसर गया। भर्र-भर्र करते हुए ड्राइवर ने घरघराकर तेजी से बस चला दी, जो बूढ़े की धड़ से कुछ इंच की दूरी पर किर्रिच···किर्रिच करती हुई, कराहकर रुक गई। क्षण-भर के लिए देवेन का प्राण सूख गया, दिल धड़क उठा। बुड्ढा बाल-बाल बचा था।

गालियों की बौछार करता हुआ खलासी नीचे उतरा और बुड्ढे की टांगें पकड़कर धूलभरी कंकड़ीली सड़क पर ठरठर-ठरठर घसीटते हुए नीचे खाई में उछाल दिया। बस फर्राटे से आगे बढ़ गई। यह बर्बरता देखकर देवेन की रूह कांप गई। वहां मौजूद लोगों में इस घटना की कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई, जैसे उनके लिए यह आम बात हो। देवेन देखकर हैरान था।

बस की भीड़ और रास्ते के धचकों से उसका पुर्जा-पुर्जा हिल गया था। प्यास भी लगी थी। सोचा, कहीं बैठकर चाय-पानी कर ले, तो चले आगे। गोला से अभी चार कोस आगे जाना था। रास्ता भी खेतों-मेड़ों, नालों-बाहों और खोह-खाइयों के बीच में था। गोला पर अब गल्ले का कारबार तो रह नहीं गया था, लेकिन गोले का खण्डहर, पोखरा, भीट और उस पर बड़ा बगीचा अभी भी सलामत थे। खण्डहर के साथ पुआल की झोपड़ियों में

चाय-पान आदि की छोटी-छोटी दुकानें खुल गई थी। एक बड़ी झोपड़ी के सामने, भट्ठी के ऊपर, रखी चाय की केतली और चुक्कड़ों का ढेर देखकर, उसने जाकर दूकान के सामने पड़े बेंच पर बैठते हुए पांच चाय का आदेश दिया। दूकान के अन्दर खड़े आदमी को देखकर, क्षण भर के लिए, वह सहम गया। यह तो दूकानदार नहीं हो सकता। उसके सीने तक सफेद दाढ़ी लटक रही थी। गले में तुलसी, चदन और रुद्राक्ष के बड़े-बड़े कण्ठों वाली तीन मालाएं पड़ी थी। माथे पर चदन और त्रिपुण्ड लगा था। दूकानदार ने मुस्कराकर कहा, "इहवा पर खारी चाय मिलत हौ, हाकिम। तबीयत होय त अन्दर आवल जाय।"

उसने देखा, झोपड़ी के बीच मे ताड़पतरी की एक टाटी खड़ी थी। लोगबाग उसके पीछे पीकर, मुह पोंछते हुए बाहर निकल रहे थे। वह शर्म से पानी-पानी हो गया। तब तक वही पुलिस वाला हवा मे डण्डा भांजते हुए, वहा आ पहुंचा। उसकी मेमिन और चूजे भी पीछे-पीछे थे। उसको देखते ही वह झटके से उठ गया। सिपाही ने औरत-बच्चों को बेंच पर बैठा दिया और खुद टाटी के पीछे चला गया। बिना चाय-पानी किये ही देवेन आगे चल पड़ा।

"कवना गाव चले के होई हाकिम।" बुड्ढे की आवाज से देवेन का ध्यान उसकी ओर गया। देवेन उसको देखता ही रह गया। उम्र कोई सत्तर के आसपास रही होगी। कमर और कधे सिकुड़कर झुक गये थे। सीने की ठठरिया बाहर झाक रही थीं। पेट पीठ से सटकर कोही हो गया था। हाथ-पैरो की चमड़ी सूखकर झूल गई थी। चेहरे पर मकड़ी के जाले-सी असंख्य झुर्रियां पड़ी थी। मुचमुचाती आंखें कोटरों मे धस गई थीं। नाक हुक्के की निगाली-सी बाहर निकल आई थी। कान सुपेली जैसे खड़े थे। मुंह पोपला था और दाढ़ी झूल गई थी। चेहरे पर ऊसर के घास की तरह सफेद खूटियां उगी थीं। पैरों में फटी बेवाय के कारण वह पजों पर उचक-उचककर चल रहा था। सिर पर सूटकेस लिये उसकी गर्दन डुगुर-डुगुर हिल रही थी। देवेन को लगा, यह कंकाल का ढांचा तो चल-फिर भी नहीं सकता, सूटकेस कैसे पहुंचायेगा। कहीं बीच रास्ते में पसर गया तो वह कहीं का नहीं होगा।

"कभी चलना है बाबा। यहां से शायद चार कोस पड़ता है। तुम चल पाओगे इतनी दूर।"

"मा-आ-आ-लिक। रउआ का बूझीला। अबही एक सांसी दस कोस··· हाकिम दस कोस···एहिमें दागी नाय, बूझनी नूं। अरे एक जमाना में बीस-बीस कोस डोली लेहले हमनीके हुमचत चल जाई जा, चाहे कइसनो डापुट दुलहा होय। हुई···चार कोस···देखी···ताकी तनी हमरा ओर···हइसे दुलकिया पहुंच जाइब।" डोली ढोने वालों की तरह केहुनी आगे-पीछे हिलाते हुए वह खुटुर-खुटुर दौड़ने लगा। देवेन मन-ही-मन हंस पड़ा।

गोला से बाहर भीटे से पार हुआ, तो देवेन ने देखा, कतार में खड़ी मिट्टी की पतली दीवारें झुलसी पड़ी थीं, जैसे सिरकटी, अधंजली लाशें खड़ी हों। दो पंक्तियों में आमने-सामने बनी पूरी बस्ती जलकर खाक हो गई लगती थी। मिट्टी के टूटे-फूटे चूल्हे, आले-ताखे, हाड़ियां-चुक्कड़, सील-बट्टे, जानवरों को बांधने के खूंटे, नाद-चरन अभी भी मौजूद थे।

"यह कैसे हुआ बाबा? लगता है, पूरी बस्ती जलकर राख हो गई है।"

"इहे नू हमनी के घर रहे हाकिम, मुसहर टोली। गांव के बबुआन लोग फूंक देनी, सरकार।"

"वो क्यों?" देवेन स्तब्ध रह गया।

"खेत में काम करे खातिर। कमवा त हमनी के करते रहली। बाकी दिन भर खटला पर, उहे सेर भर सांवा कि धान, उहो कटकर-पइआ, गोबर-माटी वाला। रउये बताई, सरकार, येह महंगाई के जमाना में सेर-भर पर खटला पेट भरी। छौड़ा लोग बोलली कि, मालिक, मजूरी बढ़ा दी। बस एतना बात पर मालिक लोग बिगड़ गईली। छौड़ा लोग भी ठन गइनी। बस काम बन, खेती बन। एक रोज रात में बाबूआन लोग के गुंडा माटी क तेल चोभ के फूंक देनी हमनी क झोपड़ी। अपने बगइचा में पेड़न के पीछे छिप के बइठ गइली। जब भगदड़ भइल, मालिक, तब जिन पूछी, धांय-धांय गोली से भुन देनी कुल जवनका छोडन के। आउर जिअतें घिरीय (घसीटकर) के वोही आग में फेंक देनी। जल गइलें ललवा लोग, सुअरी के बेहरू अस, छनछनाय के। जे बाचल से जान ले के भाग गइल।" कहते-कहते बुड्ढा सिसकने लगा। देवेन का दिल थरथरा गया। कुछ क्षण तक

उसकी आवाज नही निकली।

"कुछ हुआ बाबा, पकड़-धकड़, जेल-फासी।"

"किच्छ ना मालिक किच्छ ना। किछ दिन हल्ला-गुल्ला भइल, पुलिस गारद गिरल, नेता-फेता, मंतरी-फंतरी आइल-गइल, फिर सब ठंडा। होई कइसे, हाकिम, केहू गवाह मिली तब नू। के जाई अलले जान बधवावे।"

देवेन ने देखा बुड्ढे के पीछे-पीछे एक चार-पांच साल की नंगधड़ंग लड़की तुलबुल-तुलबुल दौड़ती चल रही है। उसकी कमर में चीथड़े की एक बिहटी है, बाकी पूरा शरीर नंगा। आंखों से कीचर और नाक से नकटी-पोंटा बह रहा है। धूल और गर्द से भरे सिर के बाल घास के जुट्टे की तरह आपस में लटिया गये हैं। उसने हैरत से पूछा, "बाबा, वह नन्हीं बच्ची कौन है? तुमको जानती है क्या?"

"अपनी पोती हवे न मालिक। इहे त निशानी बचल गिया, हमरा खानदान क।"

"सो कैसे?"

"कहनी न सरकार। वोही अगिया मे एकरा बाप मारल गइल। खूब गबरू जवान पट्ठा रहल मालिक रउये नाई। गोली से भून देनी गुण्डा सब मालिक…" बुड्ढा फिर सिसकने लगा। "बेटा गइल से गइबे कइल, इजतियो न लूट लेहले सब, राछछ। एकरा माई के उठा ले गइलें चंडाल सब। आज तक पता ना चालल, सरकार, कहां बिया। केहू कहे ला मुखिया के हवेली में बन्द बिया त केहू कहे ला पटना के बजारी में बिक गइल। इहो मर-खप गइल रहत, मालिक, त सन्तोष हो गइल रहत। अब जहां-जहा जांइला, कुकुरन के पिलवन नाईं डुगुर-डुगुर पीछे-पीछे लगल राहे ले। येही से त लाचार बानी हजूर, नाहीं कत्तों नारा-पोखरा मे मर-खप जातीं। अब जिनगी बिरथा बा मालिक।"

वह बिलख रहा था।

"हमरा दू गो बेटा अउर रहलें मालिक, उहो लाल अइसीयें मारल गइलें।"

"कब? कैसे?"

"दस बरिस भयल होई हाकिम, एगो बिनवा (विनोबा) जी आइल

रहनी मत-महतमा, गरीवन के जमीन दिआवे वास्ते । उहे पकिया वाला गाव देखनानी मालिक, कोनिया हवे । उहा के बाबू साहब लोग अपना ऊसर-ताल दान कय देहनी । हमरा भी वोही में दस कट्ठा दान. मिलल, हाकिम । हमनी के मुसहर क जात, एक पथलफोर । ऊसर काटपीट, ताल पाट-पूट के हमनी के एक लवर क जमीन वना दोनी । जब छाती भर धान लागल त बाबू लोगन के आख मे काटा गड़े लागल । फसल काटे वदे चढ़ा-चढी हो गइल । हमनियो के लौडा सब ठन गइलें । बहरियो जगह से मुसहर जुटले । बाकी बनूक, रफफल के समने गोजी-डण्डा का करी, मालिक । हमनी के गारह जवान उलट गइले । वोही मा हमरा दूनो छौड़ा मारल गइले । बाबू लोग लहास खीच के गांव के गोइड़े ले गईले और उनहन के हाथ मे पाइप बनूक आउर फिटफिटी (कट्टा) थमाय के केस बनवले कि सब नक्सली गाव लूटन वास्ते आयल रहें । थाना-पुलुस, दरोगा-मुंसी सब दउर परलें । मुसहर के छौडन के पकर-धकर होने लागल । तब्बै से अंडोलन जोर पकड़लस, मालिक । फिर त अइसन अंडोलन चलल कि बाबू लोगन क कुल काम बन, गेती-वारी बन, डोली-डंडा बन, मिटिन, जलसा-जुलूम, भाखन तब्बै से चलत हौ मालिक । देखीं कब नियाव मिलेला ।"

"एक बात हौ मालिक," थोड़ा रुककर वह आगे बोला, "बाबू लोग अब खाली अजोरवे क शेर बानी । सुरुज डुबले, झाड़ा-पेसाव बन । अंडोलन मे नीक-नीक पर्दानिहार छौडा बाटन मालिक । बहुत गियान क बात करें न मब । उनहन क कहना बा कि ठाकुर-बाभन हेल मे हर जोते आउर उनहनी क मेहरारू मब रोपनी-सोहनी, लवन-बिनियां करें तब त जमीन उनकर, नाहीं त जय हमरा अडा-बच्चा काम करिह त जमीन हमीन क । कवनो वेजाय बात बा मालिक, रउये बोली । अंडोलन खूब जोर पकड़ले बानी । लगत वा कि कवहीं न कवहीं इ अनियाव मेटाय के रही ।" कहते-कहते उसकी टागे फरफर-फरफर उठने लगी थी और आंखें चमकने लगी थी ।

"सुनते है, बाबा, यहा सेनाए बहुत बन गई है । क्या करोगे तुम लोग उनके सामने ।"

"एगो बात बोली मालिक, रिसियाइब ना न ।"

"हा-हा, बोलो-बोलो ।"

"हमरा के बुधना बोली मालिक, बुधना। रउआ बाबा-बाबा करतानी त बड़ा अनकुम करता। रउआ बड बानी न।"

"नहीं, नहीं बाबा, उम्र मे तुम मेरे बाबा के बराबर तो हो ही।"

"हा त कवन बाति पूछली मालिक···हां···हां फउद-गारद वाली। हे मालिक, जब गरीब लोग मजूरी बढावे बदे अंदोलन करे लगली तब जमीदारन के लागल कि उनकर खेतँ-बधार कबजियाय लीहें सब। से छत्तिसो जात अपने जात-भाई क फउद खडी करे लागल। बाकी जानतानी मालिक, उ फउद उनही के जान क जवाल बन गइल बिया, बुझनी नू। उनही के मारत-खात बिया। पूछी कइसे ? इ जवन पलटन बाय नू इनकर खर्चा-पानी, तर-तनखा, हरबा-हथियार, गोला-बारूद सब चन्नें से आवे के बा, मालिक। जहा पलटन क गारद गिरल बिया, हुआ खाना-पीना, मुरगा-मछली, बोतल कुल न बाही। उप्पर मे रतिया मा उहो चाही, लखतानी न। आपन बेटी-बहिन दी, नाही तोहई के फउद मारे-खा-हे लागी।" बोलते-बोलते वह देवेन के पास सट गया और कान के पास धीरे-धीरे फुसफुसाकर कहने लगा, "अबही दुइये दिन क बात हवे। वोही बहेरी गउआ मे लोरिक फउद आइल रहे। खइला-पियला के बाद मुराई लोग एहर-वोहर करे लगली। बस कुल मरदन के फउद क कमंटर (कमांडर) पेड़ मे बन्हवाय देहलस। रात भर घर के मरद बहरे त फउद अन्दर। त ये सरकार, अइसन पलटन फउद से कवन फयदा। धनो दी, धरमो दी। अइसन मउग हमनी क का करीहें स मालिक।"

देवेन उसकी बातो मे ऐसा खोया कि रास्ता मालूम ही नही हुआ। गांव समीप आ गया। बीबी-बच्चे कुछ पीछे रह गए थे। वह रुककर उनके आने का इन्तजार करने लगा।

घर पहुंचने पर वह मर्दाना दालान मे रुक गया। पत्नी, बच्चों के साथ, बखरी मे चली गई। सुनते ही सासजी ने आदमी भेजकर उसे भी अन्दर बुलवा लिया और बीच आंगन मे पलंग डालकर तोसक-तकिया लगा दी। बड़ी थाल मे खुद पानी ले आई और जूता-मोजा खोलकर मल-मलकर उसके पैर धोने लगी। पैर धोते समय वह बोले जा रही थी, "हाय-हाय

फूल की नाई हमरे दमाद जी बनाइन झुलस गइलें लू में'''च-च पैरवा से आग निकलतिया। अरे छालो पड़ गइल बिया'''हाय दइया कइसे चलत रहली एतना घाम में बबुआ जी। भला चीठी-पतरी भेज देले रहीत रवा, तारँ कँ देले रहीत, मालिक बयलगाड़ी भेज देहले रहती। मुह कइसन झउंसाय गइल बिया''' च-च अरे तनी तेल लिआवा स रे, कपार पर सोझे घाम लागल बिया, पिरात होई'''अरे अंवरा क ली आवरे मुनिया'''हमरा मुह का ताकतानी।" तेल की शीशी आते ही, सास जी पसर भर तेल जबर्दस्ती सिर पर रखकर चपर-चपर दबाने लगी। सास जी का नेह-छोह देखकर उसका जी भर आया, आंखें छलछला गईं। बुधना पनारे की बगल में दीवार के साथ उकड़ूं बैठा उसकी तरफ टुकुर-टुकुर ताक रहा था। नन्ही बच्ची उसके घुटने से सिर टेककर लुढ़क गई थी। तब तक साली मलाईदार दूध का भरा गिलास ले आई। सास जी ने बेटी के हाथ से गिलास ले ली और उसके मुंह मे लगाकर पीने के लिए मनुहार करने लगी। ना-नुकुर करने पर जबर्दस्ती मुंह मे गिलास ठेल दी। साली ने बुधना और उसकी बच्ची को एक-एक रोरी गुड़ देकर ऊपर से पानी पिला दिया। सलहज भोजन की तैयारी मे लग गई। तुरत-फुरत में पूडी, भुजिया, अचार, दही-चीनी से भरी थाली उसके सामने आ गई। पत्नी और बच्चों के लिए एक कमरे में परोसा लग गया। सास जी ने बुधना को बाहर निकाल दिया। कहीं इस बंगले की नजर लग गई तो दमाद जी का खाना जहर हो जायेगा।

देवेन को बुधना का बाहर निकालना अच्छा नहीं लगा। वह चाहता था कि उसी आंगन में उसे भी खिलाया जाता। बाहर जाते समय बुधना और नन्ही बच्ची की सूनी आंखों मे छटपटाती भूख को उसने भांप लिया था, पर संकोच के मारे कुछ कह नहीं पाया। वह खाना खतम भी नहीं कर पाया था कि बुधना आंगन के दरवाजे पर खड़ा होकर बोला—

"अच्छा मालिक, अब छुटी दी हमनीके, चलतानी।"

"क्यों? तुमने खाना खा लिया क्या?"

उत्तर में उसका पोपला मुंह खुला रह गया और खोखली आंखों में आंसू छलक आये।

"मजूरी मिल गईल बिया मालिक, अब चलतानी।" आंखों के कोर

पोंछते हुए उसने कहा।

"क्या मिला, देखें?"

चीथड़े गमछे के खूट में बंधी पोटली दिखाते हुए उसने कहा, "इ का दिया मालिक। धान दीन्ही ह मलकिनी। कूटि-खानि के आज सझा के मुह क अहार लागि जाई मालिक, रामराम।" बुड्ढा जाने लगा।

देवेन ने देखा, करीब आधा सेर धान रहा होगा। ससुराल वालों की जलालत पर वह सुलग उठा। सामने का खाना माहुर हो गया। पलग से उठकर दरवाजे की तरफ लपकते हुए उसने कहा, "रुको बाबा, रुको, खाना खाकर जाओ। मजदूरी भी और लेते जाओ।" बुड्ढे के पैर जहा के तहा ठिठक गये। उसने मुड़कर देवेन की तरफ देखा और फिर नन्ही बुचिया के कारण विवश होकर भारी कदमो से लौटकर बाहरी चौखट के पास जमीन पर बैठ गया। खुद की भूख तो वह दबा जाता पर नन्ही पोती भूख से बिलबिला रही थी और रोटी के लिए बार-बार उसे नोचते हुए पैर पटक-पटक कर ठुनक रही थी।

'दीपू···ऊ···ऊ···दीपू, अरे भई, इस बीचारे बूढे बाबा को कुछ खाना-वाना दिलवाओ। बेचारा भूखा होगा। उसके साथ वह बच्ची भी तो है, अपनी पिंकी जैसी।" उसने पत्नी को हांक लगाई।

"रउआ का बोललानी पाहुन जी, मजूर-धतूर क बेटा-बेटी हमनी क बेटा-बेटी बराबर होई जी? आ राउर, हे मुसहर-चमार के बाबा बोलतानी जी, ललमरूआ के। हमनी के देश में पनही सिर पर ना ढोआत, बुझतानी न।" सास जी की आवाज ऊंची हो गई थी। फिर स्वयं ही अस्फुट स्वर में भुनभुनाने लगीं, "सुनत रहनी ह कि आजकल पढ़निहार कुलबोरन होलें सब, तवन कपरे पर गइल।" फिर ऊंची आवाज में उन्होंने कहा, "हरे दिपवा, कुल थरियन क जूठन बटोर के दे दे कंगला के।"

"कैसी बात करती है, मां जी। सत्तर साल के बूढ़े बाबा को जूठन खिलायेंगी?" देवेन ने आश्चर्यमिश्रित क्रोध से कहा।

"ना त मुसहर-मजूर के परोसा न दियाता जी, येह मुलुक मे। इनहनी के एक जून रोटी मिलले पर त नाकिन दम कइले बानी सब। पेट भर मिलला पर त रहे दीहे हमनी के। फूंक न दीहें दिन दुपहर सबके।"

देवेन मान की बात पर तिलमिलाकर रह गया। कैसे जाहिल लोग हैं कि इनसान को जानवर से भी बदतर समझते हैं। इस बीच सबकी थालियों का जूठन बटोरकर एक फूटही हाडी में साली ने खाना दे दिया। छोटी बच्ची मरभुक की तरह हाडी पर टूट पड़ी और बिना मुंह डुलाये ही पूड़ी के टुकड़े निगलने लगी। भूख तो बुड्ढे को भी खूब लगी थी, पर हाडी की तरफ उसने ताका तक नहीं। जिन्दगी भर तो जूठन चाटता रहा। अब चौथापन क्यों बिगाड़े।

भोजन हो गया बाबा। थोड़ी देर बाद देवेन ने अन्दर से आवाज दी।

"हा मालिक।" उसने झुठला दिया। सोचा सही बता देने पर शायद मालिक दुखी हों।

"अच्छा तो अंदर आना जरा।" अंदर बुलाकर उसने जबर्दस्ती बीस की नोट उसे पकड़ा दी। दो रुपये उसकी पोती को भी दिये।

"ई का करतानी बबुआ। एतना रुपया। येही से न इनहनी क मन बढ़ल जाना जाँ, कपार पर चढ़ के'''। हे बुड्ढ़ खबरदार, जे नोट थमिहा! तुम्हरी मजूरी त दे देनी न जी। अब होया खडा बकर-बकर मुह का ताकता, भागता की नाय होया से। मालिक लोग जनीह त खाल खीच लीह।"

"माँ जी, क्यों बूढ़े बाबा को फटकार रही हैं। दिन भर खराब हुआ बेचारे का, बीस रुपये कोई ज्यादा थोड़े ही है।" देवेन कुढ़ गया था।

"अरे बबुआ तहरा का मालूम। बीस रुपइआ मे त हमनी के महीना भर खटाइला मजूरन के। रउआ एक ठे बक्सी ढोवले क हेतना देतानी। हे बुड्ढा, लोट दमाद जी के लवटाता की नाहीं। बोलाईं मालिक के। मारत-मारत खाल खीच लीहें। बताय देतानी।"

बुड्ढा सकते मे पड़ा रहा। न जाते बनता था न रुकते ही। तब तक देवेन का छोटा साला आंगन मे आ गया। सारी बात मालूम होने पर वह आगबबूला हो गया और नोट लौटाने के लिए बुड्ढे को डाटने लगा। देवेन दुखी हो गया और चुप मारकर बैठ गया। दमाद की चुप्पी से सास जी थोड़ी सहम गई। साला भी चुप हो गया। कुछ पल बाद बुड्ढा उसकी ओर बढ़ा और नोट उसके कदमो मे रखकर बाहर जाने लगा। देवेन ने लपककर नोट फिर उसे पकड़ा दी और दरवाजे तक छोड़ आया। सास और साला

एक-दूसरे का मुह ताकते रह गये।

थोडी देर बाद उसने पत्नी से कुर्ता-पायजामा निकालने के लिए कहा, ताकि कपड़े बदलकर आराम से लेट सके। पत्नी सूटकेस का ताला खोलने लगी, लेकिन ताला टूटा हुआ था। हाथ लगाते ही सूटकेस खुल गया। अंदर का सब माल गायब था। बोरे के गूदड़ों मे ईंट के कुछ टुकडे लपेटकर सूटकेस में रखे हुए थे। कपड़ों की तो कोई बात नहीं थी, लेकिन गहनों के लिए बीवी माथा पटकने लगी और छाती पीट-पीटकर रोने-चिल्लाने लगी। वह स्तब्ध रह गया। खलासी ने जब बुधना को बुलाकर सूटकेस सौंपे उसे पकड़ा दिया, उस समय उसे कुछ खटका जरूर हुआ था। बुड्ढे का सामान गायब होने पर भी उसके मन मे शका उपजी थी। वह मन ही मन पछताने लगा कि उसी समय सूटकेस क्यो नही जाच लिया। खलासी ने उसे भी चूना लगा दिया। घर के सब लोग जुट गये। पत्नी के साथ सास और सालियां भी हायतोबा मचाने लगीं, जैसे कोई गमी पड गई हो। सास जी कह रही थी, "उस कलमुहे बुड्ढे की ही कारस्तानी है। आख बचाकर निकाल लिया होगा। ये सब नक्सली हैं। बड़े लोगों को उजाडने पर तुल गये हैं। मुसहर-चमार तो जनम के चोट्टे होते हैं।" थोडी देर रो-पीटकर पत्नी शान्त हो गई, लेकिन औरतों का कचर-पचर बन्द नहीं हुआ। इतने में छोटा साला बाहर से आया और मुस्कराते हुए बीस रुपये की वही नोट उसकी ओर फेंक दिया। देवेन के मुंह पर जैसे तमाचा लगा और वह तिलमिला उठा। "आपने यह अच्छा नहीं किया।" वह अंदर से सुलगने लगा था।

"पाहुन, उस साले को बीस रुपैया देकर इलाके का रेट बिगाड़ना है जी, एकरा बहिन के···। अरे इ शहर ना न है जी, दिहात है, दिहात। हेतना देंगे तो खेत-बधार न बिक जायेगा जी। अरे इनहनी के दू मुठी फाकी पर हमनीके दिन भर खटाइला जी।"

"कुछ भी हो, आपने वापस क्यों मांगा?"

"कौन ससाला मांगा जी। अरे एक्कै फैंट में त धूल चाटने लगा। उप्पर से दो लात लगते ही नोट पकडा दी अपने आप।"

"एक बूढ़े पर हाथ उठाया आपने।"

"पाहुन, रउआ ना बूझब इनहनी क भेद। सब साले नक्सली हैं। दिन

में मेउआ बने रहते हैं, और रात में बाघ बनकर दहाड़ते हैं। गोला-बारूद ले के लोगन पर हमला करते हैं, गाव का गांव लूट लेते हैं। इन हरामियों को तो ओतना ही देना चाहिए कि एक शाम रोटी मिल जाय बस। कुछ बचे नही इनके घर में, दूसरे दिन के लिए, ताकि अगले दिन सुबह फिर हमारे दरवाजे पर हाजिर रहें। घर में खाने को रहेगा तो ये नीच काम पर आयेंगे जी ? ये साले सब लतियाये ही सोझ रहते हैं। पेट भरने पर बात सुनेंगे।"

देवेन तिलमिलाकर रह गया, लेकिन उसके अंदर एक उद्वेग उमड़ रहा था, मिजाज खौलने लगा था। भीतर से यही हो रहा था कि वह जोरों से चीख पड़े। वह बता दे कि मजदूरी कोई भीख नहीं, बुधना का हक है। दो जून की रोटी जुटाना कोई षड्यंत्र नही, उसका अधिकार है। वही पेट, वही मुह उसके भी पास है। उसे भी वैसी ही भूख लगती है। उसके बच्चे कोई ईंट-पाथर के नही, सबके बच्चों की ही तरह हाड़-मांस के बने हैं। उसे भी अपने बच्चों का उतना ही दर्द है, अपनी टाटी-मड़ई और हांडी-परई से उतना ही मोह है। उसका एक-एक बूंद खून, जो तुम चूस रहे हो, एक दिन रक्तबीज की तरह असंख्य बुधना के रूप मे तुम्हारे सिर चढ़कर चिल्लायेगा, छाती पर दलदलायेगा। अब बहुत हो चुका। अब से भी चेत जाओ और आदमी को आदमी समझकर पेश आओ।

दिन की एक-एक घटना किसी हादसे की तरह उसकी आंखो के सामने तिरने लगी। उसकी समझ मे नही आ रहा था, क्या हो गया है, पूरे इलाके को ? आजादी के चालीस वर्षों बाद भी चवन्नी पर मजदूरी कराना और मांगने पर मुह तोड़ देना, ना करने पर घर फूक देना, बहू-बेटियों की अस्मतें लूट लेना, आवाज उठाने पर खाल खींच लेना, लबे सड़क पर दिन-दहाड़े राहगीरो को लूट लेना, जबर्दस्ती उनकी गठरी-मोटरी उतरवा लेना, हरबा-हथियारों की खेती करना, गोला-बारूदो की फसले उगाना असलहों का भंडार जमा करना, जातीय सेनाओ के दस्ते खड़े करना, यह सब कैसी आजादी है। कैसी आजादी है यह, जहां हर तरफ संगीनें तनी हुई हैं, लोगों के गर्दनों पर लपलपाती तलवारें लटक रही हैं, आदमी आदमी के लहू का प्यासा हो गया है। गरीब पिस रहा है, असहाय मिट रहा है, दरिंदे उनकी लाशों

पर जश्न मना रहे हैं। चारों तरफ अन्याय-अत्याचार का जंगल उग आया है। पूरे इलाके में आग लगी हुई है। एक ऐसी आग, जो न धुआं छोड़ती है, न लपटें उगलती है, बस अंदर-ही-अंदर सबको भस्म करती जा रही है। दिशाएं सुलग रही हैं। वायुमंडल में जहर घुल गया है। उसे लगा, पूरा इलाका बारूद की ढेर पर बैठा है, जो किसी भी क्षण फट सकता है। उसका दम घुटने लगा, माथा फटने लगा, सांस लेने में तकलीफ महसूस होने लगी, जैसे कलेजे में शूलें चुभ रही हों। वहां एक पल भी रुकना उसके लिए मुश्किल हो गया। ससुराल यातना शिविर लगने लगी, सास-ससुर, साले-सालियां जल्लाद दीखने लगे। उसका दिल बेचैन हो उठा, मन छटपटाने लगा। वह स्वयं को कोसने लगा कि बुधना के साथ ही क्यों नहीं लौट गया। वह फनफनाकर उठा, पत्नी-बच्चों को साथ लिया और जल्लादों के लाख मना करने के बावजूद, उल्टे पांव वापस लौट पड़ा।

कुआं

हथौड़े की हर चोट के साथ, लगता था, उसका कलेजा हुलककर मुंह को आ जायेगा, फिर भी ठांयऽऽ···ठांयऽऽ···ठांयऽऽ···वह हथौड़ा बरसाये जा रहा था, किसी उन्मादी की तरह, पर चट्टान दरकने का नाम नहीं ले रही थी। उसको लगता था हथौड़ा चट्टान पर नहीं उसके सिर पर पड़ रहा है और खोपड़ी चटखकर चूर-चूर हो गई है। खून में सना क्षत-विक्षत भेजा बाहर छिटक आया है और वह चट्टान नहीं, अपना भेजा कूट रहा है। कुछ हाथ और चलाने के बाद हथौड़े का बेंट मुट्ठी की पकड़ से सरकने लगा, बाहें उठने से जवाब देने लगीं और कमर बैठने लगी। एकाएक हथौड़ा उसके हाथ से सरककर दूर जा गिरा। वह पस्त हो चुका था। क्षण-भर तक दूर पड़े हथौड़े को वह घूरता रहा फिर झुकी कमर पकड़कर सीधी करने लगा। उस समय उसकी आंखों के सामने चकमक-चकमक चिनगारियां उड़ रही थीं और काले धब्बों के गुबार उठ रहे थे। उसकी सांसें भाथी की तरह हुकर-हुकर तेज चल रही थीं और बदन दोहरा हुआ जा रहा था। दीवार के साथ पीठ टेककर वह धम से बैठ गया और आंखें भींच लीं।

थोड़ी देर दम लेने के बाद, जब धौंकनी कम हुई और बदन थोड़ा ठंडा हुआ, घुटने की चोट हरी होने लगी और उसमें टीसें उठने लगीं। सुबह-सुबह पहले हथौड़े के साथ ही चट्टान का एक छोटा टुकड़ा चटखकर टूटा था और उड़कर उसके घुटने के बीचोंबीच चाकी की हड्डी से जा टकराया था। उसका बदन झनझना उठा था जैसे गोली लग गई हो। लगा, चाकी की हड्डी छटककर दूर जा गिरी है। रगें बिनबिना उठी थीं और बदन पसीने से तर-बतर हो गया था, जैसे शरीर का समूचा लहू निचुड़कर पानी बन गया हो।

चोट की जगह सूज आई थी। उसके ऊपर का चमड़ा फट गया था और खून चुहचुहा आया था। बदन का चूता पसीना घाव पर पड़ते ही दर्द लहरने लगता था। उसकी हथेली के घट्ठे भी छिल गये थे, जो मुट्ठी बांधने में दुख रहे थे। हाथो की उगलियो के नाखूनो के ऊपर की चमड़ी चोथड़ा हो गई थी। उसमे रेशे उग आये थे, जो काटो की तरह चुभ रहे थे। मिट्टी-धूल से सने बदन मे जगह-जगह पसीना काट रहा था। खुजलाते समय नाखूनों के ऊपर की फटी चमड़ी मे पसीना लगने पर मिर्च लग जाती थी और वह सिसिया उठता था।

कुछ समय दम लेने के बाद, उठते समय, घुटना चिल्हक उठा। कमर भी सीधी नही हो रही थी। लगता था, रीढ़ की हड्डियो के बीच लोहे का सरिया डालकर किसी ने तान दिया है। हिम्मत करके धीरे-धीरे वह उठा और कमर पर हाथ रखकर आगे-पीछे झुकने लगा। झुकते समय कमर, रीढ़ और पसलियो मे मीठा-मीठा दर्द हो रहा था, जो अच्छा लग रहा था और उसे राहत महसूस हो रही थी। हथेली के छिल गये घट्ठों को उसने घूरकर देखा, बार-बार मुट्ठिया बन्द की, खोली, चाकी के घाव को आहिस्ते-आहिस्ते उगलियो से सहलाया, घुटने को कई बार मोड़कर हवा में झटकारा और हथौड़ा उठाकर फिर चट्टान पर पिल पड़ा ठांय ऽऽ'''ठाय ऽऽ''' ठायऽऽ''।

उसको पूरा यकीन था, चट्टान के ठीक नीचे अमृत-कुड लहरा रहा है। चट्टान टूटते ही उसका मुह खुल जायेगा और पानी का फव्वारा फूट पड़ेगा। देखते-देखते कुआ ठडे-ठडे मीठे जल से भर जायेगा। फिर वह वर्षों से जलते अपने खेतो की प्यास बुझा पायेगा और एक बार फिर से उसके खेत हरी-भरी फसलो से लहलहा उठेंगे। अगल-बगल के खेतो को भी पानी मिलेगा। किसान एहसान मानें न मानें, धरती मैया तो ठडे दिल से आशीष देगी ही। इस अकाल मे चिड़िया-चुरमुन, राही-बटोही को भी पानी मिलेगा। कितना पुण्य होगा उसको, इस अकाल मे, कुआ खोदकर। लोग कहते हैं, भगत की 'बानी' कभी खाली नही जाती। बहुत पहुचे हुए और आगमजानी हैं, भगत जी। ऊपर की माटी देखकर धरती के गर्भ की बात बाच लेते हैं। भगत जी ने पहले ही बता दिया था कि पच्चीस हाथ के बाद, तीसरी चट्टान के नीचे

जल-धारा उमड़ रही है। चट्टान टूटते ही झरना फूट पड़ेगा। सहसा उसको लगा, ठडी-ठडी फुहारों से उसका तपता बदन शीतल हो गया है। वह हुमककर और जोरो से हथौड़े चलाने लगा—ठाय ऽ ऽ''' ठांय ऽ ऽ''' ठायऽ ऽ'''।

चट्टान ठीक बीच से दरककर दो दाम हो गई। खुशी से उसकी आंखें चमक उठीं। उसने हथौड़ा फेंककर रम्भा उठा लिया और दरार मे पेश कर हुमचने लगा, ताकि फांक चौड़ी हो जाय और उसके नीचे कैद झरना ऊपर फूट पड़े। लेकिन रम्भे का पतला शिरा एक इच से अधिक दरार में नही घुस पाया। उसने रम्भा परे झटक दिया और फिर हथौड़ा उठाकर आधी चट्टान पर बरसाने लगा—ठांय ऽ ऽ''' ठाय ऽ ऽ''' ठांय ऽ ऽ'''।

कुछ हथौड़ो में ही चट्टान टुकड़े-टुकड़े हो गई। वह नीचे का पानी देखने के लिए बेताब हो रहा था। गैता उठाकर उसने टुकड़ों को एक तरफ समेट दिया। नीचे वही भूरी धरती झाक रही थी। न कही अमृत कुड, न जलधार, न पानी की एक बूद। रेगिस्तान में भटकते प्यासे मृग की तरह वह तड़प उठा। उसको बड़ा सदमा लगा और गश आ गया। वह पत्थर के टुकड़ो के बीच सिर पकड़कर बैठ गया।

"अरे क्या हुआ ऽ ऽ? कुएं में ही बैठे रहोगे या ऊपर भी आओगे ऽ ऽ। दोपहर होने को आई। लपटें उठने लगी हैं। प्यास से कलेजा सूख रहा है सो अलग और तुम अभी तक कुएं में बैठे करम कूट रहे हो।" ऊपर से कुएं में मुह डालकर उसकी घरवाली ने हांक लगाई।

कुएं में पत्नी की गूजती आवाज से पताली जैसे मूर्छा से जाग उठा। उसने ऊपर देखा। सूरज सिर पर लटक रहा था। लगता था, उसका रथ सीधे कुएं में उतर आयेगा। तेज किरणों से उसका बदन जल रहा था, जैसे दहकती भट्ठी मे झोंक दिया गया हो। उसने उठना चाहा, पर हाथ-पैर जवाब दे गये, शरीर बेकाबू हो गया। उसने एक बार फिर हिम्मत की और उठकर गैंते से सारे टुकड़ों को समेटकर एक किनारे लगा दिया। वह सोचकर उसे हैरत हो रही थी कि भगत जी की 'बानी' खाली कैसे गई। जैसे-जैसे उन्होंने बताया था, उसने पूजा-पाठ करने के बाद ही कुएं की साइत की थी। बराबर पांच नीबू काटे थे, पांच नारियल फोड़े थे, पांच जीवों की वन देवता

को बलि दी थी। कही कोई भूल-चूक तो हुई नही, फिर भगत की 'बानी' कटी कैसे। जब से कुएं की खुदाई शुरू हुई है, भूलकर भी उसने गूजरी को नही छुआ था। फिर कहा क्या खोट रह गया। वह हैरान था।

ऊपर निकलने के लिए उसने कुएं में लटक रहे बरहे को हिलाया।

"ठहरो ऽऽ, जुगाड बना लेने दो, तब कहूगी ऽऽ।" गूजरी ने ऊपर से आवाज दी।

उसने धुरई-बड़ेरा, आजमाकर ठीक किया, धुरई के दोनों बासों को अलग-बगल के ओटो (मिट्टी के खम्भों) में रस्सी से कसकर बांधा, गड़ारी पर बरहा चढ़ाकर घुमाया, मोट खींचने वाले दोनों आदमियों को सजग किया, जुए मे बरहे की गाठ कसी और फिर झुककर हांक लगाया, "सब ठीक है ऽऽ। खांची में बैठ जाना तो आवाज देना ऽऽ।"

पताली ने खांची में बैठकर, अपना बदन रस्सियों से खांची के साथ बाधा, खाची की रस्सी की गुल्ली बरहे के फांस में डालकर कसी और फिर बरहा हिलाकर ऊपर सकेत भेज दिया।

"अरे मुंह से तो बोलो, खाची-बांची ठीक से बांध ली न ऽऽ।" गूजरी ने फिर आवाज दी।

"खींचो भी, क्यों सिर खा रही हो।"

"जय वन देवता" की आवाज के साथ चू चरर मरर'''चू चरर मरर गड़ारी चलने लगी और वह ऊपर आ गया।

"तुम लोग घर जाओ। मैं भगत के यहां जा रहा हूं।" ऊपर आते ही उखड़ी आवाज में उसने कहा।

"अरे इस दुपहरिया में भूखे-प्यासे कहा नाहक हलकान होगे। घर चलो, दो टूक रोटी खाकर नेक आराम कर लो। बेर ढरकेगी तब चले जाना।" गमछे से उसका बदन पोछते हुए गूजरी ने कहा।

"तू मेरा भेजा मत चाट। भगत की बानी खाली कैसे गई, इसका बिना पता लगाये मैं दाना-पानी नहीं करूंगा।"

"मैं तो कहती हूं, छोड़ो इस कुआ-फुआ के चक्कर को। सीधी बात तुम्हारी समझ में क्यों नही आती, जब ऊपर पानी नही तो धरती के नीचे कहां से आ जायेगा। तुम तो नाहक भगत-सगत के चक्कर में सिर पीट-

पिटवा रहे हो। अरे सूखा अकेले हमारे लिये ही तो पड़ा नहीं है। जैसे सब रहेंगे वैसे हम भी काट लेंगे मर-खपकर। आग लगी तो तुम कुआं खोदने चले हो।"

"कहा न, मेरा दिमाग मत चाट। तू घर चल, मैं भगत से मिलकर आता हूं।" कहते हुए लंबा डग भरता हुआ वह चल दिया।

लगातार यह तीसरी साल सूखा पड़ा था। पिछले दो सालों में तो आगे-पीछे कुछ पानी पड़ भी गया था, सावा-कोदो कुछ उपज गया था। जानवरों के लिए भी जंगल मे कुछ घास-वास उग गई थी। लेकिन इस वर्ष तो पूरा असाढ़ और सावन कोहार के आवा की तरह तपते ही बीत गये। लगता ही नही कि बरसात का महीना है। बादल के एक टुकड़े के लिए आसमान तरस गया और पानी की एक बूंद के लिए धरती। वही आग उगलती सूरज की किरणें, सुलगती धरती, झुलसती हवाएं और तपता आकाश, जैसे चारों तरफ आग लगी हो और खेत-खलिहान, जंगल-बियावन, आदमी-जन, पशु-पक्षी सब उसमे धू-धू कर जल रहे हो। पताली ने सोचा खेतों पर एक कुआं खोद ले तो शायद इस आग से बच जाये। इसलिए पूरा असाढ़ आकाश का मुंह ताकने के बाद सावन चढ़ते ही उसने कुआ खोदवाना शुरू किया था। साइत-लग्न उसने भगत से पूछ लिया था और पूजा-पाठ भी कर दिया था। तीस हाथ गहरा कुआ खोदने के बाद भूलकर भी एक सितुही पानी नहीं निकला था।

चिकनी, सपाट, नगी तलहटी मे दरारें ही दरारें उग आई थी। मुंह बाये प्यासे खेत पानी के लिए हाफ रहे थे। तलहटी पार करने पर जगल शुरू हो जाता था। पेड़ों की ठूठ डालिया आकाश की ओर बाहे फैलाये उसका मुह ताक रही थी। जगह-जगह जंगली पशुओ के ककाल पड़े थे। न कही हरी पत्ती थी न घास का एक तिनका। बचे-खुचे जानवर कही और चले गये थे। जगल से आगे पहाड़ी पर नंगी दुपहरी नाच रही थी। गर्म हवाएं साय-साय करती हुई पत्थरो से सिर धुन रही थी। पहाड़ी से आगे भगत का पुरवा पड़ता था। वह दौड़ा चला जा रहा था।

ऊपर पहाड़ो से एक अधेड़ उम्र का राही दुलकिया नीचे भागा चला आ रहा था। साथ मे एक आठ-नौ साल का लड़का भी था, जो करीब-

करीब दौड़ता चल रहा था। पहाड़ की उतराई पर वह उनके साथ हो लिया था। आदमी अधनंगा था। सिर्फ कमर में एक लंगोटी और सिर पर चीथड़े का एक टुकड़ा था। लड़के के कमर में सिर्फ लंगोटी थी। आदमी के कंधे पर एक दाव रखा था और लड़का हाथ में लकड़ी का डंडा लिये था, जिसके सिरे पर खुर्पी जैसी लोहे की तेज सुम्मी लगी थी। शायद असुर जाति का आदिवासी था। घर से बाहर निकलते समय आदतन ये लोग, जंगली पशुओं से रक्षा के लिए, कुछ न कुछ हथियार ले लेते हैं।

"कहां जा रहे हो वीर?" पत्नाली ने पूछा। जंगली लोगों को मैदानी लोगों में 'वीर' कहकर पुकारने की परम्परा है।

"बुधवा हाट मालिक।"

"कुछ खरीद-फरोख्त करनी है क्या?"

"कहा की बात मालिक। फूटी कौड़ी मयस्सर नहीं। जंगल में पत्ते भी नहीं रहे कि दोना-पतरी बना लें।"

"फिर क्यों जा रहे हो।"

"इस बच्चे को कहीं ठांव धराने। सुनते हैं, शहर के लोग आजकल वहां आते हैं, छोटे बच्चों की तलाश में, घरों में काम करने के लिए।"

"बिना जाने-समझे ऐसे ही दे दोगे, अपने बच्चे को, किसी अनजान को।"

"क्या करूंगा मालिक। घर में रखकर भूखा मारने से तो अच्छा है। अब तो जंगल-पहाड़ पर कंदमूल फल भी नहीं रह गये। शिकार भी मर-बिलाय गये। कहीं कुछ तो नहीं मिलता, खाने को। कम से कम एक खाने वाला मुंह तो कम होगा। और फिर जहां कहीं भी रहेगा, अनाज तो मिलेगा इसको।"

"तो क्या बेच दोगे?"

"कुछ न कुछ, सौ-पचास तो मिल ही जायेगा।" आगे उसका रास्ता अलग हो गया था।

वह भगत के यहां पहुंचा तो चौकी पर कम्बल बिछाये वह सो रहे थे। दरवाजे पर ढेर सारे कलगीदार मुर्गे चर रहे थे और सात बकरे दंवरी में बंधे थे। शायद पूजा के लिए, चढ़ावे में, उस जैसे भक्तों ने दिये होंगे। वह

पैताने की ओर हाथ जोड़कर बैठ गया।

घंटे-भर बाद भगत जी उठे। दंड-प्रणाम के बाद जब उसने सारी बात सुनाई तो भगत जी मौन रह गये। फिर आसन से उठकर उन्होंने हाथ-पैर धोये, बदन पर पानी छिड़ककर शुद्ध किया, धूनी से चिटकी मे राख उठाई और पजो पर उकड़ूं बैठकर सुमिरन करने लगे। थोड़ी देर तक आंखें बन्द किये वह लय में गुनगुनाते रहे फिर पजो पर आगे-पीछे झूमने लगे और रह-रहकर बदन झकझोरने लगे। शून्य में आंखें गड़ाकर हवा मे पंजे फैलाये वह जैसे किसी को बुलाने लगे, फिर अधमुड़ी तनी अंगुलियों से हवा को पकड़कर अपनी तरफ खींचने लगे। इस दौरान उनके होंठ लगातार चल रहे थे। शांत होने पर वह थोड़ी देर तक पालथी मारकर मौन बैठे रहे, फिर अध-खुली नजरो से उसकी तरफ देखते हुए गम्भीर स्वर मे बोले—

"वनदेवी अप्रसन्न है। बड़ी पूजा माग रही हैं। कुए के नीचे पानी की धारा उमड़ रही है, पर जब तक देवी प्रसन्न नही होती, चाहे जितना खोद लो, एक बूंद पानी कुएं मे नही आयेगा।"

"लेकिन भगत जी, आप तो···।"

"लेकिन-वेकिन कुछ नही। यह देवी-देवताओं का मामला है। हम कुछ नही कर सकते।"

"ठीक है, जैसा आप कहे।"

"पूजा बड़ी होगी। अगर तुम्हारी हिम्मत पड़े तो देवी को मनाऊं।"

"क्या मांगती हैं वनदेवी ?"

"नरबलि।"

"नरबलि ?" वह चौंक गया, जैसे उसके कानों मे खौलता तेल पड़ गया हो।

"हां, हां, नरबलि। बच्चे से भी काम चल जायेगा।"

वह सन्न रह गया। पथराई नजरो से वह भगत का मुंह ताकता रह गया।

"और कोई पूजा ?" थोड़ी देर बाद उसने कांपते स्वर मे पूछा।

"और कोई पूजा देवी स्वीकार नहीं करेंगी।"

जमीन पर आंखें गड़ाये वह काफी देर तक सोचता रहा। उसका माथा

चाक की तरह घूम रहा था। सहसा रास्ते में मिला आदिवासी उसकी आंखों में तैर गया। सोचा, यदि सौ-पचास मे ही आदिवासियो के बच्चे मिल रहे है तो क्या बुरा है। बकरे की भी तो कीमत नही लग रही है।

"ठीक है भगत जी। लेकिन कोई जान गया तो।" घबराये स्वर मे उसने कहा।

"तुम निश्चित रहो। केवल तुम, मैं और देवी जी रहेंगी वहां पर।"

"तो क्या देवी जी का भी दर्शन हो जायेगा?"

"तुम्हारे जैसे मानुष नही देख सकते। तो फिर अगली पंचमी को रात में बारह बजे साइत है। तुम तैयारी करो।" पूजा की सारी सामग्री भगत ने बता दी।

वह वापस लौट आया। उसका मन उचाट था और पाव सीधे नही पड़ रहे थे।

घर लौटने पर उसने पत्नी से कोई बात नही की। दिन-रात वह गुम-सुम रहने लगा। पंचमी आज से ठीक बारहवें दिन पड़ रही थी, तब तक उसे पूजा के लिए सब व्यवस्था कर लेनी थी। उसने सोच लिया था, अगले बुधवार को उसी हाट मे जायेगा। शायद गरीब-दुखिया का कोई लड़का मिल जाय।

हाट के दिन वह बुधवा बाजार पहुंच गया। मेले में हर तरह की चीजें बिक रही थी पर कहीं भी लड़के-लड़की की बिक्री दिखाई नही दी। वह एक छोर से दूसरे छोर तक कई बार घूमते-घूमते थककर चूर हो गया और फिर मेले से बाहर आकर एक ठूंठ पेड़ के पास बैठ गया। दोपहर ढलते-ढलते वही आदिवासी एक लडके के साथ मेले की ओर आता दिखाई दिया। पास आने पर दुआ बन्दगी के बाद उसने पूछा—

"यह भी तुम्हारा ही लड़का है?"

"हां, अपना ही समझो मालिक।"

"क्या इसे भी बेचने लाये हो?"

"क्या करें, मजबूरी है।"

"कितने बच्चे हैं तुम्हारे?"

"सब अपने ही समझो मालिक। पहाड़ों पर बेचारे इधर-उधर भटकते

फिरते हैं। इनके मां-बाप भी छोड देते हैं या पचीस-पचास लेकर किसी के हवाले कर देते हैं। सोचा, मैं ही कहीं ठांव धरा दिया करूं।"

"तो बोलो क्या लोगे इसका ?"

"गुल्ली की तरह ठोस लौंडा है, कद-काठी भी अच्छी है, हर तरह का काम कर लेगा। अब आपमे कीमत क्या कहें, जहां रहे सुखी रहे, आप दो सौ रुपये दे देना।"

"नहीं-नही, मैं काम-वाम के लिए नहीं ले जा रहा हूं।" उसके मुंह मे बरबस ही निकल गया। उसने जीभ दांतों-तले काट ली।

"मतलब !"

"मेरा मतलब···मेरा मतलब है खाली ढोर-डंगर घुमा-फिरा दिया करेगा।" बात सम्हालते हुए उसने कहा।

"लेकिन···लेकिन, वीर, दो सौ ज्यादा है, बच्चा ही तो है। अभी तो खेलने-खाने की उमर है, इसकी। सौ ठीक रहेगा।"

काफी हीला-हवाली के बाद सौ रुपये देकर बच्चे को उसने ले लिया और घर की ओर चल दिया। बच्चा उसके पीछे-पीछे चल रहा था। उसको लगता था बलि के बकरे की रस्सी थामे वह आगे-आगे चल रहा है। रास्ते-भर न तो उसने बच्चे से कोई बात की और न ही उससे नजरें मिलाईं।

घर पहुंचने पर, साथ मे बच्चा देखकर, गूजरी भडक उठी। इस सूखे में अपने ही पेट को दाना दूस्वार है और यह मुआ एक और ठलुआ उठा लाया। अब एक और मुंह के लिए चारा कहा से आयेगा। वह पति पर तुनककर झनकने-पटकने लगी। लेकिन पताली चुप ही रहा।

उसने सोच रखा था, लड़के को छिपाकर घर मे रख देगा और पूजा की रात ही निकालेगा, लेकिन पत्नी का रुख देखकर उसको लगा, सब गुड-गोबर हो जायेगा। सोचा, गूजरी को सारी बात साफ-साफ समझा दे, पर कहने की हिम्मत नही हो रही थी। दिन-भर वह इसी ऊहापोह मे बेचैन रहा, रात होने पर उसने घुमा-फिरा कर घरवाली को लडका लाने का मकसद बता दिया। गूजरी उसकी बातें सुनकर भडक उठी और जोर-जोर से चीखने-चिल्लाने लगी। बहुत हथजोड़िया-गोड़धरिया करने पर तो वह ठंडी हुई थी।

रात भर गूजरी की पलकों पर झपकी नही आई। उसके अन्दर एक युद्ध चल रहा था, जिसमें बार-बार मा की ममता, शिशु का स्नेह और दया, धर्म विजयी होता। लड़के की बलि के विचार मात्र से उसका बदन सिहर उठता। उसने तय कर लिया कि किसी भी कीमत पर नरबलि नहीं होने देगी। सुबह होते-होते पति की बिना जानकारी के उसने लड़के को डरा-धमकाकर घर से भगा दिया।

पताली को जब मालूम हुआ तो वह तिलमिलाकर रह गया। हाट उठ चुकी थी। आज के चौथे दिन पूजा देनी थी। वह इधर-उधर बहुत भागा-दौड़ा पर कहीं किसी बच्चे का जुगाड नही बन पाया। घबड़ाकर वह भगत के पास भागा गया। यदि पूजा की तिथि अगले बुधवा बाजार तक टल जाय तो शायद कोई इन्तजाम हो जाय।

उसकी बात सुनकर भगत जी बिगड़ गये और साफ कह दिया कि पूजा की तिथि किसी कीमत पर नही टल सकती। उन्होने उसी दिन के लिए वनदेवी को मन्नत मान दी है और सुमिरन करके कुएं पर स्थापित कर दिया है। वनदेवी अपना थान छोड़ चुकी हैं। अब खप्पर लेकर ही वह अपने थान को वापस लौटेंगी। यदि उसने पंचमी की रात बारह बजे पूजा नही दी तो अनर्थ हो सकता है। उसको या उसके परिवार को जान खतरे मे पड़ सकती है। देवी तो नरमुंड लेकर ही रहेंगी।

"तुम्हारे कितने बच्चे हैं?" भगत ने बेरुखी से पूछा।

"जी, दो बेटे, दो बेटियां," हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाते हुए उसने कहा।

"तो ठीक है, अपने बड़े बेटे की बलि दो। देवी की इससे बड़ी और क्या पूजा होगी। तुमको तो मुहमांगी मुराद मिलेगी। हो सकता है, प्रसन्न होकर, देवी तुम्हारा बेटा भी वापस लौटा दे।"

वह चुप रहा।

"तुमको मालूम है न, राजा मोरध्वज की कहानी। उन्होने अपने ही बेटे के सिर पर आरा चलाकर उसका आधा शरीर शेर को अर्पित किया था और भगवान ने प्रसन्न होकर उसके बेटे को फिर से जिला दिया था। वैसे ही यदि तुम स्वयं अपने हाथों से बड़े पुत्र का गला काटकर देवी का खप्पर भरो तो तुम्हारा पुत्र भी देवी वापस कर देगी और मन की मुराद भी

पूरी हो जायेगी।"

भगत की बातें सुनकर पताली का कलेजा कांप उठा और शरीर थरथराने लगा। न चाहते हुए भी देवी के भय से उसने हां कर दी।

दिन के उजाले में घर लौटने की उसकी हिम्मत नहीं हुई। देर रात गये वह लड़खडाता हुआ घर लौटा और दालान के एक कोने में पड़ी चारपाई पर औंधे मुह गिर पड़ा। उस समय उसके दिल-दिमाग पर अनगिनत हथौड़े बरस रहे थे ठांय ''ठांय'''ठांय'''। पूजा अगले दिन बारह बजे रात को थी।

उसने पूजा की सारी सामग्री एकत्रित कर ली। पटनी पर रखा हुआ बकरा काटने वाला खंजर भी उतार लिया। उसमें जंग लगा हुआ था। पत्थर पर रगड़-रगड़कर उसने जंग छुडाया, उसकी धार तेज की, धार के ऊपर अंगूठा फेरकर आजमाया और जब आश्वस्त हो गया कि एक बार में गर्दन उतर जायेगी, तब पूजा की सामग्री के साथ खंजर को भी नई चुदरी मे गठिया लिया। सोते हुए बड़े बेटे को गोद में उठाया और खेतों को पार करता हुआ कुएं पर जा पहुचा। भगत जी वहा पहले से मौजूद थे।

बेटे को मिट्टी के नये घड़े के जल से नहलाया, नया वस्त्र पहनाया, उसके बदन पर चंदन-गुगुल लगाया, माथे पर लाल रोरी का टीका किया, गले मे मालाएं पहनाई और बलि के लिए तैयार कर दिया। इस दौरान भगत मत्र पढते रहे और अक्षत-फूल बलि पर छिड़कते रहे।

नहलाते समय, नया वस्त्र पहनाते समय, चंदन-गुगुल लगाते समय, माला-फूल चढाते समय, हर कदम पर उसका बेटा भोलेपन से पूछता रहा, "यह क्या कर रहे हो बापू, क्यों कर रहे हो?" पर उस समय उस पर देवी का भूत सवार था। वह एक ही उत्तर देता रहा, "सब तुम्हारे भले के लिए कर रहे हैं बेटे।" अबोध बालक टुकुर-टुकुर उसका मुह ताकता रहा और कठपुतली की तरह हर आदेश मानता रहा, लेकिन भगत की आखो की तरफ देखकर वह भय से कांप जाता था। पुजारी के आदेश पर उसने बेटे को वेदी के पास लेटा दिया और उसके सामने खाली खप्पर रख दिया। ज्यों ही उसने बेटे का सिर पत्थर के ठीहे पर रखकर खंजर उठाया, लड़का चीखकर भाग खड़ा हुआ। "बचाओ, बचाओ" चिल्लाते हुए वह जान छोड़-

कर भागने लगा। पताली ने दौड़कर लड़के को पकड़ लिया। लड़का हाथ-पैर पीटते हुए जमीन पर पसर गया और बेतहासा चिल्लाने लगा। उसने लड़के के मुह मे कपड़ा ठूस दिया और घसीटकर वेदी के पास ले आया। भगत ने एक बार फिर बलि पर जल छिड़क कर पवित्र किया और मन्त्र पढ़ने लगा। पताली लड़के को पटककर उसके सीने पर चढ बैठा। उसकी गर्दन उसके पत्थर के ठीहे पर रख दी और खंजर उठाकर 'खच्च' एक ही वार में धड़ से अलग कर दी। 'फस्सऽऽ' की आवाज के साथ अन्दर की हवा उड़ गई और छटपटाते धड़ से गर्म-गर्म खून का फव्वारा फूट पड़ा। सामने रखा देवी का खप्पर ताजे लहू से लबालब भर गया। उसने देखा, सिर में पुतलियां अभी भी नाच रही थी और होंठ फड़फड़ा रहे थे। जीभ बाहर झूल आई थी।

पूजा के बाद, भगत के आदेश पर पालथी मारकर वह बैठ गया और सिर को धड़ से जोड़कर, लाश को उठा कर गोद में रख लिया। उसे भगत की बातों पर पूरा विश्वास था कि राजा मोरध्वज के पुत्र की तरह उसका बेटा भी जी उठेगा। भगत मन्त्र पढते रहे और अक्षत माला लाश पर छिड़कते रहे। उनके कहने पर आखे बन्द करके वह देवी का ध्यान करने लगा।

उसका मन बेचैन था, दिल हाहाकार कर रहा था, अपने लाल के लिए आत्मा बिलख रही थी पर भगत के डर से आखें मूदे वह निश्चल बैठा था। बीच-बीच मे उसे लगता बेटे की लाश हवा में उड़ गई है। उसका प्रेत कंकाल के वेष मे उसके सामने अट्टहास कर रहा है और ललकार कर पूछ रहा है, 'बाप बनकर तुमने मेरे साथ विश्वासघात किया है, अपने स्वार्थ के लिए झूठ बोलकर मेरा बध किया है। हम तुमको कभी माफ नही करेंगे। इस छल का बदला लेकर रहेंगे और तुमको एवं तुम्हारे खानदान को कच्चा चबा जायेंगे।' उसे लगता, हवा में तैरता हुआ कंकाल उसकी गर्दन पर झूलने लगता और अपनी लम्बी उंगलियों से उसका गला दाबने लगता। रह-रह कर भय से वह कांप उठता था और गोद में पड़ी त्रेटे की लाश टटोलने लगता था।

रात बीत चुकी थी। अंधेरा छटने लगा था। जंगल के ठूंठ पेड़ों के पीछे,

पूरब दिशा मे, धीरे-धीरे लाल धब्बा उभरने लगा था। उसने आंखें खोलीं तो भगत गायब थे और पुलिस ने उसे चारों ओर से घेर रखा था। उसने चीख कर भागना चाहा, पर पुलिस ने दौड़कर पकड़ लिया और जजीरों में बांध कर जमीन पर घसीटने लगी। जिस रास्ते से पुलिस उसे घसीट रही थी, वह ऊबड़-खाबड़ और कंकरीला-पथरीला था। रास्ता टूटे काच, पत्थर और लोहे के नुकीले टुकडों से भरा था। उसका पूरा बदन छलनी की तरह बिंध गया और शरीर लहूलुहान हो उठा। रास्ते के दोनों ओर लोगों की भीड़ जमा थी। "खूनी'''खूनी" कहकर भीड उसके ऊपर थूक रही थी और जूते-चप्पल, ककड़-पत्थर बरसा रही थी।

पुलिस उसे फासीघर मे ले गई जहां लम्बा-चौडा, काला-कलूटा विशाल जल्लाद फासी का फन्दा लिये खड़ा था। उसके लम्बे चमकीले दांत बाहर निकले हुए थे और बडी-बड़ी आखे डरावनी लग रही थी। जल्लाद ने उसे फांसी के कुए पर रखे पटरे पर खड़ा कर दिया और उल्टी मुसुक चढाकर दोनो हाथ पीछे बाध दिये। उसने उसके ऊपर काला कपड़ा डाल दिया और आखों पर काली पट्टी बाध दी। उसके गले में फासी का फन्दा डालकर जल्लाद ने आजमाया, हुच्च-हुच्च तीन बार फन्दे को खीचा और एक-दो-तीन बोलते ही 'खड़क' की आवाज के साथ पटरा उसके पैरो के नीचे से हट गया। उसका बदन कुएं में झूल गया, गला कस गया और दम घुटने लगा। हवा मे पैर पीटते हुए वह छटपटाने लगा और जान बचाने के लिए गोंय-गोंय चिल्लाने लगा। सहसा फासी का फन्दा उसके गले से सरक गया और वह धडाम से गहरे कुएं में, नीचे जा गिरा। उसे लगा, यह वही कुआं है, जिसे वह खोद रहा था। जल्लाद ने अपनी काली लम्बी भुजाएं कुएं में डाल कर उसके सिर के बाल पकड़ लिये और अट्टहास करता हुआ बाहर खीच लाया। उसी वेदी के पास पटक कर वह उसके सीने पर चढ़ बैठा और उसी पत्थर के ठीहे पर उसकी गर्दन रख कर काटने के लिए वही खजर हवा मे तान दिया।

वह 'बचाओ, बचाओ' चिल्लाने लगा। बगल मे सोई उसकी पत्नी हड़बड़ाकर उठ बैठी। उसने देखा, उसका आदमी नीद मे घिघियाते हुए हाथ-पैर पीट रहा है, जैसे उसके सीने पर बैठा कोई गला घोंट रहा हो।

उसने झिंझोड़कर पताली को जगाया। पताली जग तो गया लेकिन उसका बदन थरथर कांप रहा था, सासें तेज चल रही थीं और मुंह से साफ आवाज नहीं निकल पा रही थी। बदन पसीना-पसीना हो गया था। गूजरी ने दौड़ कर आले पर रखी ढिबरी जला दी और उसके पास आकर सिर पर हाथ फेरने लगी।

ढिबरी की टिमटिमाती रोशनी में पताली की फटी-फटी भयभीत आखें चारों तरफ नाचने लगीं जैसे किसी को ढूढ रही हों। बड़ी मुश्किल से उसकी आवाज निकली, "मैं···मैं···कहां हूं? जल्लाद कहां हैं? पुलिस वाले कहां गये? मेरा बेटा···मेरा बेटा···सलामत तो है, उसका खून तो किसी ने नहीं किया। कहा है···। कहा है मेरा बेटा?"

गूजरी हैरान थी, एकाएक उसके आदमी को हो क्या गया है? वह रुआंसी हो उठी। पति का बदन सहलाते हुए उसने कहा, "तुम कैसी बातें करते हो? कौन जल्लाद, कैसी पुलिस, किसने किसका खून किया, यह सब तुम क्या बकझक कर रहे हो? सम्हालो अपने आपको। लगता है कोई बुरा सपना देखा है।"

"सपना···नहीं-नहीं गूजरी, इसे सपना मत समझो। मेरा बड़कुआ कहा है? उसे मेरे पास ले आओ।" इस दौरान उसके चारों बच्चे उसकी चारपाई के इर्द-गिर्द खड़े हो गये थे। उसने बड़े लड़के को बांहों में भर लिया और सीने से लगाकर देर तक हिचक-हिचक कर रोता रहा।

"कुछ बताओगे भी, तुम तो एकदम बच्चों की तरह डर गये। ऐसी कौन-सी खौफनाक बात हो गई?"

"बात तो बहुत खौफनाक थी गूजरी, पर होते-होते बच गई। अब मुझे कोई कुआं-फुआं नहीं चाहिए और न ही मैं इसके लिए भगत के पास जाऊंगा।"

पूरब दिशा में, धीरे-धीरे लाल धब्बा उभरने लगा था। उसने आंखें खोलीं तो भगत गायब थे और पुलिस ने उसे चारों ओर से घेर रखा था। उसने चीख कर भागना चाहा, पर पुलिस ने दौड़कर पकड़ लिया और जंजीरों में बांध कर जमीन पर घसीटने लगी। जिस रास्ते से पुलिस उसे घसीट रही थी, वह ऊबड़-खाबड़ और कंकरीला-पथरीला था। रास्ता टूटे कांच, पत्थर और लोहे के नुकीले टुकड़ों से भरा था। उसका पूरा बदन छलनी की तरह बिंध गया और शरीर लहूलुहान हो उठा। रास्ते के दोनों ओर लोगों की भीड़ जमा थी। "खूनी···खूनी" कहकर भीड़ उसके ऊपर थूक रही थी और जूते-चप्पल, कंकड़-पत्थर बरसा रही थी।

पुलिस उसे फांसीघर में ले गई जहां लम्बा-चौडा, काला-कलूटा विशाल जल्लाद फासी का फन्दा लिये खड़ा था। उसके लम्बे चमकीले दांत बाहर निकले हुए थे और बड़ी-बड़ी आंखे डरावनी लग रही थीं। जल्लाद ने उसे फासी के कुएं पर रखे पटरे पर खड़ा कर दिया और उल्टी मुशुक चढाकर दोनो हाथ पीछे बाध दिये। उसने उसके ऊपर काला कपड़ा डाल दिया और आखो पर काली पट्टी बांध दी। उसके गले में फांसी का फन्दा डालकर जल्लाद ने आजमाया, हुच्च-हुच्च तीन बार फन्दे को खीचा और एक-दो-तीन बोलते ही 'खड़क' की आवाज के साथ पटरा उसके पैरों के नीचे से हट गया। उसका बदन कुएं मे झूल गया, गला कस गया और दम घुटने लगा। हवा मे पैर पीटते हुए वह छटपटाने लगा और जान बचाने के लिए गोंय-गोंय चिल्लाने लगा। सहसा फांमी का फन्दा उसके गले से सरक गया और वह धड़ाम से गहरे कुएं में, नीचे जा गिरा। उसे लगा, यह वही कुआं है, जिसे वह खोद रहा था। जल्लाद ने अपनी काली लम्बी भुजाएं कुए मे डाल कर उसके सिर के बाल पकड़ लिये और अट्टहास करता हुआ बाहर खीच लाया। उसी वेदी के पास पटक कर वह उसके सीने पर चढ़ बैठा और उसी पत्थर के ठीहे पर उसकी गर्दन रख कर काटने के लिए वही खंजर हवा मे तान दिया।

वह 'बचाओ, बचाओ' चिल्लाने लगा। बगल मे सोई उसकी पत्नी हड़बड़ाकर उठ बैठी। उसने देखा, उसका आदमी नीद मे घिघियाते हुए हाथ-पैर पीट रहा है, जैसे उसके सीने पर बैठा कोई गला घोंट रहा हो।

उसने झिझोड़कर पताली को जगाया। पताली जग तो गया लेकिन उसका बदन थरथर काप रहा था, सासे तेज चल रही थी और मुह से साफ आवाज नही निकल पा रही थी। बदन पसीना-पसीना हो गया था। गूजरी ने दौड़ कर आले पर रखी ढिबरी जला दी और उसके पास आकर सिर पर हाथ फेरने लगी।

ढिबरी की टिमटिमाती रोशनी मे पताली की फटी-फटी भयभीत आखे चारो तरफ नाचने लगी जैसे किसी को ढूढ रही हों। बड़ी मुश्किल से उसकी आवाज निकली, "मैं···मैं···कहां हूं? जल्लाद कहां हैं? पुलिस वाले कहां गये? मेरा बेटा···मेरा बेटा···सलामत तो है, उसका खून तो किसी ने नही किया। कहां है···। कहा है मेरा बेटा?"

गूजरी हैरान थी, एकाएक उसके आदमी को हो क्या गया है? वह रुआसी हो उठी। पति का बदन सहलाते हुए उसने कहा, "तुम कैसी बाते करते हो? कौन जल्लाद, कैसी पुलिस, किसने किसका खून किया, यह सब तुम क्या बकझक कर रहे हो? सम्हालो अपने आपको। लगता है कोई बुरा सपना देखा है।"

"सपना···नहीं-नहीं गूजरी, इसे सपना मत समझो। मेरा बड़कुआ कहा है? उसे मेरे पास ले आओ।" इस दौरान उसके चारों बच्चे उसकी चारपाई के इर्द-गिर्द खड़े हो गये थे। उसने बड़े लड़के को बांहों में भर लिया और सीने से लगाकर देर तक हिचक-हिचक कर रोता रहा।

"कुछ बताओगे भी, तुम तो एकदम बच्चो की तरह डर गये। ऐसी कौन-सी खौफनाक बात हो गई?"

"बात तो बहुत खौफनाक थी गूजरी, पर होते-होते बच गई। अब मुझे कोई कुआं-फुआ नही चाहिए और न ही मैं इसके लिए भगत के पास जाऊगा।"

सुराज

आजादी की चालीसवी वर्षगांठ थी। सड़कें और चौराहे लाल-पीली झंडियो और झालरों से सजे थे। बिजली के खभों पर लाउडस्पीकर टगे थे। सुबह से ही देश-भक्ति के गाने आ रहे थे। मुह-अंधेरे मेहतरो का झुंड सड़कें साफ कर गया था। वर्ष-भर की गन्दगी खुरच-खुरच कर छुड़ाई गई थी। भोर से ही पुलिस की गाडियां, सी० आर० पी० के जवान, एन० सी० सी० के छोकरे बन्दोबस्त मे सडको पर इधर से उधर दौड़ रहे थे। आम लोगों का आमदरफ्त आज सड़कों और फुटपाथों पर नही था।

आठ बजे चौराहे के मामने सरकारी भवनो पर तिरंगे झंडे फहराये गये, 'जन गण मन' दोहराया गया, भाषणो मे आजादी की कीमत और उसके अर्थ समझाये गये, शहीदों के बलिदानों को याद किया गया, पुलिस की परेड और स्कूली बच्चो के जुलूस निकाले गये। साढ़े-नौ बजते-बजते सब कुछ समाप्त हो गया। डेढ़ घटे के लिए सुराज जागा, फिर सो गया, साल-भर के लिए। सडकें-चौराहे वीरान हो गये। न आदमी, न जन, न रोज की भीड़-भाड। बस्तिया चुप, बाजारें बन्द, आम लोगों में न कही कोई उत्साह, न उमंग। लगता था, जैसे पूरा नगर मुर्दा हो गया है। केवल बिजली के खंभो पर टगे लाउडस्पीकर अकेले चिचिया रहे थे।

सुराज अपनी ठेगनी और जस्ते का टूटा कटोरा लिये, मूत्रालय के पास रोज की जगह बैठा, चुपचाप यह सब देखता रहा। साढे-नौ बज गये थे, पर उसके कटोरे मे अभी तक एक पैसा नही पडा था। रोज अब तक रुपया-आठ आना मिल जाता था और वह एक कप चाय पी लेता था, लेकिन आज अभी तक वह बासी मुंह बैठा झख मार रहा था।

सहसा उसे अपना बचपन याद आने लगा। उम्र के चालीस वर्ष परत

दर परत उसकी नजरों के सामने खुलते चले गये। आज से चालीस साल पहले, आजादी के दिन ही वह जन्मा था। मारे खुशी में बापू ने उसका नाम स्वराज कुमार रखा था, जो बाद में चल कर सुराज और फिर सुरजवा बन गया। उसके जन्म के साथ ही, उसके बापू ने, अपने बेटे के लिए, ढेर सारे सपने सजोये थे, ख्वाबों के महल बनाये थे, लेकिन उसके बड़ा होने के साथ-साथ उनके सपने बिखरते गये, ख्वाबों के महल ढहते गये और उनकी जगह अंधेरा और खोखलापन उभरता गया।

उसको याद है, जब वह नन्हा मुन्ना था, बापू लेट कर अपनी टांगों पर उसे 'घुघुआ गाना, उपजे धाना' खेलाते थे और अपने आप ही बोलते जाते थे—

'बड़ा होकर मेरा बेटा क्या बनेगा?'

'मुंशी बनेगा, मुंशी। नहीं, नहीं, दरोगा बनेगा, दरोगा। कड़क वर्दी और बूट पहन कर ठक···ठक, लेफ्ट राइट करता हुआ जब घर आयेगा तो सारा गांव देख कर चिढ़ जायेगा।'

'नहीं-नहीं, मेरा बेटा कलक्टर बनेगा कलक्टर।'

'हां, लाट साहब क्यों नहीं?' उसकी मां मुंह चिढ़ाकर कह देती।

'लाट साहब · नहीं, नहीं, गांधी जी बनेगा, गाधी जी। लाट साहब को भी गांधी बाबा के सामने झुकना पड़ा था।' कहकर वह ठठाकर हंस देते।

उलाहने के रूप में उसकी मा कहती—'देखो जी, मेरे बेटे के बारे में कोई ऐसी-वैसी बातें मत किया करो। कहीं नजर न लग जाय।' वह कजरौटा लेकर आती और उसके माथे पर डिठौना लगाकर, उसका मुह चूम लेती।

धीरे-धीरे वह बड़ा होता गया। बढ़ती उम्र के साथ एक तरफ खर्च बढ़ने लगा और दूसरी तरफ महंगाई। कर्ज के बोझ से उसका बापू दबता गया। गांव के स्कूल से कस्बे के स्कूल और कस्बे के स्कूल से शहर के कालेज में वह पहुंच गया। बड़ा आदमी बनाने की ललक मे उसका बापू जमीन बेच कर उसको पढ़ाता रहा। जब वह बी० ए० करके निकला, तब तक उसका बापू किसान से मंजदूर बन चुका था और घर की एक-एक इंच

जमीन बिक चुकी थी। खपरैलों के घर की जगह फूंस की झोंपड़ी ने ले ली थी।

इस दौरान उसने महसूस किया, आजादी के बाद देश में बड़ी तेजी से परिवर्तन आया था। गांव के लोग शहरों की तरफ भागने लगे थे। गांव उजड़ रहे थे और शहर सुरसा के बदन की तरह बढ़ रहे थे। चारों तरफ एक अजीब आपाधापी और भागम-भाग मची थी। इस भाग-दौड़ में एक तरफ कुछ लोग देश की सारी दौलत और वैभव बटोर रहे थे, तो दूसरी तरफ असंख्य लोग रोटी के टुकड़ों के लिए मोहताज होते जा रहे थे, एक तरफ आंखों को चुंधिया देनेवाली रोशनी का चकाचौंध फैल रहा था, तो दूसरी ओर अंधेरा और खोखलापन बढ़ता जा रहा था, एक ओर गगनचुंबी अट्टालिकाएं खड़ी हो रही थीं, तो दूसरी ओर फूस के झोंपड़े भी मयस्सर नही हो रहे थे। यह सब कुछ उसे बड़ा अजीब लगता था, पर वह अपने धुन मे जुटा था और बापू के सपनों को साकार करने पर तुला था।

अपने इलाके का वह पहला बी० ए० था। बापू के सपनो को असलियत में बदलने और उनकी खोई जमीन और मकान वापस दिलाने के लिए वह बेचैन था। अधिकारी से नीचे उसने कभी सोचा नही था। दो वर्षों तक वह आई० ए० एस०, पी० सी० एस० की परीक्षाओ मे बैठता रहा, पटना, दिल्ली दौड़ता रहा, पर सब बेकार। हर बार वही निराशा, वही मायूसी हाथ लगती। धीरे-धीरे उसका जोश ठंडा पडने लगा, आशाएं धूमिल होने लगी, और उनकी जगह निराशा और अंधेरापन उभरने लगा, फिर भी उसने हिम्मत नही हारी। वह कोई भी नौकरी करने पर उतारू हो गया। क्लर्क से लेकर चपरासी तक, बेलदार से लेकर कुली, खलासी तक किसी भी नौकरी के लिए उसने रोजगार दफ्तर मे अपना नाम दर्ज करा दिया।

अगले पांच वर्षों तक, वह रोजगार दफ्तर का चक्कर लगाता रहा, दर-दर की ठोकरें खाता रहा, पर नौकरी मृगमरीचिका की तरह उसे छलती रही। हर जगह पैसा और पैरवी का बोलबाला था। यहा तक कि रोजगार दफ्तरवाले भी बिना कुछ लिये नाम नही निकालते थे। सात वर्षों की भाग-दौड़, संघर्ष और बेरोजगारी के आलम ने उसे पूरी तरह तोड़ दिया। उसका मोह भंग हो गया। उसके बापू के सपने टूट गये, ख्वाब बिखर गये।

थककर वह घर बैठ गया। उसके अंदर एक अजीब परिवर्तन आने लगा। दिन-रात झोंपड़ी के एक कोने में बुत बना बैठा, वह सोचता रहता और कुछ बड़बड़ाता रहता। कभी-कभी एकाएक वह उठता और घर से गायब हो जाता। कई-कई दिनो तक वह शहर की सड़कों, चौराहों, कल-कारखानो, दफ्तरों-दुकानों का चक्कर लगाता रहता, फिर थक कर, चेहरे पर वही निराशा और मायूसी ओढ़े, वापस घर लौट आता। धीरे-धीरे उसके जीवन में अंधेरा और गहराता गया और खोखलापन बढता गया।

उसे लगता, इस अंधेरे से निकलने के लिए वह जितना ही छटपटाता उतना ही अंधी गलियो में भटकता आता। जब भी प्रकाश की खोज मे नजरें दौडाता, ढेर सारा अंधेरा उसकी आंखो में भर आता। जहां भी कुछ पाने के लिए हाथ बढ़ाता, महज खालीपन उसकी मुट्ठी में समा जाता। तब ऊब कर इस अंधेरे और खोखलेपन से बाहर निकलने के लिए, जब भी वह भागता, कदम दर कदम पर ठोकरें खा-खाकर अंधी गलियों मे, औंधे मुह गिर-गिर पड़ता। ठोकर लगने से वह जगह-जगह से टूट जाता और टुकड़ो-टुकड़ों में बिखर जाता। अन्त मे मायूस होकर, टुकड़ों मे बिखरी जिन्दगी समेट कर, परत-दर-परत छिल गई अपनी खाल में वह बाध लेता और अपने कमजोर कन्धों पर लाद कर फिर उसी अंधेरे और खोखलेपन में रेंगने लगता। इस दर्द-भरी गठरी से निरंतर लहू रिसता रहता और दर्द कसकता रहता है, लेकिन वह उफ तक नही कर पाता क्योंकि देश आजाद था।

अब वह इस जिन्दगी का आदी हो गया था। उसकी भावनाए मर चुकी थी, इच्छाएं दफन हो चुकी थीं। वह गम खाता था, आसू पीता था, धरती बिछाता था और ऊपर लटका आसमान ओढ लेता था। अब उसकी धरती पर सूर्य की रोशनी अभी नही उतरती थी, उसके आकाश मे चाद-सितारे कभी नही चमकते थे। बस हर समय वही गहरा अधेरा छाया रहता और उसमें वही खोखलापन समाया रहता। उसे लगता, आजाद हिन्दुस्तान के अंदर एक और हिन्दुस्तान है, जिनके बीच एक मजबूत दीवार खड़ी होती जा रही है। दीवार के उस पार दौलत और वैभव बढ़ता जा रहा है और इस पार अधेरा और खोखलापन।

उसके पिता को लगा, बेटा गया हाथ से। दिन-भर गुमसुम बैठा रट-

पटांग की बातें सोचता रहता है और अपने आप न जाने क्या-क्या बड़बड़ाता रहता है। उसने सोचा, किसी प्रकार, एक बार यह घर से बाहर कहीं नहीं जगह निकल जाय, तो शायद सब ठीक हो जाय।

इस दौरान दिल्ली से बद्दू घर आया था। गाव वालों को उसने बताया था कि वह वाचमैन का काम करता है। उसके दोनों कधों पर बड़े-बड़े काले घट्ठे पड़े थे। उसे वह राइफल रखने का निशान बताता था। उसके पिता ने सोचा, यदि मिल जाय तो यह काम भी बुरा नहीं है। लड़का संभल जायेगा। उसने बद्दू के साथ बेटे को दिल्ली भेज दिया।

बद्दू जमुनापार गाजीपुर डेयरी फार्म में दिन-भर बहंगी पर भैंसों का गोबर फेंकता था। पांच रुपये महीना फी भैंस के हिसाब से, महीने मे दो-ढाई सौ रुपये कमा लेता था।

दूसरे दिन सुबह बद्दू ने उसे बहंगी पकड़ा दी। दिन-भर के बाद शाम को जब वह डेरे पर लौटा तो उसका बुरा हाल था। दोनों कंधे सूज गये थे और दर्द से फट रहे थे। उसे लगता था, सिर से पैर तक उसका पोर-पोर हथौड़ों से कूच दिया गया है। पूरा बदन लकड़ी की तरह अकड गया था और सिर फट रहा था। उठने-बैठने में शूलें उठ रही थीं। सांस लेने में पसलियां करक उठती थीं। उसे जोरो का ज्वर चढ गया और हफ्ता भर वह ज्वर मे तड़पता रहा।

उसके गांव के कुछ लोग डेयरी फार्म के पास से बहते गंद नाले पर बसी झोपड़पट्टी मे रहते थे और गाजियाबाद एव नोएडा में कारखानों में मजदूरी करते थे। ठीक होने पर, वह उनके पास चला गया।

एक बार फिर से उसने अपना भाग्य आजमाना और बापू के अधूरे सपनों को साकार करना चाहा। डिग्री हाथ में लेकर वह दिल्ली के चारों तरफ फैले कारखानों मे दौड़ने लगा। एक-एक कारखाने का दरवाजा उसने खटखटाया; मालिकों, प्रबंधकों के सामने रोया-गिड़गिडाया, पर चूंकि कहीं से वह कोई सोर्स-सिफारिश नहीं जुटा पाया, इस बार भी चारों तरफ से उसे निराशा ही हाथ लगी। खीजकर उसने डिग्री फाड़ दी और अनपढ बन कर गाजियाबाद के मैटल कारखाने में मजदूर का काम करने लगा।

मई-जून का महीना था। सूरज आग उगल रहा था। धरती अंगारे की

तरह तप रही थी। तेज पछिवा हवा चल रही थी। शाम को वह कारखाने से लौटा तो देखा, उसका हिन्दुस्तान जलकर राख हो गया था। छाती पीटती औरतें और रोते-बिलखते बच्चे नाले के बांध पर छितियाये फिर रहे थे। कुछ लोग अपनी झुग्गियों की राखों में बचा-खुचा सामान ढूंढ रहे थे। थोडी दूरी पर लोगों की भीड़ जमा थी। उनके बीच पहुचने पर उसने देखा, बच्चों और औरतों की चार अधजली लाशें पड़ी थी। उनके वारिस लाशों पर सिर धुन रहे थे। भौचक्का-सा आखे फाड़े वह भी राखो की ढेर में अपनी झुग्गी की जगह ढूढने लगा।

वहां पुलिस का पहरा बैठा दिया गया। सुनने में आया कि प्रशासन ने वह जमीन किसी उद्योगपति को, कल-कारखाना लगाने के लिए, दे दी है।

झोंपडियों की राख अभी ठंढी भी नही हो पाई थी कि अफरा-तफरी में लोगबागों ने, दिन का हादसा भूलकर, रातोरात नयी झोपड़िया खड़ी कर ली। दूसरे दिन सुबह नगरपालिका के अधिकारी, दो ट्रक पुलिस के साथ, आये, और उन लोगों को वहा से खदेड़ने लगे, लेकिन झोपड़पट्टी के लोग भी मरने-मारने पर उतारू हो गये। अन्त मे नगरपालिका वाले, पुलिस के साथ, वापस लौट गए।

थोडे दिनों बाद ही, अब मूसलाधार वर्षा हो रही थी, और परिंदो का घोसला भी उजाडना नागवार था, उसके हिन्दुस्तान पर फिर हमला हुआ और सगीनों के साये में, पूरी झोंपड़पट्टी पर बुलडोजर चलने लगा। पुलिस के डडो की मार से बच्चे-बूढे और औरतें अपनी जान लेकर इधर-उधर भागने लगे। इतने मे कुछ गाड़िया आयी और पुलिस वालों ने भागते लोगों को पकड कर, लावारिस कुत्तों की तरह, उन गाड़ियों में ठूस दिया और शहर से बाहर काफी दूर, अरावली की पहाड़ियों मे छोड़ दिया, लेकिन उन्हें अपनी धरती मे इतना मोह था, अपने देश से इतना प्रेम था कि रेंगते-रिरियाते, लुढकते-घिसटते फिर वे अपने हिन्दुस्तान मे वापस लौट आये। तब तक वहा 'राक पाल्ट्री फार्म' का बोर्ड लग चुका था और मुर्गियों के दरबे बनने शुरू हो गये थे। सुराज ने सोचा, देश आजाद है, रहने का सबको समान अधिकार है, चाहे आदमी हो या मुर्गियां, यही सच्चा समाजवाद है।

इस बार शहर से दूर, जहां कई नालों का सगम होता था और जो आगे

जाकर गदी नदी का रूप ले लेता था, उनके बीच के डेल्टा पर उसने अपनी झुग्गी लगाई। देखते-देखते कीचड़ के कंधो पर पोलिथिन और प्लास्टिक के चीथड़ो, कागजों, गत्तों, टिन जस्तों के छाजनों वाला उसका हिन्दुस्तान फिर बस गया।

इसी दौरान, कारखाने के पते पर, उसके घर से एक खत आया, जिसमें लिखा था—

"खत लिखा ऊंचडीह से सूरज भइया के मालूम कि तोहरे घर में गमी हो गइल बा। आगे मालूम करना कि तोहार बापू गुजर गइले। सावन सुदी सप्तमी के दसवा आउर दस्सिमी के तेरही परल बा। तोहार भाई लिखावत बाटी कि खत के तार समझीहा, उहा खइहा इहा अचइहा। खत पढत गाड़ी पकड़ लीहा। आवत के कुछ दाम-दोगानी काम-किरिआ वदे लेत अइह। आउर कुल ठीकै बा।

खत लिखावे वाली
तोहार माई
खत लिखै वाला खिचड़ी राम बाकलम खुद।

अब तक उसने जो कुछ भी कमाया था, वह सब आग मे स्वाहा हो गया था। नयी झोपड़ी बनाने मे कुछ कर्ज भी चढ़ गया था। उसने पठान से दो रुपये रोजाना सूद पर सौ रुपये कर्ज लिये और गाड़ी चढ़ गया।

घर से लौटते समय वह अपनी पत्नी और दोनों बच्चों को भी लेता आया। अंधी मां अकेली गाव में पीछे रह गई। मन रखने के लिए उसने एकाध बार मां से भी चलने के लिए कह दिया था, फिर चुप हो गया था। उसने सोचा, मा को गाव मे तीस रुपये महीना भेज दिया करेगा, जो वह कभी नही कर पाया।

दिल्ली वापस पहुचा तो मेटल कारखाने मे छटनी हो रही थी। वह भी बेकार हो गया। पत्नी पहले से ही प्रसूत की बीमारी से पीड़ित थी। दूसरे बच्चे के जन्म के साथ उसको हल्का-हल्का बुखार रहने लगा था। उसका इलाज कराने के लिए वह यहा लाया था, पर अब दवा-दारू तो दूर, बच्चो के लिए एक वक्त की रोटी भी मुहाल थी।

दिन-ब-दिन पत्नी की हालत बिगड़ती गई। उसका शरीर गल कर कंकाल बन गया। चेहरा मरघट की तरह उदास और भयानक लगने लगा। आंखें खोखलों में धंस गई। नंग-धड़ंग बच्चे भी हर समय भूख से रिरियाते रहते और रोटी के लिए उसको नोचते रहते। उनकी नाकों में दलदल और आंखों में दरिया हर समय छलकता रहता। जब से ये जन्मे थे, उसने कभी इन्हें हंसते नहीं देखा था।

झोंपड़ी में हर समय मनहूस अंधेरा छाया रहता था। धूप और हवा न आने से सीलन और चिपचिपापन हमेशा बना रहता था। झोंपड़ी के एक कोने में जस्ते, टिन और मिट्टी के कुछ टूटे-फूटे बर्तन और दूसरे कोने में कुछ चीथड़े और दो टूटी चटाइयां पड़ी थीं। बरसात में जब रात को पानी बरसता, झोंपड़ी का छाजन छलनी की तरह चूने लगता, तब रात-भर भीगते बन्दर की तरह वह इधर-उधर उछलता रहता। बीवी का कराहना तब और तेज हो जाता और बच्चे बिलखने-बिलबिलाने लगते। तब दोनों चटाइयां सिर पर ओढ़े, एक में एक गुथे बैठकर वह रात काट देता। बरसाती पानी से गंदे नाले उफन कर झोंपड़ियों के बीच से बहने लगते, जिनमें गटर की गंदगी ऊपर तैरने लगती। वह भी गटर की गंदगी के बीच कीड़ों की तरह तैरता रहता।

इधर कुछ दिनों से भोर होते ही वह बोरा लेकर कचरा चुनने निकल जाता। एक दिन वह शाम को लौटा तो देखा, झोंपड़ी में सन्नाटा है, पत्नी का कराहना बंद है। पास जाकर देखा, पत्नी का शरीर निर्जीव पड़ा था। ढेर सारी चींटियां और तेलचट्टे उसके बदन में चिपके थे और कई जगहों से मांस चाट गये थे। बड़ा बच्चा गायब था। छोटा बच्चा डर के मारे सिर घुटनों में छिपाये, आंखें मूंदे, एक चटाई पर पड़ा था।

मां के अभाव और भूख के कारण छोटा बच्चा भी बीमार रहने लगा और अगले कुछ ही दिनों में उसका पूरा परिवार उजड़ गया।

इस दौरान वह कारखाने का बराबर चक्कर लगाता रहा। थोड़े समय बाद ही उसकी फैक्टरी बिल्कुल बन्द हो गई थी। हजारों मजदूर बेकार हो गये थे। कारखाने के गेट पर धरना, प्रदर्शन बराबर चल रहा था। नगर निगम का चुनाव नजदीक था। उनकी मजबूरी का फायदा उठाने के लिए

उनके बीच विरोधी दल का एक नेता आ टपका। नेता ने उनके दर्द को समझा, उनकी आह को महसूसा और उनके स्वर में स्वर मिलाकर उनकी मांगें दोहराने लगा। वह मजदूरों के साथ इतना घुलमिल गया कि उनकी समस्या नेता की समस्या बन गई, उनका पेट नेता का पेट हो गया, उनकी भूख नेता की भूख हो गई। उसने, उनके सारे दर्द-दुखों को, अपनी टोपी में समेट कर सिर पर ओढ़ लिया।

एक दिन नेता उन लोगों को धिक्कारने लगा कि आदमी होकर भी वे कीड़े-मकोड़ों की तरह जी रहे हैं, कुत्तों की मौत मर रहे हैं। उसने कहा, "जागो, उठो और चलो हमारे साथ। हम तुमको जीने का अधिकार दिलायेंगे, रोटी, कपड़ा और मकान मुहैया करवायेंगे।"

नेता की बातें सुनकर उसकी बुझी-बुझी आंखें चमक उठीं, झुर्रीदार चेहरे आशाओं से खिल उठे। उसने पहली बार महसूस किया कि वह भी इनसान है। उसे भी भरपेट रोटी मिल सकती है, कपड़ा मिल सकता है, मकान मिल सकता है।

नेता नारे लगाते हुए आगे-आगे चल रहा था और भीड़ दोहराते हुए उसके पीछे चल रही थी। देखते-देखते जुलूस बढ़ता गया और उसका सारा हिन्दुस्तान नेता के पीछे, सड़कों पर रेंगने लगा।

नेता उन लोगों को एक ऐसी जगह ले गया, जहां बहुत सुन्दर शीशे का महल बना था। उस महल के बीचोबीच एक बड़ा मंच रखा था। मंच पर ढेर सारे जमूरों जैसे चेहरे बैठे थे। उनकी शक्ल और पोशाक अजीबोगरीब थी। वे तरह-तरह की करिश्माई कलाबाजियां दिखा रहे थे। सबके सिर पर टोपियां थीं। टोपियों के आकार और रंग अलग-अलग थे। लाल टोपी, नीली टोपी, पीली टोपी, हरी टोपी, काली टोपी, सफेद टोपी, टोपी ही टोपी और रंग ही रंग। उनकी टोपियां बोलतीं, हंसती, हवा में उछल जातीं, तैर जातीं, दूसरी टोपियों से लड़ जातीं और फिर अपनी या किसी और जमूरे की नंगी खोपड़ी पर जाकर चिपक जाती थीं।

सुराज को लगा, ये दूसरे हिन्दुस्तान के लोग हैं, जिनके पीछे ''मदारी के भेष में मेटल कारखाने के मालिक बैठे हैं। उन मालिकों के इशारों पर ये जमूरे तरह-तरह की कलाबाजियां दिखा रहे हैं। इसी बीच एकाएक डम'''

डम'''डम'''डम'''डमरू बजने लगा। सारे जमूरे कनकना कर खड़े हो गये और डमरू की तान पर उछलने-कूदने और तान तोड़ने लगे। डमरू की तान बदली, तब सारे जमूरे गाने लगे और फिर दूसरी तान पर रोने लगे। सहसा डमरू का बजना बन्द हो गया। मदारी की आवाज पर एक-एक जमूरा अपना जादुई करिश्मा दिखाने लगा। किसी ने मुह से आग उगला, चारों तरफ लपटें ही लपटें फैल गई, तो दूसरा मुंह से पानी के फव्वारे छोड़ने लगा, पल-भर मे आग गुल हो गई। कोई देखते-देखते महल खड़ा कर देता, तो दूसरा सारा महल निगल कर डकार मार लेता। कोई उड़कर आसमान में गायब हो गया और ऊपर से हाथ-पैर, धड़ काट-काटकर जमीन पर फेंकने लगा। धरती पर खून की दरिया बह निकली, तो कोई उसको एक ही चुल्लू मे आचमन कर गया। देखते-ही-देखते किसी ने मिठाइयों से भरी तश्तरियां सबके सामने रख दी और सब लोग ताजी-ताजी देशी घी की मिठाइया खाने लगे।

यह सब देखकर उसे लगा, वह असली जगह पहुंच गया है, जहा रोटी क्या, भर पेट मिठाइयां मिलेगी। उसके मुह मे पानी भर आया। वह अधीर हो उठा और बार-बार मुह मे आये पानी को अन्दर सुड़कते हुए, जीभ चटपटाने लगा।

नेता ने जोश में आकर कहा, नारे लगाओ। वे हवा में बाहें उछाल-उछाल कर नारे लगाने लगे—

"इनकलाब
जिन्दाबाद !
मजदूर एकता,
जिन्दाबाद
हम सबकी है एक जबान,
रोटी कपड़ा और मकान
डमरूवाला
हाय, हाय,
टोपीवाला
हाय, हाय,

पीली टोपी,
हाय, हाय
नीली टोपी,
हाय, हाय,
हाय, हाय,
हाय, हाय,
......

इतने में चारों तरफ से संगीनों ने उन्हें घेर लिया और तड़ातड़ लाठियां उन पर बरसने लगी, धांय-धांय गोलियां चलने लगी। देखते ही देखते चारों तरफ लाशें ही लाशें बिछ गई। सूखा मुंह लाठियों से तोड़ दिया गया। भूखा पेट गोलियों से भर दिया गया। नेता जमूरे की तरह अदृश्य हो गया। मुर्दा लाशें श्मशान और जिन्दा लाशें अस्पताल पहुंचा दी गई।

अस्पताल में, गोलियों से घायल उसके हाथ-पैर काट दिये गये, टूटी हड्डियों को निकाल कर उनकी जगह लकड़ी या बास की खपच्चियां लगा दी गई। फटी चमड़ी की जगह फटे चीथड़ों की चिप्पियां टांक दी गई। खून की जगह नसों में पानी भर दिया गया और फिर मलबे के ढेर की तरह उठाकर चौराहे पर फेंक दिया गया।

तब से वह ठूंठ की तरह इसी चौराहे पर पड़ा रिरिया रहा है। हर साल पन्द्रह अगस्त को, आजादी की रश्में पूरी होते वह देखता है, तब सहसा उसका घाव हरा हो उठता है और टप-टप खून उसमें से चूने लगता है। वह सोचता है, काश उसका हिन्दुस्तान भी सचमुच आजाद हो पाता।

दिन के बारह बज रहे थे। उसका कटोरा अभी भी खाली था। उसे लगा, शायद भूखे ही सोना पड़े, क्योंकि आज आजादी का दिन है।

चक्रव्यूह

"क्या अभियुक्त को कुछ कहना है ?"

'अभियुक्त' शब्द सुन कर लाल साहब तिलमिला उठ, पर चुप रहे। उन्हें जो कुछ कहना था, उनकी सुलगती आँखें कह रही थीं, तमतमाया चेहरा बोल रहा था। कठघरे के हत्थे को पकड़ कर वह ऐसे कस रहे थे, मानो किसी का गला घोंट रहे हों।

"अभियुक्त अपनी सफाई मे कुछ कहना चाहता है ?" इस बार जज ने पहले से ऊँची आवाज में पूछा।

"हुजूर, अभियुक्त औवल दर्जे का धूर्त, मक्कार और जालसाज आदमी है। कहने को तो वह कुछ भी कहानी गढ सकता है, पर अब कहने-सुनने के लिए रह ही क्या गया है। सब कुछ तो साबित हो चुका है, अभियुक्त के खिलाफ।" सरकारी वकील ने व्यंग्य से मुस्कराते हुए कहा।

लाल साहब का अंतः भभक उठा। जी में आया, उछल कर वकील का मुह नोच लें, गर्दन मरोड़ दें और सट्ट से जीभ कबार ले। हलाहल झूठ बकते हुए इसकी जीभ भी नहीं ऐंठ रही है। मुह उठाकर उन्होंने एक लंबा उच्छ्वास छोड़ा, मानो अदर धधकता ज्वालामुखी बाहर उंड़ेल रहे हों, और फिर जज की तरफ मुखातिफ होकर बोले, "अब क्या कहना है जज साहब, जब सब कुछ कहा जा चुका है।"

"कोर्ट एक मौका सबको देती है। आपको भी अपनी सफाई पेश करने का मौका दिया जाता है।"

"सफाई। कैसी सफाई ? और फिर सफाई देने से होगा भी क्या? होगा तो वही जो कानून के पहरेदारों के रूप में बैठे ये दरिंदे चाहेंगे।"

"मी लार्ड, अभियुक्त कोर्ट पर शक कर रहा है।" सरकारी वकील ने कहा।

"अभियुक्त बहक रहा है। उसे अपनी सफाई में कुछ कहना है तो कोर्ट एक मौका देती है।" जज ने लाल साहब के वकील की ओर संकेत करके कहा।

"लाल साहब, आप निडर होकर बोलिए। बता दीजिए सब घटनाएं सच-सच।" उसके वकील ने पास आते हुए कहा।

"घटनाएं। कैसी घटनाएं? कौन-सी घटनाएं? अब तो बस दुर्घटनाएं रह गई हैं···एक नही अनेक···कई-कई दुर्घटनाएं, एक से एक भयावह, जिनके बारे मे कल्पना भी नही की जा सकती थी! धरती का भी कलेजा एक बार दहल जाएगा, इनसान तो इनसान है।"

"अभियुक्त फिर बहक रहा है।" टेबुल पर मुंगरी मारते हुए जज ने चेतावनी दी।

"अभियुक्त नही, मी लार्ड, अपराधी, एक शातिर बदमाश, जो एक प्रतिष्ठित धंधे का मुखौटा लगा कर घिनौने अपराध करता रहा है, और इस प्रकार समाज की प्रतिष्ठा और देश की नींव को खोखला करता रहा है, दीमक की तरह चाटकर।" सरकारी वकील ने टेबुल पर मुट्ठी मारते हुए कहा।

लाल साहब के अंदर जैसे आग की लुकारी जल उठी। एक बार फिर भभक उठे।

"आब्जेक्सन मी लार्ड। सरकारी पक्ष के वकील एक इज्जतदार व्यक्ति पर कीचड़ उछाल रहे हैं। कौन कैसा है, इसका फैसला कोर्ट को करना है, हमारे विद्वान साथी को नही।" बचाव पक्ष के वकील ने कहा।

"कोर्ट का वक्त जाया न किया जाय।" जज ने आदेश दिया।

"लाल साहब असली मुद्दे पर आइए। मुझे विश्वास है, आपको न्याय अवश्य मिलेगा।" उनके वकील ने कहा।

"कैसी बात करते हैं वकील साहब, आज के समाज में न्याय, और वह भी इन लोगों के रहते हुए। कभी नही। क्या आप नहीं जानते कि यह कोर्ट भी इन्ही की व्यवस्था की एक कड़ी है, इनके जुल्मों और अत्याचारो

पर मुहर मारने की एक दुकान है।" पुलिस और विरोधी पक्ष की ओर इशारा करते हुए लाल साहब ने कहा।

"मी लार्ड, यह कोर्ट की मानहानि है, आपकी तौहीन है। अभियुक्त ने इस पवित्र मंदिर को दुकान कहा है, शक की उंगली उठाई है। क्यों न इसके खिलाफ कोर्ट की मानहानि का मुकदमा चलाया जाय।" सरकारी वकील ने ऊची आवाज मे जज की ओर देखते हुए कहा।

"हा, हा, चला लो, एक नही अनेकों, जहां इतने सारे जाली मुकदमे खडे कर दिये वहा एक और सही। मैं डरता नही। लेकिन एक बार बाहर निकल आया तो तुम सबको एक-एक कर देख लूगा।" कठघरे के हत्थे पर मुक्का मारते हुए लाल साहब ने कहा।

"मी लार्ड, मैंने कहा न, अभियुक्त परले दर्जे का बदमाश और छटा गुडा है। देखा जाय, कोर्ट के सामने भी देख लेने की धमकी दे रहा है। ऐसे बदमाशों को समाज में रहने का कोई हक नहीं है। जहां रहेगे वही अव्यवस्था और बदअमनी फैलायेंगे। इनकी जगह तो बस जेल के सीखचों मे है, जहां जिंदगी-भर बद पड़े तिल-तिल घुटते रहे, ताकि समाज और आने वाली पीढ़ी को सीख मिल सके।

"मी लार्ड, जैसा कि मैंने पहले कहा, अभियुक्त एक खतरनाक अपराधी है। वह न केवल समाज, बल्कि इस देश की अर्थव्यवस्था और सुरक्षा के लिए भी गम्भीर खतरा है। अपने स्वार्थों के लिए, मौका पाने पर यह देश को भी बेचने मे नहीं हिचकेगा। मैं कोर्ट से दरख्वास्त करूंगा कि अभियुक्त को सख्त से सख्त सजा दी जाय। अपराध तो पहले ही साबित हो चुके हैं।" सरकारी वकील ने एक मुकदमे का कागज हाथ से दूसरे हाथ की हथेली पर पटकते हुए कहा।

"आब्जेक्सन मी लार्ड। अभियुक्त को सफाई का मौका दिये बिना निर्णय ले लेना न्यायसंगत नही है।" लाल साहब के वकील ने आगे बढ़कर कहा।

"ठीक है, ठीक है। अगला अभियोग पढा जाय।" जज ने आदेश दिया।

"अभियोग नही मी लार्ड, अपराध जो साबित हो चुके है।" ५९७

वकील ने फिर टोका।

जज ने टेबुल पर मुगरी मारी और तन कर बैठ गया।

"पुआरी लाल, पुत्र कोदई लाल, साकिन मुहल्ला डकैतान, खालकटगंज, औवल दर्जे का धूर्त्त, मक्कार और चार सौ बीस आदमी है, जो समय और मौसम के अनुसार गिरगिट की तरह रंग बदलने मे माहिर है।"

"आब्जेक्सन मी लार्ड, किसी भी शरीफ आदमी के बारे में, जब तक अभियोग साबित न हो जाय, इस तरह के अल्फाज इस्तेमाल करना गैरवाजिब है।" बचाव पक्ष के वकील ने बीच में बोला।

"हा, हा, देश मे सिर्फ दो ही शरीफ आदमी बचे हैं, एक आप और दूसरा आपका यह धूर्त्त मुवक्किल।" सरकारी वकील ने व्यंग्य से कहा।

"यह चरित्रहनन है, मी लार्ड।"

"हां तो आगे पढा जाय।"

"पुआरी लाल, पुत्र कोदई लाल···।"

"वह तो हो चुका। आगे चलो।"

"आगे यह कि पुआरी लाल एक बेरोजगार, बददिमाग, बदतमीज और उलटी खोपडी का आदमी है। हर सीधी चीज को टेढी निगाह से और अच्छी बात को बुरे खयाल से देखना इसकी आदत है। इसकी निगाह पर एक ऐसा चश्मा चढा हुआ है, जिसके अंदर से सभी लोग इसे चोर-बदमाश, उचक्के, घटिया और लिजलिजे दीखते हैं। पूरे देश मे केवल यही एक सच्चाई और ईमानदारी का पुतला बच रहा है, युधिष्ठिर की तरह···नहीं, नहीं, युधिष्ठिर में भी खामिया थी, वह भी जुआड़ी थे और जुआ में अपनी बीवी तक हार गये थे। अभियुक्त की पत्नी तो अभी सही-सलामत इसके पास है।"

"यह क्या मजाक है। यह कोर्ट है या भांड़ों की नौटंकी।" लाल साहब चिल्ला उठे।

"मी लार्ड, नोट किया जाय, अभियुक्त ने कोर्ट को भांडों की नौटंकी कहा है। यह कोर्ट की तौहीन है।"

"आर्डर, आर्डर।"

"जज साहब, मैं अश्लील बातें सुनने का आदी नही हू।" लाल साहब

ने सरकारी वकील की तरफ जलती आंखो से देखते हुए कहा।

"वाह, वाह। अश्लील बातें सुनने के आदी नही हैं, लेकिन अश्लील हरकतें करने में माहिर जरूर है।"

"क्या बेतुकी बाते करते हैं।" लाल साहब ने सरकारी वकील को फटकारा।

"बेटी की कमाई खाना अश्लील नही तो और क्या है।" सरकारी वकील ने हाथ चमकाते हुए कहा।

"खबरदार, मेरी बेटी पर लाछन लगाया तो अच्छा नही होगा।" लाल साहब चीख उठे। उस समय उनकी आखे सुर्ख हो आई थी।

"आहाहा, जब घर में शोहदों को बुलाते रहे तब बुरा नही लगा…" सरकारी वकील अपनी बात पूरी नही कर पाया।

"जज साऽऽहऽऽब…इन्हें रोकिएऽऽऽ…"

जोरों से चीखते हुए लाल साहब कांपने लगे और कटघरे के अदर ही ढर हो गये। उनकी अप्रत्याशित चीख से कमरे की दीवारें चिहुक उठीं और खिड़कियां-दरवाजे झनझना गये। कोर्ट में खलबली मच गई। कुछ आदमी कटघरे की ओर दौड़कर लाल साहब को सभालने लगे। जज साहब, आधे घंटे के लिए कोर्ट स्थगित कर अपने चैंबर मे चले गये। लाल साहब को कोर्ट के अंदर पड़े बेंच पर सुला दिया गया और एक आदमी पानी लेने के लिए दौड़ गया।

थोड़ी देर बाद लाल साहब को होश आ गया, लेकिन सिर अभी भी चक्कर कर रहा था। पूरा बदन पसीने से तरबतर हो गया था। सीने की धुकधुकी तेज चल रही थी। उन्होंने आंखे खोली तो लगा, पूरा कमरा और उनके इर्द-गिर्द खड़े लोग घूम रहे हैं। आंखो के सामने अभी भी रग-बिरगी चिनगारियो के बीच काले धब्बों के छल्ले उछल रहे थे।

लाल साहब पुराने क्रांतिकारी थे। देहात से हाई स्कूल करने के बाद, आगे पढ़ने के लिए, ज्योंही वह शहर आए, उनका संपर्क क्रांतिकारियों से हो गया। पढ़ाई अधूरी छोड़, वह आजादी की लड़ाई में कूद पड़े। सरकारी खजाना लूटने, पोस्ट आफिस जलाने, टेलीफोन का तार काटने और चलती गाड़ी मे चढ़कर हथियार लूटने वाले गिरोह के वह सरगना बन गये।

राष्ट्रीयता और देशभक्ति उनकी रग-रग में कूटकूट कर भर गई। आजादी के बाद अपने स्वतंत्र विचार, प्रखर व्यक्तित्व और ईमानदारी के कारण वह किसी दल में खप नहीं सके और सभी से किनारा काटकर 'एकला चलो रे' की नीति पर आजीवन एकाकी चलते रहे और अन्याय, अत्याचार, शोषण और भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज बुलंद करते रहे। उन्होंने न ही कभी कोई नौकरी की और न कोई हाल रोजगार। दो पन्ने का 'क्रांतिदूत' नामक अखबार निकालते थे, जो उस शहर एवं आसपास के इलाकों में काफी लोकप्रिय था।

लाल साहब बिना किसी दबाव के सच्ची और खरी खबरें छापने मे जरा भी नही हिचकते थे। चोरी, बदमाशी, बेईमानी, भ्रष्टाचार और घूसखोरी की खबरें तो विशेष सुर्खी देकर पहले पृष्ठ पर छापते थे। इसीलिए पुलिस, प्रशासन, ठेकेदार और नम्बर दो का धन्धा करने वालों की आंखो मे वह किरकिरी की तरह चुभते रहते थे।

पिछली बरसात में पानी की निकासी एकाएक रुक जाने के कारण कई दिनों तक पूरा नगर झील बना रहा। मोरियों और नालों की गंदगी, सड़कों और चौराहों पर तैरने लगी। नगर प्रशासक की ओर से बताया गया कि जिस नाले मे पानी की निकासी होती थी, वह चार किलोमीटर तक धंस गया है। लेकिन वास्तविकता कुछ और थी। उसी नगर के कुख्यात गुंडा और नये धनी लाठन चौधरी ने, प्रशासक से मिलकर, नाले का मुंह बंद करवा दिया था, जिससे शहर में बनावटी बाढ़ आ गई थी। चार किलोमीटर नाले की फिर से खुदाई-सफाई करने के लिए दो लाख का आपातकालीन ठेका लाठन चौधरी को दिया गया और जनता का पैसा प्रशासक और ठेकेदार ने मिलकर बांट लिया। लाल साहब को किसी प्रकार इसका सुराग मिल गया। उन्होंने इसका भण्डाफोड़ 'क्रांतिदूत' में किया और लगातार खबरें छापकर लाठन चौधरी की नींद हराम कर दी। पहले तो चौधरी ने साम, दाम से लाल साहब को पीटने की कोशिश की, पर उनकी लेखनी की धार और तेज होती गई। अन्त में स्थानीय पुलिस से मिलकर उन्होंने लाल साहब को तबाह करने की योजना बना डाली।

लाल साहब के दो बेटियां ही थी। पहली अपने घर जा चुकी थी।

दूसरी का गौना देना बाकी था। दिन पड़ चुका था। किसी प्रकार तिनका-तिनका चुनकर लाल साहब ने जेवर तो बनवा लिया था, लेकिन धोती-कपड़ा व साज-सामान की व्यवस्था नही हो पा रही थी। कुछ पैसे के जुगाड़ में वह अपने पुराने साथी और स्वतन्त्रता सेनानी के पास, जो अब विधायक थे, इलाहाबाद गए थे। रात को ग्यारह बजे जब वह अंतिम बस से लौटे तो अपने घर के सामने खड़ी ट्रक देखकर भ्रम मे पड़ गए कि कही गलत जगह तो नही आ गए है।

उनका घर लूटा जा रहा था, गुण्डे घर का सामान लूटकर ट्रक पर लाद रहे थे। थोड़ी देर के लिए तो उनकी समझ मे नही आया कि यह सब क्या हो रहा है। ज्यों ही वह दरवाजे पर पहुंचे, दो मुस्टंडो ने झपट कर उन्हें धर दबोचा और पटक कर सीने पर पिस्तौल रख दी। लाल साहब ठक्क रह गए। अंदर के एक कमरे मे गुण्डों के चंगुल में फंसी उनकी बेटी तड़प और चीख-चिल्ला रही थी, लेकिन उसकी आवाज साफ नही निकल रही थी। लूट के बाद बदमाश उनकी बेटी को भी घसीट कर अपने साथ लेते गए।

विक्षिप्त और बदहवास लाल साहब रपट लिखवाने के लिए थाने पहुंचे। बड़े दारोगा पहले से ही जले-भुने बैठे थे। मौका-मुआयना और तहकीकात के बाद बड़े दारोगा ने मारपीट कर लाल साहब को अंदर कर दिया। बाद में तस्करी करने, नशीली दवाएं बेचने और चकला चलाने का उन पर मुकदमा खड़ा कर दिया गया। लाठन चौधरी ने भी अंटशंट खबरें छापने के लिए उनके अखबार पर दो लाख का मानहानि का दावा ठोंक दिया। दोनों मुकदमे एक साथ चल रहे थे। तस्करी के कारण राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के अंतर्गत लाल साहब की जमानत भी नही हो पाई और वह जेल मे सड़ते रहे।

आधे घंटे बाद कोर्ट फिर लगी। एक सिपाही ने लाल साहब की पंखुरी पकड़कर बेंच से ठिराते हुए ले जाकर कठघरे में फिर खड़ा कर दिया। वह ठीक से खड़ा नही हो पा रहे थे। उनकी टागें अभी भी कांप रही थी, जैसे किसी ने ऐंठ कर निचोड़ दिया हो। उनकी कमर तड़क रही थी और सिर फट रहा था। वह बेहद कमजोरी महसूस कर रहे थे।

"मी लार्ड, अभियुक्त न केवल एक खतरनाक बदमाश और पेशेवर

अपराधी है, बल्कि परले दर्जे का नाटकी भी है। बेहोशी का नाटक करके वह न केवल मूल मुद्दे को बहकाना चाहता है, बल्कि कोर्ट की हमदर्दी भी हासिल करना चाहता है।" सरकारी वकील ने फिर चाबुक लगाया।

लाल साहब एक बार फिर तिलमिला उठे।

"आगे की कार्रवाई शुरू की जाए।" जज ने आदेश दिया।

"पुआरी लाल वल्द कोदई लाल पर पड़ोसी देश से तस्करी करने और नशीली दवाओं का चोरी-छिपे व्यापार करने का भी जुर्म है, जो तहकीकात के दौरान उनके घर से बरामद माल के आधार पर साबित हो चुका है। इस प्रकार अभियुक्त न केवल एक चोर और तस्कर है, बल्कि देश की आर्थिक स्थिति को खोखला करने और यहां की भावी पीढ़ी को नशीली दवाएं बेच कर अपंग करने का भी अपराधी है। इतना ही नहीं, अभियुक्त पर अन्तर्राष्ट्रीय तस्करों के गिरोह का सदस्य होने का भी अंदेशा है, जिसके बारे में तहकीकात अभी भी जारी है।"

"मिस्टर लाल, इस बारे में आपको कोई सफाई देनी है।" जज ने पूछा।

"लाल नहीं, मी लार्ड, मिस्टर काला। हुंह, नाम रखा है लाल और धंधा करते हैं काला।"

"आर्डर, आर्डर।"

"हां तो आपको कुछ कहना है, मिस्टर लाल।"

"यह सब सरासर झूठ है। चोर और स्मगलर तो यह दारोगा जी हैं जो इस वर्दी की आड़ में खुद तस्करी और नशीली दवाओं के व्यापार में आकंठ डूबे हैं और इस धंधे में लगे लोगों की रक्षा करते हैं।"

"आब्जेक्सन मी लार्ड, एक निष्पक्ष और निर्भीक अधिकारी पर यह आरोप एकदम बेहूदा और बेबुनियाद है। बड़े दारोगा जी एक निष्ठावान और ईमानदार अधिकारी हैं। इसके लिए इन्हें कई राजकीय पुरस्कार भी मिल चुके हैं। ऐसे निराधार आरोपों से पुलिस का मनोबल गिरेगा। लगता है, अभियुक्त का मानसिक संतुलन बिगड़ गया है। इसे कुछ दिनों के लिए पागलखाने भेज दिया जाए।" सरकारी वकील आवेश में आ गया था।

"हां तो मिस्टर लाल, सच क्या है?"

"सच तो यह है, जज साहब, कि मैंने अपने अखबार के जरिए दारोगा जी के कुकृत्यों का भंडाफोड़ करना शुरू किया, इनकी काली करतूतें छापनी शुरू कीं, जिससे यह तिलमिला उठे। पहले तो इन्होंने पैसों से मेरा मुंह बंद करना चाहा, मित्र-दोस्तों से कहलवाया, पर जब कोई असर नहीं हुआ तो यह घिनौना खेल मेरे साथ खेला। आप ही बताएं जज साहब, जब ये कानून के तथाकथित रक्षक और जनता के सेवक ही दरिंदे हो जाएं तो यह समाज और देश कैसे चल सकता है?"

"आर्डर, आर्डर। मैं सचाई जानने की कोशिश कर रहा हूं और आप अनर्गल प्रलाप किए जा रहे हैं।" जज ने नाराजगी जाहिर की।

"वही तो मैं बता रहा हूं, जज साहब, चोरी की रात दारोगा जी दो सिपाहियों के साथ तहकीकात के लिए मेरे घर आए और जांच-पड़ताल करने के बाद मुझे भी थाने ले गये। वहां सादे कागज पर मुझसे हस्ताक्षर करने के लिए दबाव देने लगे। जब मैंने इनकार किया तो मेरे साथ बदतमीजी पर उतर आए और मारने-पीटने लगे। आप मेरी उम्र की तरफ ध्यान दें जज साहब। अपनी इज्जत की डर से मैंने हस्ताक्षर कर दिया। तब से मैं जेल के सींखचों के अंदर सड़ रहा हूं। जब मुकदमा खड़ा हुआ तब मालूम हुआ कि इस तरह का घटिया आरोप मुझ जैसे स्वतंत्रता सेनानी और राष्ट्रवादी पर लगाया गया है।" लाल साहब की आंखें नम हो आई थीं।

"आगे पढ़ा जाए।" जज ने गंभीर मुद्रा में कहा।

"आगे यह कि अभियुक्त एक बेरोजगार और निखट्टू आदमी है, जो आजीवन समाज पर एक भार बना रहा। मजे की बात तो यह कि बिना कोई रोजी-रोजगार के भी यह मौज की जिंदगी जीता रहा है।"

"सो कैसे?" जज ने पूछा।

"ब्लैकमेलिंग से भी साहब। अपराधी एक पर्चा निकालता है जिसमें शहर के इज्जतदार और प्रतिष्ठित लोगों के बारे में उल्टी-सीधी बातें छाप कर उनसे पैसा ऐंठता है और इस प्रकार ब्लैकमेल की कमाई से गुलछर्रे उड़ाता है।" सरकारी वकील ने पूछा।

"पर्चे का नमूना पेश किया जाए।" जज ने आदेश दिया।

"यह रहा मी लार्ड। देखा जाए, कैसी-कैसी शर्मनाक बातें छापता है अभियुक्त, 'नगर पालिका के दफ्तर मे घोटाला, प्रशासक द्वारा लाखो रुपयो की लूट, सड़क नही बनी और ठेकेदार लाखों रुपये डकार गया। तस्करी मे पुलिस का हाथ, पुलिस द्वारा डकैती और बलात्कार, विधायक की कार से चार किलो चरस पकड़ा गया, अनाथालय मे अनाचार, नाली में नवजात शिशु फेंका मिला' आदि-आदि ढेर सारी मनगढ़त खबरों से भरा रहता है इसका पर्चा।" अखबार उलट-पलट कर सुर्खिया पढ़ते हुए सरकारी वकील ने कहा।

"इतना ही नही मी लार्ड, सरकारी कोटे से अखबारी कागज लेकर यह चोर बाजार मे बेचता है और सरकारी कागज पर ही सरकार, व्यवस्था एवं समाज के प्रतिष्ठित लोगो को गालिया देता है और बदनाम करने के लिए बेबुनियाद और सरासर झूठी खबरें छापता है। मैं कहता हू यदि प्रशासक, पुलिस या ठेकेदार भ्रष्ट हैं तो इसके लिए सतर्कता विभाग है, गुप्तचर पुलिस है, सरकार है, न्यायालय है, उनके खिलाफ जांच-पड़ताल करने और दंड देने के लिए। यह दो कौड़ी का फटीचर आदमी कौन होता है, उगली उठाने वाला, ऐसी अनर्गल खबरें छापने वाला।" सरकारी वकील तैश में आ गया था। अखबार उसने जज को पकड़ा दिया।

उलट-पलट कर अखबार देखने के बाद जज ने लाल साहब की ओर मुखातिब होकर पूछा, "अभियुक्त इस बारे में कुछ कहना चाहता है?"

"मै ऐसे लिजलिजे और सड़े दिमाग वाले चाटुकारों की परवाह नही करता। घटिया और छिछोरी बातों से सत्य को तोपा नहीं जा सकता। मैं आपसे ही पूछता हूं। जरा आंखे खोल कर देखिए, आज आपके इर्द-गिर्द हो क्या रहा है? कदम-कदम पर सत्य का गला घोटा जा रहा है, सरेआम नैतिकता और ईमानदारी की होली जलाई जा रही है, परंपराओ एव मान्यताओं को रौंदा जा रहा है। आज बीच चौराहे पर सीता-सावित्रियो का शील हनन हो रहा है, नन्ही बच्चियो के साथ बलात्कार किया जा रहा है, दिन दहाड़े लोगों को कुत्तो की तरह गोलियों से भूना जा रहा है, गरीबों-नि:सहायों को गाय-बकरियों की तरह बाध कर दूहा जा रहा है और वे उफ तक नही कर पाते हैं···।"

"आर्डर, आर्डर। अभियुक्त बहक रहा है। यह कोई भाषण देने का मञ्च नहीं है। जितना पूछा जाए उतना ही जवाब दिया जाए।"

"मी लार्ड, अपराधी अपने-आपको सत्यवादी हरिश्चन्द्र और युधिष्ठिर की औलाद साबित करने की कोशिश कर रहा है, जबकि खुद स्वतंत्रता सेनानी का झूठा प्रमाण-पत्र पेश करके पेंशन ऐंठ रहा है। इससे बढ़कर बेईमानी की बात और क्या हो सकती है।" सरकारी वकील ने कहा।

"आब्जेक्सन मी लार्ड। लाल साहब एक तपे-तपाए स्वतंत्रता सेनानी है। इन्होंने देश की आजादी के लिए अपना सर्वस्व त्याग कर दिया है।" बचाव पक्ष के वकील ने कहा।

"यदि खजाना लूटना त्याग है तो फिर चोरी किसे कहेंगे।"

"देश के लिए सरकारी खजाना लूटा था।"

"इतना ही नहीं मी लार्ड, अभियुक्त चोर होने के साथ-साथ दुराचारी भी है। अपने जवानी के दिनों में, जब यह चोरी-छिपे इधर-उधर मारा फिरता था, तब उस समय के एक देशभक्त ने इसको अपने घर में छिपने की शरण दी। बाद में यह नमकहराम उनकी ही बेटी को ले भागा।"

"बस बहुत हो चुका। बंद करो यह बकवास।" लाल साहब गुस्से से कांपने लगे थे।

"अच्छा। वह कैसे?" जज ने पूछा।

"जज साहब, मेरी पत्नी जाने-माने स्वतंत्रता सेनानी कुंवर बहादुर सिंह की बेटी है, जिन्होंने आजादी की लड़ाई में अपनी रियासत होम कर दी थी और दोनों बेटों की बलि चढ़ा दी थी। आज भी उनका स्मरण इस महान त्याग का साक्षी है।"

"सो तो ठीक है, मी लार्ड। कौन नहीं जानता कुंवर साहब के त्याग को। लेकिन ऐसी महान आत्मा के साथ भी अभियुक्त ने गद्दारी की।" सरकारी वकील ने मुंह बिचकाते हुए कहा।

"यह सरासर झूठ है। कुंवर साहब की बेटी भूमिगत होकर क्रांतिकारियों के साथ काम करती थी…।"

"और तुम उनके साथ क्रांति करते थे।" सरकारी वकील ने टिप्पणी की।

"मी लार्ड, इन बातों का इस मुकदमे से कोई ताल्लुक नहीं है।" बचाव पक्ष के वकील ने आगे बढ़कर कहा।

"सीधा ताल्लुक है, मी लार्ड। इससे साफ जाहिर होता है कि अभियुक्त बचपन से ही उचक्का, लोफर और चरित्रहीन है।" सरकारी वकील ने ऊंची आवाज में कहा।

"ठीक है, ठीक है, अगला अभियोग पढ़ा जाए।" जज ने आदेश दिया।

"आगे यह कि पुआरी लाल वल्द कोदई लाल ने हलके के थाने में रपट दर्ज कराई थी कि वाकयात की रात करीब 11.00 बजे लाठन चौधरी ने अपने गुंडों के साथ अभियुक्त के घर पर डाका डाला और सामान लूट कर ले गए। आगे यह भी कि लाठन चौधरी के गुंडों ने न केवल अभियुक्त की बेटी के साथ दुर्व्यवहार किया बल्कि उसे उठा भी ले गए'''।"

"फिर, फिर क्या हुआ ?" जज ने पूछा।

"पुलिस तहकीकात के दौरान पाया गया कि यह रपट सरासर झूठ, मनगढ़त और सत्य से परे है। असल में पुआरी लाल वल्द कोदई लाल ने नगर के इज्जतदार और प्रतिष्ठित व्यक्ति लाठन चौधरी को ब्लैकमेल करने के लिए ऐसा घटिया आरोप लगाया था। तहकीकात के दौरान यह भी पाया गया कि अभियुक्त बहुत ही गिरा हुआ और पतित इनसान है, जो अपनी बेटी की कमाई की रोटी खाता'''।"

"नहीं'' नहीं'''नहीं'''यह सरासर झूठ है, भगवान के लिए मेरी बेटी के बारे में ऐसी बातें मत करो। मेरी बेटी'''मेरी बेटी गंगा की तरह पवित्र थी।" लालसाहब बीच में ही चीख पड़े। क्रोध से उनका बदन कांपने लगा था। ग्लानि और क्षोभ के कठघरे से हत्थे पर उन्होंने सिर पटक दिया था।

"तो सच क्या है ?" जज ने लाल साहब की ओर देखते हुए पूछा।

"सच यह है जज साहब, कि वाकयात के दिन करीब चार बजे शाम को ही एक ट्रक आकर हमारे दरवाजे के सामने रुका। उस पर कुछ सामान लदा हुआ था। ड्राइवर के अलावा छः मुस्टंडे खलासियों की तरह फटे चीथड़े कपड़े पहने ट्रक से उतरे और लदा सामान उतार कर नीचे रख

दिया। ड्राइवर बोनट खोलकर उस पर झुक गया। कुछ लोग ट्रक के ऊपर नीचे आते-जाते रहे, ट्रक को ठेलते, धक्का लगाते रहे। इस दौरान बराबर ट्रक भर्र-भर्र की आवाज करता रहा। यह सब नाटक इसलिए रचा गया कि पास-पड़ोस वालों को यह मालूम हो जाए कि चलता हुआ ट्रक अचानक खराब हो गया है। रात को ग्यारह बजे, जब मैं घर लौटा तो सामने खड़ा ट्रक भर्र-भर्र की आवाज कर रहा था। घर का सामान लूटकर ट्रक में लादा जा रहा था। लाठन चौधरी अपने दो मुस्टंडों के साथ मेरी बेटी को ···" आगे लाल साहब के मुंह से कोई शब्द नहीं निकल पाया और वह फूट-फूट कर रो पड़े।

"पानी···पानी···अभियुक्त को पानी दिया जाए।"

"कहिए···कहिए, यह न्यायालय है। यहा आपको पूरा न्याय मिलेगा। हां तो फिर, क्या आपने लाठन चौधरी को जोर-जबर्दस्ती करते देखा?"

"मैंने इतना ही देखा कि मेरी बेटी दो-तीन गुंडों के चंगुल में फंसी छटपटा रही है।"

"और आप दरवाजे पर बैठे पहरा दे रहे हैं।" सरकारी वकील ने व्यंग्य से कहा।

"बीच में टोका-टाकी न की जाए। हां तो क्या आपकी बेटी उस समय चुप थी या चीख-चिल्ला रही थी?"

"गोंय-गोंय की आवाज कर रही थी, लगता था बदमाशों ने उसके मुंह में कपड़ा ठूंस दिया था।"

"क्या आपने वह कपड़ा देखा?"

"कैसे देखता जज साहब। दो गुंडे मुझे पटककर सीने पर चढ़ बैठे थे। फिर बदमाशों ने मेरी बेटी को भी उठाकर ट्रक में डाल दिया और फिर··· और फिर···मेरी बेटी कभी लौट कर नही आयी।"

"क्या कहती है पुलिस-रपट इस बारे मे?" जज ने पूछा।

"पुलिस रपट से साबित होता है कि डकैती और दुर्व्यवहार की घटना झूठी है। असलियत यह है कि पुआरी लाल वल्द कोदई लाल की बेटी मोहिनी एक पेशेवर लड़की थी। शहर के बदमाशों से उसका ताल्लुक था। तरह-तरह के लोगों का उसके घर आना-जाना था। वाक़यात की रात लेन-

देन के सवाल पर अभियुक्त और ग्राहकों में तू-तू, मैं-मैं हो गई, मारपीट भी हुई। बाद में बदमाश अभियुक्त की बेटी को उठा कर ले गए। दो दिनों बाद कुमारी मोहिनी की नंगी लाश जयगढ़ के जंगलों में मिली, जो तस्करों और बदमाशों के छिपने का अड्डा है।"

"क्या पोस्टमार्टम किया गया?"

"जी सरकार।"

"क्या कहती है, पोस्टमार्टम रपट।"

"रपट से यह जाहिर होता है कि अभियुक्त की बेटी के साथ बलात्कार हुआ था, लेकिन पहली बार नहीं, क्योंकि रपट में लिखा है कि वह इसकी आदी थी और···"

"बन्द करो यह बकवास। ऐसी घृणित बात बोलते हुए तुम्हारी जीभ क्यों नहीं गलकर गिर जाती, आंखें क्यों नहीं उलट जातीं, तुम्हारा विकृत मस्तिष्क विगलित क्यों नहीं हो जाता। तुम वकील नहीं, वकील के वेश में जल्लाद हो जल्लाद, जिसका पेशा ही गला घोंटना है, कसाई हो कसाई, जिसका धंधा ही खाल उतारना है। सूकर की तरह तुम्हारा स्वभाव ही गंदा खाना और गंदगी फैलाना है। मैंने अच्छी तरह समझ लिया। तुम सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हो। उसी सड़ी-गली लिजलिजी व्यवस्था के गंधाते अंग, जिसमें सत्य और न्याय भ्रष्टाचार और अन्याय के जबड़ों में फंसा तड़फड़ा रहा है। तुम सब मगरमच्छ हो मगरमच्छ, कमजोर मछलियों को चुन-चुन कर निगलने वाले, घड़ियालों की तरह पानी के नीचे से छिपकर टांग खींचने वाले। जानवर से भी गयाबीता है वजूद तुम लोगों का। जानवर की शक्ल से उसका स्वभाव मालूम हो जाता है, लेकिन तुम्हारी इस आदमी की खाल में कौन जानवर छिपा बैठा है, यह किसी को नहीं मालूम। लेकिन एक बात सुन लो, नाटक-नौटंकी वालो नकाबपोशो, तुम्हारा यह नकाब एक न एक दिन जरूर उतरेगा और तब तुम्हारी एक-एक बोटी का पता नहीं चलेगा। ऐसा झंझावात आयेगा, ऐसा तूफान उठेगा कि झूठ, फरेब, अत्याचार, जुर्म और भ्रष्टाचार की नींव पर खड़ी तुम्हारी यह खोखली मीनार बालू के लोंदे की तरह ढह जायेगी और तुम, ये, वो, सभी उसके मलबे के नीचे सदा-सदा के लिए दफन हो जाओगे।

देन के सवाल पर अभियुक्त और ग्राहकों में तू-तू, मैं-मैं हो गई, मारपीट भी हुई। बाद में बदमाश अभियुक्त की बेटी को उठा कर ले गए। दो दिनो बाद कुमारी मोहिनी की नंगी लाश जयगढ के जंगलों में मिली, जो तस्करों और बदमाशो के छिपने का अड्डा है।"

"क्या पोस्टमार्टम किया गया ?"

"जी सरकार।"

"क्या कहती है, पोस्टमार्टम रपट।"

"रपट से यह जाहिर होता है कि अभियुक्त की बेटी के साथ बलात्कार हुआ था, लेकिन पहली बार नहीं, क्योंकि रपट मे लिखा है कि वह इसकी आदी थी और···"

"बन्द करो यह बकवास। ऐसी घृणित बात बोलते हुए तुम्हारी जीभ क्यों नही गलकर गिर जाती, आंखें क्यों नही उलट जाती, तुम्हारा विकृत मस्तिष्क विगलित क्यो नही हो जाता। तुम वकील नहीं, वकील के वेश मे जल्लाद हो जल्लाद, जिसका पेशा ही गला घोंटना है, कसाई हो कसाई, जिसका धंधा ही खाल उतारना है। सूकर की तरह तुम्हारा स्वभाव ही गंदा खाना और गंदगी फैलाना है। मैंने अच्छी तरह समझ लिया। तुम सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हो। उसी सड़ी-गली लिजलिजी व्यवस्था के गधाते अंग, जिसमे सत्य और न्याय भ्रष्टाचार और अन्याय के जबड़ों मे फंसा तड़फड़ा रहा है। तुम सब मगरमच्छ हो मगरमच्छ, कमजोर मछलियों को चुन-चुन कर निगलने वाले, घड़ियालों की तरह पानी के नीचे से छिपकर टांग खींचने वाले। जानवर से भी गयावीता है वजूद तुम लोगों का। जानवर की शक्ल से उसका स्वभाव मालूम हो जाता है, लेकिन तुम्हारी इस आदमी की खाल मे कौन जानवर छिपा बैठा है, यह किसी को नही मालूम। लेकिन एक बात सुन लो, नाटक-नौटंकी वालो नकाबपोशो, तुम्हारा यह नकाब एक न एक दिन जरूर उतरेगा और तब तुम्हारी एक-एक बोटी का पता नही चलेगा। ऐसा झझावात आयेगा, ऐसा तूफान उठेगा कि झूठ, फरेब, अत्याचार, जुर्म और भ्रष्टाचार की नींव पर खड़ी तुम्हारी यह खोखली मीनार बालू के लोंदे की तरह ढह जायेगी और तुम, ये, वो, सभी उसके मलबे के नीचे सदा-सदा के लिए दफन हो जाओगे।

फौजी

कोस-भर जमीन चलने में ही सूरज थक गया। हंफनी छूट गई और टांगें थरथराने लगी। ऊबड़-खाबड़ रास्ते और टेढ़ी-मेढ़ी मेड़ों पर कदम ठीक से नहीं पड़ रहे थे। ढेला-डुक्कुर पर पैर पड़ते ही वह लड़खड़ा जाता था और सिर का बोझ डगमगाकर एक ओर झूल जाता था। बक्से में वजन भी अधिक हो गया था। वह बक्से को कभी कंधे पर तो कभी सिर पर बार-बार बदलता रहता था। कंधे और सिर थकने लगे थे और रीढ़ की हड्डी तड़कने लगी थी। टांगें बेलगाम हो गई थीं। कदम डालो इधर तो पड़ता था उधर। चलने मे पैर थपर-थपर कर रहे थे और कमर तक टांगें हचर-हचर हिल जाती थी। वह मन-ही-मन अपनी हालत पर कुढ़ने लगा। यही शरीर था कि पचास किलो का पिट्ठू बांधे, राइफल लिये, वह मीलों दौड़ जाता था। इतना दमखम था बदन में, कि ऊंचे-से-ऊंचा पहाड़ भी आनन-फानन मे फांदने का हौसला रखता था। आज यही शरीर कंकाल बन गया है, जैसे कब्र से उठकर आ रहा हो। अपना ही चेहरा खुद को भकसावन लग रहा है। चलते समय, हर कदम पर जोड़ों की हड्डियां ठकर-ठकर बज रही हैं। हिम्मत पस्त हो गई तो बगीचे के बाहर बक्सा उतारकर, वह जमीन पर पसर गया।

सहसा जेल की यातनाएं भयावह दु:स्वप्न की तरह उसके दिमाग में उभरने लगी। वह क्षण-भर के लिए आतंकित हो उठा। अतः कांप गया। दुश्मनों पर उसे गुस्सा आने लगा। हरामी जान से मार दिये होते तो टंटा ही खतम हो गया होता, लेकिन कमीनों ने अपंग करके छोड़ दिया, सारी उम्र कोढ़ों की तरह घिसटने के लिए। पता नहीं उसके साथियों का क्या हुआ। हो सकता है, वे भी उसी की तरह घायलावस्था मे दुश्मनों के हाथ

पड़ गये होंगे और सड़ रहे होंगे उनकी जेलो में, या फिर बर्फीली चट्टानों के नीचे आज भी दबी पड़ी होंगी उनकी लाशें। वापस कम्पनी में आने पर भी कुछ पता नहीं चल पाया था, उनका।

कितना खौफनाक था वह दिन। याद आते ही एक ठंडी सिहरन दौड़ गई उसकी हड्डियों में। सियाचीन ग्लेसियर की ऊपरी चौकी से वह अपने दो जवानों के साथ बेस कैंप में वापस लौट रहा था। एकाएक आसमान में अंधेरा छाने लगा। शान्त सोता हिमनद सहसा भड़क उठा और सिसियाती आवारा हवाएं दिशाओं से सिर धुनने लगी। बर्फीला अंधड़ चलने लगा। आकाश से बर्फ के बड़े-बड़े टुकड़े ठांय-ठांय बरसने लगे। उनके चेहरे और बदन बुरी तरह धुन गये। बर्फ की मार से बिलबिलाकर वे तीनों जान बचाने के लिए बेतहाशा भागने लगे। अंधेरे में रास्ता भटक गया। पैर फिसलने से वह हजारों फीट नीचे जा गिरा। जब होश आया तो उसने दुश्मन की सगीनों के बीच अपने को घिरा पाया। फिर पाकिस्तान की जेलों में यातनाओं का जो सिलसिला शुरू हुआ तो अपाहिज करके ही छोड़ा। एक से एक रोंगटे खड़े कर देने वाले हादसों से उसे गुजरना पड़ा।

लाहौर जेल तक तो फिर भी गनीमत थी। शुरू-शुरू में पूछताछ के दौरान मार-पीटकर और मामूली यातना देकर छोड़ दिया था दुश्मनों ने, लेकिन जब अटक के किले में वह गया तब तो बस हर क्षण यही दुआ करता रहा कि किसी तरह मालिक उठा ले इस नरक से। वहां पहुंचते ही दुश्मनों ने एक बीस फीट गहरे सकरे कुएं में उसे डाल दिया, जिसकी गोलाई डेढ़ फीट व्यास की थी। कुएं के ऊपर एक छोटी घण्टी टंगी थी, जिसकी पतली डोर अन्दर-नीचे तक लटक रही थी। उसे बताया गया कि जब दिशा-फराकत महसूस हो, वह डोरी खींचकर घण्टी बजा दिया करे। उसे कुए से बाहर निकाल दिया जायेगा। कुएं में हर समय घुप्प अंधेरा छाया रहता था और उसकी दीवारों की दरारों में बड़े-बड़े पंखों वाले चमगादड़ चिपके रहते थे या अन्दर उड़ा करते थे। कभी-कभी कोई चमगादड़ उसके सिर, चेहरे या बदन से भी टकरा जाता था या आकर चप से चिप जाता था। रात में उनके उड़ने और चीखने का मिलाजुला शोर इतना तेज हो जाता था कि लगता, कुएं में बड़े-बड़े पावर के कई इंजन ही एक साथ हरहरा रहे

होश लौटने पर, उसने देखा, कमरे का दरवाजा खुला है। दो सिपाही उसके मुंह पर पानी छिड़क कर उसे झकझोर रहे हैं। आखें खोलते ही उनमें से एक ने कहा, "देखा, साला काफिर नाटक कर रहा था। कैसे घूर रहा है, उल्लुओं की तरह। छोड़ो-छोड़ो, हट जाओ। एक डोज और छोड़ते है। अभी इसमें काफी दम-खम लगता है।"

"अभी नहीं। साहब के जाने के बाद एक खुराक और दे देंगे। अभी साहब को बुला लाओ। बोलो कैदी ठीक-ठाक और पूरे होशोहवाश में है।"

"पहले फिट कर लें।" दूसरे सिपाही ने कहा और उसको घसीटकर टिकटिकी (शिकंजा) के पास ले गया। उतान करके उसने उसका धड़ टिकटिकी में इस तरह फंसाया कि सिर नीचे झूलता रहा। पहला सिपाही साहब को बुलाने चला गया।

"फोकस।" अन्दर घुसते ही साहब ने कहा।

एक साथ बैसाख-जेठ के असंख्य तपते सूर्य उसके चेहरे पर झूल आये। सिर सुलगने लगा और आखों के गोले कोटरों के बीच उबलने लगे। उसे लगा, सिर भट्ठी में डाल दिया गया है और धू-धू कर जल रहा है। भेजा खौल रहा है। खोपड़ी चटखने लगी है। किसी भी क्षण सिर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। अपने को रोकते-रोकते वह जोरों से चीख उठा और चीखता ही गया। बेदम हो जाने पर सारे सूर्य एक साथ भक से बुझ गये। वह लम्बी-लम्बी सांसे भरने लगा। उसे टिकटिकी से उतारकर उसी जमीन पर बैठा दिया गया।

"नाम?" अधिकारी ने कड़क कर पूछा। वह चुप रहा। अभी भी असख्य तेज किरणे काच के नुकीले टुकड़ों की तरह उसकी आखों में चुभ रही थी।

"नाम बोलो?"

"सूरज।"

"रैंक?"

"हवलदार।"

"रेजिमेन्ट?"

"जाट।"

धीरे समीप आने लगा। अगले कुछ क्षणों मे बैग के झूलने की रफ्तार तेज हो गई और वह उसके बदन के साथ टकराने लगा। उसको लगा, बैग के अन्दर बड़े-बड़े हथौड़े और नुकीले राड फिट किये हुए है, जो बार-बार एक ही स्थान पर चोट कर रहे हैं और चुभ रहे है। झूलते बैग की बढ़ती रफ्तार के साथ उसकी मार भी बढती जा रही थी। उसका सिर, नाक, मुह और शरीर थुर गया और पोर-पोर तड़कने लगा। पास आते हर बैग के साथ उसकी सांसे टग जाती और दिल काप उठता। कुछ समय तक तो वह तड़पता-कराहता रहा, फिर उसका बदन ढीला पड़ गया और जिन्दा लाश पिटती रही।

उसकी आख खुली तो वह एक तहखाने के अन्दर छोटे से कमरे मे जमीन पर पड़ा था। थोड़ी देर बाद प्रकाश के साथ सीढ़िया उतरने की भारी बूटो की आवाज समीप आने लगी। वही दोनो सिपाही उसके सेल के सामने आये और टिन का एक टुटहा मग सामने फेंकते हुए कड़ककर बोले, "रोटी-पानी ले लें। कोई तेरे बाप के नौकर नही हैं कि रात-भर बैठे रहे और तू मजे से सोता रहे। ये ले पकड़।" एक ने दो सूखी रोटिया उसके मुंह पर फेंक दी। दूसरे ने मग सीधा करके पानी उड़ेल दिया और मोटी-मोटी गालियां बकते हुए वापस लौट गये।

काफी देर तक वह उसी स्थिति मे पड़ा रहा। भूख तो थी नही, पर प्यास के कारण गले मे कांटे चुभ रहे थे। रोटिया उसने सेल से बाहर झटक दी, पर पानी का मग उठाकर पीने लगा। ज्यो ही पहला घूट भरा, बदबूदार नमकीन और कड़ुए पानी से जी गिनगिना गया। उसको लगा, पानी की जगह घोड़े की पेशाब दे गये, म्लेच्छ। मुह मे भरा पानी फर्श से उसने बाहर फेंक दिया और उल्टी करके गला साफ करने लगा। उल्टिया करने से आतों मे फिर ऐंठन होने लगी और दर्द से वह तड़पने लगा।

अगले दिन फिर उसे गैस वाले कमरे मे ले जाया गया। इस बार पहले से ही वहा दो अधिकारी मौजूद थे। उन लोगो ने ढेर सारे प्रश्न करने शुरू किये। उत्तर में वह वास्तविक घटना बार-बार दोहराता रहा। अधिकारियों ने आपस मे कुछ खुसुर-फुसुर की और चार नम्बर मे ले जाने का आदेश देकर बाहर निकल गये।

"कंपनी ?"

"बावन ।"

"टास्क ?"

"......"

"टास्क" अधिकारी ने बेंत से कोंचते हुए पूछा ।

"कुछ नही ।"

"ठांय" एक बेंत उसके सिर पर बजा । खोपड़ी झनझना पड़ी । "हराम-जादा, झूठ बोलता है । रिपीट ।" अधिकारी ने आदेश दिया ।

दोनों सिपाहियों ने लपककर उसको पकडा और घसीटकर फिर टिक-टिकी के पास ले जाने लगे ।

"मुझे छोड दो कुत्तो । बता ही तो रहा हूं ।"

"साला गाली बकता है ।" कसकर एक बूट उसके घुटने पर जमाते हुए पहले सिपाही ने कहा ।

"ठीक है, छोड दो । इधर लाओ, मेरे पास ।" अधिकारी ने आदेश दिया ।

"देखो अगर सच-सच बता दोगे तो छोड़ देंगे, वर्ना'''। हां तो बताओ, तुम क्या कर रहे थे, हमारी सीमा में ।"

वह सारी घटना सच-सच बता गया ।

"स्सा-आ-आ-ल्ले पिल्ले, बेवकूफ बना रहा है, कहानी गढ कर । इसे तीन नम्बर में ले जाओ । कोई बहुत घुटा जासूस लगता है ।" कहकर अधिकारी कमरे से बाहर निकल गया । उसके पीछे-पीछे वे दोनों सिपाही भी चले गये । जाते समय उन्होंने दरवाजा बन्द कर दिया ।

थोडी देर में वही दोनों सिपाही लौटे और घसीटकर उसे तीन नम्बर में ले गए । यह कमरा पतला और लम्बा था । बीच-बीच मे खम्भे थे । दीवारो के साथ किस्म-किस्म के लोहे और लकडी के अडगडे, टिकटिकी और औजार रखे थे । उसे एक खम्भे के साथ सटाकर खडा कर दिया गया और हाथ-पैर खम्भे के साथ पीछे की ओर बांध दिये गये । सिर, छाती, पेट और कमर को भी खम्भे के साथ जकड़ दिया गया । उसके सामने छत से एक बोरे जैसा लम्बा बैग लटक रहा था, जिसमें बर्फ कूटकर भरा हुआ था । बटन दबाते ही विशाल बैग उसकी नाक के सामने हवा में झूलने लगा और धीरे-

धीरे समीप आने लगा। अगले कुछ क्षणों मे बैग के झूलने की रफ्तार तेज हो गई और वह उसके बदन के साथ टकराने लगा। उसको लगा, बैग के अन्दर बड़े-बड़े हथौड़े और नुकीले राड फिट किये हुए है, जो बार-बार एक ही स्थान पर चोट कर रहे हैं और चुभ रहे है। झूलते बैग की बढ़ती रफ्तार के साथ उसकी मार भी बढ़ती जा रही थी। उसका सिर, नाक, मुह और शरीर थुर गया और पोर-पोर तड़कने लगा। पास आते हर बैग के साथ उसकी सासे टग जाती और दिल काप उठता। कुछ समय तक तो वह तड़पता-कराहता रहा, फिर उसका बदन ढीला पड़ गया और जिन्दा लाश पिटती रही।

उसकी आख खुली तो वह एक तहखाने के अन्दर छोटे से कमरे मे जमीन पर पड़ा था। थोड़ी देर बाद प्रकाश के साथ सीढिया उतरने की भारी बूटो की आवाज समीप आने लगी। वही दोनो सिपाही उसके सेल के सामने आये और टिन का एक टुटहा मग सामने फेरते हुए कड़ककर बोले, "रोटी-पानी ले ले। कोई तेरे बाप के नौकर नही हैं कि रात-भर बैठे रहें और तू मजे से सोता रहे। ये ले पकड़।" एक ने दो सूखी रोटिया उसके मुह पर फेंक दी। दूसरे ने मग सीधा करके पानी उड़ेल दिया और मोटी-मोटी गालियां बकते हुए वापस लौट गये।

काफी देर तक वह उसी स्थिति मे पड़ा रहा। भूख तो थी नही, पर प्यास के कारण गले में काटे चुभ रहे थे। रोटियां उसने सेल से बाहर झटक दी, पर पानी का मग उठाकर पीने लगा। ज्यो ही पहला घूट भरा, बदबूदार नमकीन और कड़ुए पानी से जी गिनगिना गया। उसको लगा, पानी की जगह घोड़े की पेशाब दे गये, म्लेच्छ। मुह में भरा पानी फर्श से उसने बाहर फेंक दिया और उल्टी करके गला साफ करने लगा। उल्टिया करने से आतो मे फिर ऐंठन होने लगी और दर्द से वह तड़पने लगा।

अगले दिन फिर उसे गैस वाले कमरे मे ले जाया गया। इस बार पहले से ही वहां दो अधिकारी मौजूद थे। उन लोगो ने ढेर सारे प्रश्न करने शुरू किये। उत्तर मे वह वास्तविक घटना बार-बार दोहराता रहा। अधिकारियों ने आपस में कुछ खुसुर-फुसुर की और चार नम्बर मे ले जाने का आदेश देकर बाहर निकल गये।

चार नम्बर मे लोहे की एक ऊंची कुर्सी पर उसे बैठा दिया गया। हाथ कुर्सी के पीछे और धड उसके साथ बांध दिये गये। दोनों पैरों को एक साथ बाधकर कुर्सी की टागो को जोड़ने वाले राड के साथ जकड़ दिया गया और एक बड़ा हीटर जलाकर पैरों के नीचे रख दिया गया। धीरे-धीरे जब ताप असह्य होने लगा, वह हलाल होती गाय की तरह डकारने लगा और छटपटाने लगा, पर कुर्सी ने ऐसा जकड रखा था कि टस से मस नहीं हो पा रहा था। थोड़ी ही देर मे उसके तलुवे सुलगने लगे और कमरे में चिरायध बू भर गई। दोनो सिपाही नाक दबाकर कमरे से बाहर निकल गये। उसको लगा, रगों का खून खलखल-खलखल खौलने लगा है और खोपड़ी के अंदर भेजा भजभज चुर रहा है। हाथों-पैरों मे अकडन होने लगी और पूरा बदन ऐंठ गया। आधे घंटे बाद दोनो आदमियो ने उसे कुर्सी से उतारकर तहखाने में डाल दिया। हर तरह की यातनाएं देने के बाद भी जब उससे कुछ नहीं मिला, तो दुश्मनो ने छोड़ दिया और कुछ दिनो बाद, जेल के काम मे लगा दिया।

कहते हैं, अटक किले की जेल पाकिस्तान की सबसे खौफनाक जेल है, जहां आ जाने के बाद शायद ही कोई साबुत निकल पाता है। यहा आते ही हैं खतरनाक कैदी, जिनसे देश की सुरक्षा या शासकों को खतरा हो। वह देखता था, कर्नल, जनरल, ऊंचे तबके के अफसर और बड़े-बड़े सियासी नेता भी इस जेल में आते थे। जो एक बार आ गया, कुछ दिनों मे या तो अल्ला को प्यारा हो जाता था, या पागल अथवा अपंग होकर ही बाहर निकल पाता था। किले मे एक बड़ा तहखाना था, जिसमे शातिर किस्म के विदेशी और सियासी कैदी रखे जाते थे। पुराने जमाने के शासक अपने विरोधियों को इसी तहखाने में हाथियों के पैरों-तले कुचलवाकर मार डालते थे। कैदियों के सिर कुचलने के लिए बड़े-बड़े शिलाखंड और हाथियों को बांधने के खम्भे अभी भी मौजूद थे।

चार नम्बर की यातना से वह काफी हिल गया था। उसके तलुवों और घुटनों तक की खाल उतर गई थी और उसकी जगह कोढ़ी की तरह बदरंग खाल उग आई थी। सिर के बाल भी उड़ गये थे और जरा-सी धूप लगने पर खोपड़ी खौलने लगती थी।

होश आया तो उसके दोनों पैरों में ऊपर पुट्ठियों के पास पट्टियां बंधी थीं और टांगें असह्य दर्द से फट रही थी। लगता था, पैर काट कर अलग कर दिये गए हैं। घाव कुछ भरने पर, जब वह उठा तो अपने ही पैर मन-मन भर के लग रहे थे और ठीक से जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। डालो इधर तो पड़ते उधर थे, जैसे अलग से टांगों में बांध दिये गये हों। हरामजादों ने थोड़ा नस ही काट दी थी कि वापस जाने पर सेना के काबिल न रह पाये। अब न वह ठीक से उठ-बैठ पाता है और न दौड़ पाता है। बस धीरे-धीरे केवल चल सकता है थपर-थपर, रेंग सकता है, घिसट-घिसटकर।

छूटने पर वापस लौटकर जब वह अपने रेजिमेंट में आया तो अपंग होने के कारण सेवानिवृत्त कर दिया गया। उसे यह भी बताया गया कि दुर्घटना के बाद उसका कुछ अता-पता न मिलने के कारण छ: साल तक इन्तजार करने के बाद, सेना के नियम के अनुसार, उसे मृत घोषित कर दिया गया और उसके परिवार को सूचित कर दिया गया।

दरख्तों की ओट में सूरज छिपने लगा था। दहकता आग का गोला थक कर लाल टिकिया बन गया था। झुंडों में उड़ते परिंदे अपने बसेरों को लौटने लगे थे। रंभाती हुई गाय-भैंसें अपने-अपने चरन-खूंटों पर वापस जा रही थीं। कुछ चरवाहे भैंसों की पीठों पर बैठे कानों में उंगलियां डाले बिरहे की तान अलाप रहे थे। सामने के तालाब में बैठे बगुले उड़कर पेड़ों की टुनगियों पर बैठने लगे थे, लेकिन किलकिली चिरैया अभी भी पेड़ों पर से उड़ कर चिड़िक-चिड़िक करती हुई आती और पानी के ऊपर खूंटा गाड़कर उड़ने लगतीं और छपाक से पानी में कूदकर कोई नन्ही मछली चोंच में दबाये फिर पेड़ पर जाकर बैठ जाती थी। सामने मटर के खेत की मेंड़ पर कौवों की पंचायत बैठी थी। तरह-तरह की आवाजें निकालते हुए वे आपस में बोल-बतिया रहे थे। धीरे-धीरे हरे-भरे खेतों में कुहासे का हल्का धुंध उभरने लगा था, लेकिन ऊपर आकाश में अभी भी झिलमिल लाल चादर फैली थी। कोस-भर जमीन अभी और बाकी थी। वह उठने ही वाला था कि पास से मजदूरों का एक जोड़ा गुजरा। आदमी अकवार में एक लेहनी गहगह फूली सरसों दबाए मटक-मटक कर औरत से बतिया रहा था और औरत आधे गाल से मुस्की काटते हुए और आधे गाल से शरमाते हुए 'हट्ट-

हुदट' कर रही थी और रह-रहकर आदमी की पीठ पर एक धौल जमा देती थी।

सहसा उसकी आंखो में पत्नी का चेहरा कौंध गया । उसके साथ बीते क्षणों की मधुर यादें गुदगुदाने लगी । गौने के बाद एक महीना छुट्टी बाकी रह गई थी, जो पलक झपकते खतम हो गई । जाने वाले दिन, पूरी रात अमरी उसके सीने में मुंह छिपाये सुबकती रही । उसका भी दिल भर आया । आखे पनीली हो उठी । कलेजे में पता नही कैसी-कैसी हूकें उठने लगी । दिल पर पत्थर रख कर, छः महीने के बाद वापस आने का वायदा करके उसने पत्नी को ढाढस बंधाया, लेकिन वह छः महीना कभी नही लौटा । अब तो उसके लिए वह मर ही चुका है । उसकी दुनिया उजड़ चुकी है । खनकती चूड़ियों से भरी कलाइयां अब सूनी होंगी, माथे की बिंदिया और मांग का सिंदूर मिट चुके होगे । फुलना-चोटी वाले सजे-सवरे बाल बिखर कर सूखी घास बन गये होगे । बाजू-बेरवा और पैंजेब भी उतर गये होगे । छीट की साड़ियां और चुनरी मोहाल हो गई होंगी । अब तो बेचारी मोटिया मारकीन पहन कर रणापा काट रही होगी । घर की देहरी पर सुबह-शाम अपने करम पर एक धार रो लेती होगी और हर समय उसको कोसती होगी कि भरी जवानी मे दगा देकर उड़ गया, सुगना की तरह । उसका जीवन तपते रेगिस्तान की तरह वीरान हो गया होगा । प्यासी हिरनी की तरह तड़पती वह भटक रही होगी । एक अन्तहीन मनहूस अंधेरा फैल गया होगा उसके चारों तरफ और कुहुक-कुहुक कर पल-पल काटती होगी वह, उसके बिना । कौन सुनता होगा, उसका दुख-दर्द और बाटता होगा अकेलापन । कैसा उपहास किया नियति ने उसके साथ ।

सहसा उसे लगा अभी भी ड्योढ़ी पर बैठी वह उसकी राह देख रही है । उसकी सूनी आखों मे उसके लौट आने का अभी भी विश्वास है । पत्नी के प्रति उसका जी भर आया । दिल में हूकें उठने लगी । मन बेचैन हो उठा कि कितना जल्दी घर पहुँच कर वह भर ले उसको अपनी गोद में, समा ले अन्दर छाती फाड़ कर । एक बार तो चिहा उठेगी देखकर । विश्वास ही नही होगा उसे अपनी आखों पर, कि स्वप्न देख रही है या सचाई । हहाकर दौड़ आयेगी उसकी बांहों मे, फिर सीने में मुह छिपा कर देर तक

हिचक-हिचक कर रोयेगी, दुख-दर्द कह-कह कर। ढेर सारे उलाहने देगी, रूठने का नाटक करेगी और फिर लुढक जायेगी उसकी गोद में, निढाल होकर।

वह ढेर सारा प्यार उड़ेल देगा अपनी अमरी पर। दुलरायेगा, मनायेगा और अपने हाथों से सुहागरात की दुलहन की तरह सजायेगा। शृंगार की एक-एक चीज चुन-चुन कर पहनायेगा। चलते समय उसने बड़े अरमान से अपनी अमरी के लिए ढेर सारा सामान खरीदा था। जोधपुरी घाघरा, राजस्थानी चुनरी, बूटेदार छीट, झालरदार साटन का साया, चमकौआ चोली, झुनझुन बजने वाले रेशमी फुलना-चोटी, चाद-सितारो वाली चम-चम टिकुली, गमकौआ क्रीम-पाउडर और लाल सैंडिल। एकदम नई-नवेली दुलहन लगेगी अमरी उसकी, सज-धज कर, जैसे अभी-अभी डोली से उतरी हो।

एकाएक वह हुमक कर उठा और कंधे पर बक्सा रखकर हचर-हचर हुमचता हुआ घर की ओर चल दिया। धरती पर भरपूर अंधेरा उतर चुका था, लेकिन उसकी आंखो में एक साथ न जाने कितने बल्ब जल उठे थे और उनकी चकाचौंध रोशनी मे वह सजी-सवरी दुलहन के रूप मे अपनी अमरी के साथ सुहागरात की मधुर यादो मे खो गया था।

वह थपर-थपर चला जा रहा था। गाव समीप आने वाला था। एकाएक स्यारों की हू-हू से रात काप उठी। गांव के कुत्ते सिवानों की ओर मुंह उठा कर भूकने लगे। पहर-भर रात जा चुकी थी। उसका घर गाव के एक छोर पर गड़ही के पास था, जिसके सामने बांस का घना झुरमुट था। पास पहुंचने पर उसने देखा, झुरमुट की जगह अब बांसों के ठूंठ आकाश की ओर मुंह उठाये मौन खड़े थे और उन पर उल्लू बैठे रिरिया रहे थे। उसको अपना घर पहचानने मे कठिनाई नही हुई। खपरैल के घर की जगह खंडहर खडा था। बाहरी दीवारो का कुछ हिस्सा भी ढह गया था। ढही दीवारों की जगह पतई की टाटी खड़ी थी। दरवाजा वही था, जो बन्द था।

"खट'''खट'''खट"। दरवाजे पर पहुंच कर उसने दस्तक दी।

"कौन है ? अन्दर आ जा। बिलारी बन्द नही है। कुकुर-बिलार के डर से वैसे ही भेड़ दिया है।" अन्दर से एक स्त्री की आवाज आई। अमरी की

आवाज इतनी बदल गई है, सुन कर उसे अटपटा लगा। दरवाजा खोल कर वह भीतर घुस गया। अन्दर से भी सब घर गिर चुके थे। पिछली दीवार के साथ एक टुटही झोंपड़ी लटक रही थी। औरत झोंपड़ी के बाहर बैठी मिट्टी के चूल्हे पर लकडी-झुनखुन झोंक कर एक काली डेकची में खदखद-खदखद कुछ पका रही थी। शायद बाजरे का भात था। चार-पांच साल का एक अधनंगा लड़का टांगें फैलाये चूल्हे के पास बैठा आग ताप रहा था। दूसरा बच्चा उसकी गोद में लेटा दूध पी रहा था। यह सब देखकर क्षणभर के लिए उसे अपनी स्मृतियों पर विश्वास नहीं हुआ। सोचा, कहीं गलत घर में तो नहीं घुस आया। चूल्हे से कुछ दूर वह ठिठक गया और बक्सा जमीन पर रखकर हक्का-बक्का-सा औरत को घूरने लगा।

औरत के कपड़े अस्तव्यस्त थे। सिर खुला हुआ और टांगें अधनंगी थीं। उसने झटके से दूध पीते बच्चे को गोद से उतार दिया और अपने आपको समेटते-संभालते हुए खड़ी हो गई। बच्चा जमीन पर पसर कर रोने लगा।

"कौन हो तुम ?" सकपकाते हुए औरत ने पूछा।

"पहचाना नहीं।" अमरी को पहचानते हुए धीरे से उसने कहा। उसकी आवाज अपने को ही अजनबी लग रही थी जैसे किसी गहरे कुए से निकल रही हो।

"तुम···लेकिन तुम तो मर चुके हो। कहीं तुम्हारा भूत तो नहीं है।" औरत भय से कांपने लगी और अपने दोनों बच्चों को बाहों मे समेटते हुए आहिस्ते-आहिस्ते पीछे खिसकने लगी, जैसे जान बचाने के लिए भागने की तैयारी कर रही हो।

"तुम अमरी ही हो न, मेरी···मेरी घरवाली।" पहचानते हुए भी, गोद मे बच्चों को देखकर, अपना शक दूर करने के लिए, उसने हिचकिचाते हुए पूछा।

"नहीं···नहीं···तुम वो नहीं हो···तुम भूत हो भूत। वह तो कब के मर चुके हैं···भूत···भूत।" चीखते हुए औरत बच्चों के साथ दरवाजे की ओर लपकने लगी, ताकि बाहर निकलकर शोर मचा दे।

"सुनो तो सही। मैं भूत नहीं हूं पगली। मैं वही हूं, वही ···

सूरज। डरो नहीं। लेकिन यह तुमने क्या किया?" आगे बढ़कर रास्ता रोकते हुए उसने कहा।

"नहीं···नहीं···हमारा सूरज मर चुका है। तुम उसकी रूह हो, प्रेत हो। मुझे डराने···बरबाद करने के लिए रात में आये हो।" औरत हांफने लगी थी।

"विश्वास मानो अमरी, मैं मरा नहीं हू। मैं क्या करता, मजबूर था। तुम यकीन करो मुझ पर।"

"अगर तुम असली सूरज भी हो तो अब इससे क्या फर्क पडता है। अब तो···अब तो···।"

"यही देखकर तो मुझे ताज्जुब हो रहा है। तुमने यह क्या कर लिया। ऐसी भी जल्दी क्या थी कि इन्तजार करते नहीं बना तुमसे।"

"इन्तजार तो मैं जीवन-भर कर लेती पर कोई आस होती तब तो, और फिर तुम्हारे गाव-घर, समाज ने करने दिया होता तब न। तुमको क्या मालूम, अकेली औरत का क्या हाल होता है, बिना मर्द के। रास्ता निबहना मुश्किल हो गया था गांव में। जिस गली से भी गुजरती, आंखें फाड़े लीलने के लिए तैयार मिलते मनचले। गिद्ध-कौवों की तरह मडराने लगे थे आगे-पीछे लोगबाग। तूने कभी यह भी सोचा कि पेट-तन कैसे चलता होगा। छः साल तक तो बैठी रही तुम्हारे इन्तजार में। आंखें पथरा गईं तुम्हारी राह देखते-देखते। सरकार से भी नोटिस आ गई कि तुम्हारा कोई अता-पता नहीं है। शायद मर गये। बहुत दौड़ी-धूपी, यहां-वहां, पर एक फूटी कौड़ी तक नहीं मिली, तुम्हारे नाम पर। ऊपर से जहां जाओ, वहीं घूरती आंखें, वहीं गिद्ध-कौवे घात लगाये बैठे मिलते। किससे-किससे मांस नोचवाती। मजबूर होकर इस अधम पेट और गुंडे-बदमाशों के चंगुल से बचने के लिए करना पड़ा यह सब।" अमरी सिसकने लगी थी।

"लेकिन अब तो मैं लौट आया हूं।"

"बहुत देर कर दी तुमने। छः महीने का वायदा करके गये और पता नहीं किस जादूगरनी की जाल में फंस कर सुध-बुध खो बैठे। भूल कर भी कभी खबर नहीं ली, पीछे मुड़कर। कहकर दगा किया, मेरे साथ।"

"दगा तो तूने किया, अमरी। काश तू मेरी मजबूरी समझ पाती···।" आवाज में थरथराहट थी।

"जो हो गया सो हो गया। अब तुम मेरे लिए मर चुके हो। भगवान के लिए चले जाओ यहां से। अभी इसी वक्त चले जाओ। अगर कहीं उन्होंने देख लिया तो···।"

"यह कैसी हालत हो गई है तुम्हारी···मुझसे तो···मुझसे तो··· ।"

"मुझे मेरे हाल पर छोड़ दो। मैं जैसी भी हूं, बहुत सुखी हूं, अपने बाल-बच्चों मे। तुम निकल जाओ यहा से।" दरवाजे की ओर इशारा करते हुए ऊंचे स्वर में उसने कहा।

"अमरी मेरी बात तो सुन लो···मैं···मैं··· ।"

"अब सुनने-सुनाने के लिए बचा ही क्या है। बस तुम चले जाओ यहां से, जल्दी से जल्दी। वह आते ही होंगे। तुम अब मेरे लिए मर चुके हो··· मर चुके हो।" धक्का देकर औरत ने उसे बाहर कर दिया और अन्दर से सांकल चढ़ा दी। तिरस्कार और ग्लानि से सूरज तिलमिला उठा, फिर भी वह एक बार अमरी को सचाई बता देना चाहता था। वह जता देना चाहता था कि दगा उसने नहीं, तुमने किया है। वह तो लाचार था, वरना अपना वायदा जरूर पूरा किया होता।

"एक बार···सिर्फ एक बार···तुम मेरी बातें तो सुन लो।" बाहर से दरवाजा पीटते हुए उसने कहा।

"कह दिया न, मेरे लिए तुम मर चुके हो। मेरे ऊपर नहीं, तो इन बच्चो पर तो रहम करो। एक बार फिर से क्यों उजाड़ने पर तुले हो, मेरी बसी-बसाई जिन्दगी।"

थोड़ी देर तक सूरज हारे जुआरी की तरह ठगा-ठगा-सा बन्द दरवाजे को घूरता रहा। उसके अरमान बिखर चुके थे। आहत मन घायल कबूतर की तरह फड़फड़ा रहा था। क्षोभ से उसकी शिराएं तन गईं। खून उबलने लगा। बक्सा उठाकर उसने दरवाजे पर दे मारा। अन्दर का सारा माल-असबाब जमीन पर बिखर गया। उनको रौंदते हुए वह उल्टे पांव लौट गया, जिंदगी के अन्तहीन अंधेरे रास्ते पर।

घात

वह स्टेशन पर उतरा तो सन्नाटा था। न कहीं कोई यात्री दीख रहा था न गिद्ध के डैनों की तरह काली कोट लटकाये टीटी-फीटी। पंजों पर उचक-उचक कर उसने चारों तरफ देखा, सूना-सपाट प्लेटफार्म एक छोर से दूसरे छोर तक पसरा पड़ा था। इक्का-दुक्का आवारा कुत्ते मुह उठाये इधर-उधर फिर रहे थे। बाहर बला की गर्मी थी। उमस से दम घुट रहा था। एकाएक उसकी पीठ की घमौरियां चुनचुनाने लगी। उसने बगल में दबाई बोरे की गठरी नीचे रख दी और पीठ को खभर-खभर खुजलाने लगा। पूरी पीठ भभा उठी, जैसे मिर्च लग गई हो। वह छनछना गया। प्लास्टिक के जूते मे ठुंसा पैर उबल गया था। जूते से पैर निकालते ही ऐसा भभका उठा कि नाक सिकोड़कर उसने बगल में पिच्च से थूक दिया और जूता परे झटक दिया। कल दोपहर को जब वह काशी-दादर एक्सप्रेस से बनारस से चला था, तब से न जूता पैर से निकाला था और न गठरी छोड़ कर पानी-पेशाब के लिए अपनी जगह से उठा था। उसे डर था कि चाई-चोर मार देंगे। घर से चलते समय पडाइन ने चार ठोकवा और एक पाव सत्तू रास्ते के लिए अलग पोटली मे बांध दिया था, वह ज्यो का त्यों बधा पड़ा था। पूरी सफर में टांगें मोड़ कर एक ही बल बैठे-बैठे घुटना अकड़ गया था और कमर पिराने लगी थी। उसने टांगें झटक कर, बाहों को मरोडते हुए, बदन खीच कर जोरो की अगडाई ली। नस-नस पडपड़ा उठी। रात का कुछ अंदाज नही मिल रहा था। आकाश की ओर ताका, तो सतहबा सिर पर खडा था। लगता है, आधी रात होने को है, मन ही मन उसने सोचा। कल सुबह का अन्न-जल मुह मे गया था, सो भी ठीक से खा नही पाया था। चलते समय पड़ाइन और बच्चे रोने-धोने लगे थे, जैसे वह ससुराल गवन जा

रहा हो। ऐसे में कौर कैसे मुंह में पड़ता। आगे की थाली माहुर हो गई थी। बिन खाये ही मुंह धोकर वह आंगन से उठ गया था।

सोचा, खोली पर सब लोग खा-पी कर सो गये होंगे। यहीं गमछा में सत्तू सानकर खा ले, तब चले यहां से। इस दौरान गाड़ी जिधर से आयी थी, उधर को ही वापस चली गई थी। आज गाड़ी ने जो रकत-रोवाइन कर दिया था। इगतपुरी के बाद तो छानल गदही बन गई थी साली, हुच्च-हुच्च कर हर कदम पर किर्र...किर्र...किरिच...किरिच करके रुक जाती थी, जैसे इंजन की हवा ही निकल गई हो। पेट में चूहे कूद रहे थे। पोटली खोलकर उसने गमछे में सत्तू निकाला और लोली बनाकर नल की ओर चल पड़ा। पड़ाइन ने एक चिरकुट में टोरा नमक और एक लाल मिर्च भी गठिया दी थी। वाह! कितना ध्यान रखती हैं पड़ाइन, उसका। मन ही मन वह गद्गद हो उठा था। नल खोलने पर फुस्स से हवा निकली, लेकिन एक बूंद भी पानी नहीं गिरा। शायद खराब होगा। वह दूसरे नल की तरफ गया। पानी वहां भी नहीं था। उसे आश्चर्य हुआ। मामला क्या है। उसने एक बार फिर पूरे स्टेशन पर नजर डाली। सन्नाटा ओढ़े, मरघट की तरह खामोश, स्टेशन भांय-भांय कर रहा था। प्लेटफार्म के किनारे अपनी लाल-लाल आंखें फाड़े सिग्नल प्रहरी की तरह तना खड़ा था, मानो कह रहा हो, खबरदार, इसके आगे बढ़ना मना है। वह वापस गठरी के पास लौट आया और सत्तू पुन: पोटली मे बांधकर गठरी सिर पर उठा ली और जूता पहन कर चल दिया। सोचा, लाइन पार कर बीच से निकल जायेगा, खोली तो पास मे ही है। दो कदम ही चल पाया होगा कि जूता कटहे कुत्ते की तरह काटने लगा। तिलमिला कर उसने जूता निकाल कर हाथ में टाग लिया। गांव जाते समय भी, काटने के कारण, उसने जूता गठरी में बांध लिया था और गांव के गोइडे जाकर ही पैर मे डाला था।

गलियां लांघ कर वह सड़क पर आ गया। सड़क भी सूनी और वीरान थी। चारों तरफ ईंट-पत्थर के टुकड़े, टूटी बोतलें, कांच, बल्ब, ट्यूब लाइट, टिन, बस्तों, उखड़ पलस्तरो के टुकड़े, रद्दी कागज और अधजले कपड़ों के पुलिंदे बिखरे पड़े थे। कुछ जली हुई गाड़ियों, स्कूटरों, साइकिलों के खोखे जगह-जगह कंकाल की तरह खड़े थे। कई जगहो पर सड़क के पत्थर उखड़ गये

थे और मिट्टी, रोरी, डामर के चप्पड़ गड्ढों के इर्द-गिर्द फैले थे। उसने अगल-बगल देखा, कुछ दुकानें जली-उजड़ी खड़ी थी। दुकानों के ऊपर के मकान भी झुलसे लग रहे थे। फुटपाथों पर सोने वालों का कहीं पता नही था। उनकी जगहों पर कुत्ते टागें फैलाये सो रहे थे। चालों और घरों के अन्दर से भी किसी के खोंखने-खंखारने या सुगबुगाने की कोई आहट नही आ रही थी। गलियों और सड़कों पर गर्म हवाएं सायं-सायं चल रही थी। सन्नाटा ऐसा था कि एक कंकडी गिरने पर भी रात चिहुंक उठे। वह हैरत में था कि एकाएक हो क्या गया बंबई को। रात-दिन भागने वाला शहर एकाएक पंगु कैसे हो गया, शोर-शराबों और हंसी-ठहाकों वाली बस्तियां गूंगी कैसे हो गयी, चढ़ती रात के साथ जवान होती बंबई अपाहिज क्यो हो गई। कौन-सा विषधर या प्रेत की छाया छू गई, इस शहर को। किस जादूगर ने मन्तर मार कर सुला दिया गहरी नींद में सबको, या फिर शीतला माई की सेना तो नही टूट पड़ी, हैजा, प्लेग, चेचक लेकर, बस्ती वालों पर। हैरत में दातों-तले अगुली दबाए वह कफन की तरह खामोशी ओढ़े मुर्दा नगर को देखता रह गया।

कही कोई गड़बड़ जरूर है। शायद मौवालियो (गुंडो) ने एक बार फिर लूटा-जलाया है, भैया लोगों की दुकानों-मकानो को। पता नही उसकी चाल का क्या हुआ होगा। उसमें रहने वाले साथी कैसे होगे। वह आशंका से कांप उठा। उसका कलेजा धकधकाने लगा। एक बार तो जी में आया, लौट चले वापस गाव को। जान-परान बचा रहेगा तो कहीं भी मेहनत-मजदूरी करके जी-खा लेगा। पर जाये कैसे, किराया तो है नही, टेंट मे। पड़ाइन का बेरवा बंधक रख कर तो किराया जुटाया था। पीछे घर में बच्चों को खाने को भी कुछ नही रह गया था। यहीं से संगी-साथियो से कुछ ले-देकर भेजेगा तो बच्चों के मुंह अहार [illegible] । उसने मन-[illegible]
तय किया, जब आ ही गया तो वापस न[illegible] देखा
बदा होगा वह तो होगा ही। सत्तू की पो[illegible] ब[illegible]
डालकर गठरी के साथ कस कर बांध
दबा ली, ताकि भागने-पराने की नौबत
मर। ज्यों ही उसने [illegible] करने के [illegible]

तरह कड़कती आवाज आई।

"खबरदार, आगे कदम बढ़ाया तो गोली मार देंगे।" वह लड़खड़ा कर जहां था, वहीं खड़ा हो गया। पास आती भारी बूटों की खट-खट आवाजें सुन कर वह सिहर उठा। क्षण-भर में संगीनें चमकाते हुए खम्-खम् आकर चार सिपाहियों ने चारों ओर से घेर लिया।

"गोली मार दो साले को।" पीछे से हवलदार ने ललकारा।

"लगता है, गोला-बारूद भरा है साला बोरे में। हूल दो हरामी को।" उनमें से एक सिपाही ने संगीन उसके सीने पर भिड़ाते हुए कहा। वह एकदम सकपका गया। बगल की गठरी उसने और कस कर दबा ली और भौंचक्का-सा सिपाहियों का मुंह ताकने लगा।

"अबे हरामखोर भागने की कोशिश कर रहा है।" कहते हुए दूसरे सिपाही ने राइफल का कुंदा उसकी गर्दन पर दे मारा। वह मुंह के बल जमीन पर ढेर हो गया। गठरी दूर जा गिरी। संभल कर उसने उठने की कोशिश की कि पीछे से बूट का एक ठोकर लगा और वह गेंद की तरह उछल कर आगे जा गिरा। उसके बाद चारो ओर से सिपाही फुटबाल खेलते रहे, जब तक वह अधमरा नहीं हो गया। इतने मे एक हथगोला आकर एक सिपाही के पीछे, थोड़ी दूर पर फटा। उसके टुकड़ों की चोट से एक सिपाही जोरों से चीखते हुए जमीन पर फैल गया, जैसे गोली ही लग गई हो। बाकी तीन सिपाही अपने घायल साथी को पीछे छोड़, बिजली की तेजी से भागकर एक दुकान के बारजे के नीचे जा छिपे। उनका साथी सड़क पर गिरा तड़पता रहा।

घायल पांचू में न जाने कहां की शक्ति आ गई। उसने सिर उठाकर इधर-उधर देखा और झटके से उठकर अपनी गठरी समेटते हुए इतनी तेजी से भागा, मानो उसके पीछे पलीता लगा हो और किसी भी क्षण बारूद फट सकता है। उसको जैसे पंख लग गये थे। वह बेतहाशा भागे जा रहा था। मेरबान की गली पार करने पर ही उसने रुककर पीछे देखा था। उसका दम उखड़ गया था और वह हकर-हकर हांफने लगा था। नुक्कड़ पर मुड़ कर फुटपाथ पर पेड़ के छाये में उसने गठरी उतार दी और चोट लगी जगहों को सहला कर देखने-परखने लगा। नाक की जगह लगता था, दर्द

थे और मिट्टी, रोरी, डामर के चप्पड़ गड्ढों के इर्द-गिर्द फैले थे। उसने अगल-बगल देखा, कुछ दुकानें जली-उजड़ी खड़ी थीं। दुकानों के ऊपर के मकान भी झुलसे लग रहे थे। फुटपाथों पर सोने वालों का कहीं पता नहीं था। उनकी जगहों पर कुत्ते टांगें फैलाये सो रहे थे। चालों और घरों के अन्दर से भी किसी के खोंखने-खंखारने या सुगबुगाने की कोई आहट नहीं आ रही थी। गलियों और सड़कों पर गर्म हवाएं सायं-सायं चल रही थीं। सन्नाटा ऐसा था कि एक कंकड़ी गिरने पर भी रात चिहुंक उठे। वह हैरत मे था कि एकाएक हो क्या गया बंबई को। रात-दिन भागने वाला शहर एकाएक पंगु कैसे हो गया, शोर-शराबो और हंसी-ठहाकों वाली बस्तियां गूंगी कैसे हो गयी, चढ़ती रात के साथ जवान होती बंबई अपाहिज क्यों हो गई। कौन-सा विषधर या प्रेत की छाया छू गई, इस शहर को। किस जादूगर ने मन्तर मार कर सुला दिया गहरी नींद में सबको, या फिर शीतला माई की सेना तो नहीं टूट पड़ी, हैजा, प्लेग, चेचक लेकर, बस्ती वालो पर। हैरत में दातों-तले अंगुली दबाए वह कफन की तरह खामोशी ओढ़े मुर्दा नगर को देखता रह गया।

कहीं कोई गड़बड़ जरूर है। शायद मौवालियो (गुंडो) ने एक बार फिर लूटा-जलाया है, भैया लोगों की दुकानों-मकानो को। पता नहीं उसकी चाल का क्या हुआ होगा। उसमें रहने वाले साथी कैसे होंगे। वह आशंका से काप उठा। उसका कलेजा धकधकाने लगा। एक बार तो जी में आया, लौट चले वापस गाव को। जान-परान बचा रहेगा तो कहीं भी मेहनत-मजदूरी करके जी-खा लेगा। पर जाये कैसे, किरावा तो है नहीं, टेंट में। पडाइन का बेरवा बंधक रख कर तो किरावा जुटाया था। पीछे घर में बच्चों को खाने को भी कुछ नहीं रह गया था। यहीं से संगी-साथियों से कुछ ले-देकर भेजेगा तो बच्चों के मुंह अहार लगेगा। उसने मन-ही-मन तय किया, जब आ ही गया तो वापस नहीं जायेगा। देखा जायेगा, जो बदा होगा वह तो होगा ही। सत्तू की पोटली और जूता उसने बोरे के अंदर डालकर गठरी के साथ कस कर बांध लिया और गठरी बगल में ठीक से दबा ली, ताकि भागने-पराने की नौबत आने पर वह भाग सके, टांग झाड़ कर। ज्यों ही उसने सड़क पार करने के लिए आगे कदम बढ़ाया, गोली की

तरह कड़कती आवाज आई।

"खबरदार, आगे कदम बढ़ाया तो गोली मार देंगे।" वह लड़खड़ा कर जहां था, वहीं खड़ा हो गया। पास आती भारी बूटों की खट-खट आवाजें सुन कर वह सिहर उठा। क्षण-भर में संगीनें चमकाते हुए खम्-खम् आकर चार सिपाहियों ने चारों ओर से घेर लिया।

"गोली मार दो साले को।" पीछे से हवलदार ने ललकारा।

"लगता है, गोला-बारूद भरा है साला बोरे में। हूल दो हरामी को।" उनमें से एक सिपाही ने संगीन उसके सीने पर भिड़ाते हुए कहा। वह एकदम सकपका गया। बगल की गठरी उसने और कस कर दबा ली और भौचक्का-सा सिपाहियों का मुंह ताकने लगा।

"अबे हरामखोर भागने की कोशिश कर रहा है।" कहते हुए दूसरे सिपाही ने राइफल का कुंदा उसकी गर्दन पर दे मारा। वह मुंह के बल जमीन पर ढेर हो गया। गठरी दूर जा गिरी। सभल कर उसने उठने की कोशिश की कि पीछे से बूट का एक ठोकर लगा और वह गेंद की तरह उछल कर आगे जा गिरा। उसके बाद चारों ओर से सिपाही फुटबाल खेलते रहे, जब तक वह अधमरा नही हो गया। इतने मे एक हथगोला आकर एक सिपाही के पीछे, थोडी दूर पर फटा। उसके टुकड़ों की चोट से एक सिपाही जोरों से चीखते हुए जमीन पर फैल गया, जैसे गोली ही लग गई हो। बाकी तीन सिपाही अपने घायल साथी को पीछे छोड, बिजली की तेजी से भागकर एक दुकान के बारजे के नीचे जा छिपे। उनका साथी सड़क पर गिरा तड़पता रहा।

घायल पाचू मे न जाने कहा की शक्ति आ गई। उसने सिर उठाकर इधर-उधर देखा और झटके से उठकर अपनी गठरी समेटते हुए इतनी तेजी मे भागा, मानो उसके पीछे पलीता लगा हो और किसी भी क्षण बारूद फट सकता है। उसको जैसे पंख लग गये थे। वह बेतहाशा भागे जा रहा था। मेरबान की गली पार करने पर ही उसने रुककर पीछे देखा था। उसका दम उखड़ गया था और वह हकर-हकर हाफने लगा था। नुक्कड़ पर मुड़ कर फुटपाथ पर पेड़ के छाये मे उसने गठरी उतार दी और चोट लगी जगहों को सहला कर देखने-परखने लगा। नाक की जगह लगता था, दर्द

का गोला उग आया है, जिससे टप-टप खून चू रहा था। ऊपर का होंठ फट गया था। मुंह सूज कर टेढ़ा हो गया था। पीठ, पेट और सीने में भी बूट लगे थे पर कटा-फटा नहीं था। दोनों पैरों में घुटने के नीचे नरिहर की हड्डियां कई जगहों पर आलू की तरह फूल आई थीं। ऊपर की चमड़ी चीथड़ा हो गई थी और खून रिस रहा था। घाव से दर्द की लहरें उठने लगी। आह भरते हुए सिर पकड़ कर वह वहीं बैठ गया और अपने करम पर रोने लगा। 'न जाने किस सईती' घर छोड़ा था। डीह्-देवता, काली-शीतला सबको तो मना लिया था उसने, चलते समय। हां तंगी के कारण इस बार सतनारायण स्वामी की कथा नहीं बंचवा पाया था और न बामन ही खिलाया था। चलते समय मन खटका जरूर था, पर बीच रास्ते में जब कतला तेली मिला तब तो उसका माथा ठनक गया था। एक तो तेली, ऊपर से काना। हो न हो, उस साले कनवा तेली के आगे पड़ने से ही आज यह भोगदंड सिर पड़ा है। चलो बाल-बच्चों के भाग से जान बच गई, यही बहुत है।

शरीर की रग-रग तड़कने लगी थी। उठते समय घुटना और कमर अकड़ गये। वह उठ नहीं पाया और आह भर कर फिर बैठ गया। थोड़ी देर दम लेने के बाद जमीन पर हाथ टेककर धीरे-धीरे उठा, गठरी सिर पर रखी और ज्यों ही चलने को हुआ कि सामने नजर पड़ गई। दो आदमी एक भारी-भरकम बोरा टांगे उधर ही आ रहे थे। डर कर वह पेड़ के तने की आड़ में छिप गया। नुक्कड़ के पास पहुंच कर उन्होंने बोरे का मुंह खोला, उसमें से एक आदमी की लाश निकली और गटर का मुंह खोल कर सिर के बल पूरी लाश अंदर डाल दी। ऊपर से बोरा डाल कर गटर का मुंह बन्द कर दिया और क्षण-भर में छूमन्तर हो गये। वह एकबारगी सिहर उठा। उसका पूरा बदन थरथराने लगा। पेड़ के तने से और सट कर वह बैठ गया और हनुमान चालीसा का पाठ करने लगा। काफी देर तक वह उसी मुद्रा में बैठा रहा। बदन की थरथराहट रुक हीं नहीं रही थी। दर्द फिर से टीसने लगा और शरीर बेकाबू होने लगा, तब वह धीरे से उठा, गठरी संभाली और थोरकदमों से करीब भागता हुआ अपनी खोली के दरवाजे पर जाकर ही रुका।

बाटलीवाला चाल में रमजान मियां की खोली में वह रहता था। रहता क्या था, कहने के लिए एक ठाव था। उसके अलावा गांव और आस-पास के इक्कीस आदमी और रहते थे। खोली के अन्दर एक कील पर उसकी एक धोती और कमीज टंगी रहती थी, जो साल-आध साल पर गांव जाने के वक्त ही वह पहनता था। बाकी खाना-पीना, सोना फुटपाथ पर ही होता था। बरसात के दिनों में दुकानों और मकानों के बारजों के नीचे उठ-बैठ कर रात काटनी पड़ती थी। बाकी साथियों का भी यही हाल था। केवल रमजान मास्टर की एक टुटही चौकी खोली में पड़ी रहती थी। रमजान रहमदिल आदमी थे। गांव-घर के नाते किसी को मना, नहीं करते थे। वह बंबई के किसी प्राइवेट स्कूल में मास्टरी करते थे।

"खट···खट···खट", एक उंगली के नाखून से उसने आहिस्ते से दरवाजा खटखटाया। अन्दर से कोई आहट नहीं आई। खट···खट उसने फिर खटखटाया। कोई संकेत नहीं। इस बार उसने भड़···भड़ दरवाजा भड़भड़ा दिया। अन्दर जैसे खलबली मच गई। कई फुसफुसाती आवाजें आपस में टकराने लगीं। "उठो-उठो सब लोग···लगता है दंगाई यहां भी आ गये ' अब जान नही बचेगी···कुछ सोचो···कुछ करो, मास्टर जी।" सबके प्राण पत्ता पर टंग गये, रुहें कांपने लगीं, बदन पसीना-पसीना हो गया। "ऐसा करो, सब लोग दरवाजे के साथ पीठ टेककर खड़े हो जाओ। दरवाजा ही नहीं खोलेंगे।" उनमें से एक ने कहा। "अबे बुद्धू, एक बम में दरवाजे और सबकी पीठों के चीथड़े उड़ जायेंगे।" दूसरे ने कांपते स्वर मे कहा। "तो क्या···तो क्या करें···? ऐसा करो, दरवाजा खोलकर सब एक साथ भर्र,से भाग जाते हैं··· दौड़ा कर मारने मे कुछ चोटचाट खाकर बच निकलेंगे··· जान तो बची रहेगी।" सब लोग कनकना कर खड़े हो गये और अपनी-अपनी लुंगी-जांघिया कस कर बांधने लगे।

"अरे खोलो भैया दरवाजा, नही पुलिस गोली मार देगी।" घिघियाते हुए पाचू पांडे ने दबे स्वर में कहा।

"अरे, ये तो पाचू पाड़े की आवाज लगती है। खोलो-खोलो दरवाजा।" फेकू ने कहा।

"नहीं, .नही, ऐसी गलती मत करना। साले खूनी लोग बड़े फरेबी

होते हैं। कोई आवाज बदल कर बोल रहा होगा।" मगनू ने हाथ के इशारे से मना करते हुए कहा।

"तुम्हारे पैर पड़ता हूं भैया, खोल दो दरवाजा, मैं पांचू हूं।"

"हरे फेकुआ, अरे पांड़े जी हैं सारे, खोल···खोल जल्दी।" गोपी ने डाटते हुए कहा। पांचू पांड़े को अदर करके फेकू ने फिर बिलारी चढा दी। सबकी जान मे जान लौट आई।

"अरे पाड़े जी आप कैसे आये इस कर्फ्यू में?" रमजान मियां ने आश्चर्य से पूछा।

"कुछ मत पूछो भैया, जान बच गई बस···तुम लोगन से भेंट बदा रहा।" कराहते हुए पाडे ने कहा।

"अरे रे इ का हुआ, तोहार त मुहवे फूल के टेढ होगा है। अरे नाक से खूनो वहा बा··· च-च··· इ त ओठवो··· इ देखो हो लोगन, पांड़े जी का कवन हाल भइल बा··· हे राम··· हे राम··· इ का हो गया हो पाड़े जी' तोहरे साथ।" गोपी ने आश्चर्यमिश्रित दुख से कहा।

"का कहे भैया···आपना भोगडड···जवन लिखा रहा उतो भोगही का न पड़ी।" कहते हुए पांड़े सुबकने लगे।

"क्या कोई मोवाली-सोवाली मिल गये थे?" रमजान ने हमदर्दी से पूछा।

"पुलिस, भैया पुलिस··· मार-मार के चोखा बनाय दिहा··· उ त वम ना फटल होता तो मारी डालते सब, जान से।"

"पुलिस, पुलिस तो सीधे गोली मारती है कर्फ्यू में। भाग्यवान हैं आप। ब्राह्मण समझ कर छोड़ दिया होगा।" रमजान मियां बोले।

"अरे ई गोड़वा तनी देखो, हाय···हाय···बनाइन पूरे वाडेन साले सब।" फेकू ने घाव सहलाते हुए कहा।

खोली के सभी साथी घावों को सहला-सहलाकर हमदर्दी जतलाते रहे और पांचू पांडे रो-रोकर सब हाल बयान करते रहे।

"गलती आपकी है पाड़े जी। जब जानते हैं कि शहर में आग लगी है तब जान-बूझकर क्यों कूदे, आग के समुंदर मे।" रमजान ने तनिक उपा-लंभ से कहा।

"हम्मै क्या मालूम भैया···आह···। गाव मे कोई भोंपू तो लगा ना है···अरे भाई रे एए···की बताई। उ त टेशन पर उतरे तब माथा ठनका···अरे बाप रे वड़ा दर्द होता आ आ। अब करी तका करी···एक बार मन में आया कि लौट चली···अरे मैया रे गोड़वा तड़क रहा बा। फिर सोचा अब हीया आय ही गये तो का लौटी ··किरावो भी तो नाहीं रहा पास मे। पानी···एक घूट पानी पिलाय देव भैया आ आ···कलेजा सूख गया बा···आह।"

सब एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे। खोली मे एक बूंद पानी नही था। जब से कर्फ्यू लगा, नल सूना था। चार दिन से पानी नही आया था चाल में।

"तनिक घउवा शेंक दो भइया, बड़ा पिरात बा···आह···बाकी लोग कहां बाटैं हो रमजान भाई।"

"क्या बतायें पांड़े जी, आग भड़की तो सब अपने-अपने काम पर बाहर गये थे। रात-बिरात तक किसी तरह लुकते-छिपते यही हम पांच लोग लौट पाये। बाकी लोगों का कुछ मालूम नही। मुरारी तो हम लोगो की आंखों के सामने मारा गया। ठेला से कोयला लेकर आ रहा था। नाक के पास पता नही किसने बम मार दिया। उसकी देह चिथड़ा-चिथड़ा हो गई। देखा नही जाता था, वह हाल। बिरजूलाल बाग के पास भेलपूरी वेचते समय मारा गया। दूधवाले तिवारी जी बता रहे थे कि फकीरा को मौवाली सब घेरे थे। क्या हुआ मालूम नही। बाकी लोग का तो बताया ही कि कोई खैर-खबर नही है। जहां भी हो, खुदा खैर करे उनकी।" रमजान का गला भर आया था।

"इ तो छन मे परलय हो गया बड़े मिया। इ सब भया कइसे?" पांड़े ने आश्चर्य से पूछा।

"अब कैसे बतायें पाड़े जो। कोई हमने-आपने तो किया नहीं। पलीता लगाया किसी और ने और भुगत रहे हैं हम गरीब लोग। हम मजदूरो को दलबंदी और मजहब से क्या लेना-देना। हमारा मजहब, धर्म-ईमान तो बस दो जून की रोटी है, कि नही पाड़े जी। कोई झूठ कह रहे हैं।"

"बिलकुल ठीक कहत हो भैया, हम भूखन को त जो रोटी दे उहै

हमरा धरम। लेकिन भैया, इ लुत्ती लगल कइसे ?"

"वही दो दलों के गुडों की लड़ाई, तस्करी, बंदरबाट और कैसे ? एक तरफ बिंदा और दूसरी तरफ काले खां। तस्करी के माल के बंटवारे को लेकर झझट हो गया, बीच मे पुलिस-फुलिस आ गई, पकड़-धकड़ शुरू हुई। पुलिस के चगुल से बचने के लिए लेस दी लुत्ती। एक तरफ से एक हिन्दू काटकर फेंक दिया, दूसरी तरफ से मुसलमान, बस कट मरी भोली जनता उनकी लाशो पर।"

"त भैया, इसमें हम गरीब काहे मारल जात हैं ?"

"तब कौन मारा जायेगा, सडक, फुटपाथ और खुले आकाश मे तो हम रहते है, तो मारा कौन जायेगा, घर के अन्दर वाला, या वे गुडे जिनके पास हर तरह के खतरनाक हरबा-हथियार और गोले-बारूद हैं।"

"पुलिस गुडन के पकडे काहे नही भैया, जब जानता है कि कुल झगड़ा का जड़ इ गुडे हैं ?"

"पकड़ेगी कैसे, हफ्ता नहीं लेना है, लूट में हिस्सा नही बंटाना है। सब चोर हैं साले। अगर दगा-फसाद, चोरी-डकैती न हो तो इनका पेट कैसे भरेगा।"

"हां भैया ठीकै कहत हो। आजकल गांवों मे इहै होत है। लेकिन बड़े मिया, नेता-फेता कुछ नही करते इसको रोकने वास्ते।"

"नेता तो आग में और घी डालने का काम करते है। फूट डालकर मुर्गों की तरह लड़ायेंगे नही तो वोट कैसे मिलेगा। उनका उल्लू सीधा कैसे होगा। अब देख लो बक्शी साहब का। मौका देखकर एकाएक मुसलमानों के रहनुमा बन बैठे। पिछला चुनाव हारने के बाद चार साल पता नही लगा कि किस गजो में गुम हो गये। अब जब चुनाव सामने है तो 'इस्लाम खतरे मे है' का नारा लगाते फिर रहे हैं।"

"एकर मतलब सब बदमाश हैं साले, फिर तो एह देश मे हम गरीबन का रहतब नाहीं भैया।"

इतने में सामने करीम भाई की चाल से किसी औरत के गलमलाने-घिघियाने की ऐसी आवाज आई, जैसे उसको हलाल किया जा रहा हो। फिर उठा-पटक करने, गिरने-भहराने, सीढ़ियों पर धम-धम भागने की आवाजें

आती रहीं। इस दौरान वह औरत रोती-चीखती रही और बचाओ-बचाओ चिल्लाती रही। अगले कुछ ही क्षणों मे भागती हुई वह सड़क पर आ गई और बीच सड़क से चिल्लाती हुई बेतहाशा भागने लगी। उसके कपड़े तार-तार थे, बाल बिखरे हुए और शरीर अस्त-व्यस्त था। भागते समय उसके पैर ठीक से नही पड़े रहे थे। रह-रहकर वह लड़खड़ा जाती थी। सड़क के आमने-सामने के मकानो की खिड़कियां फटाफट खुल गई और लोग सिर निकालकर बाहर झाकने लगे। औरत सबकी तरफ हाथ जोड़-जोड़कर गुहार करती रही, जान बचाने की भीख मागती रही पर किसी का कलेजा नही पिघला। इतने में बिंदा एक और गुडे के साथ नशे में धुत पीछे से दौड़ता हुआ सड़क पर आया और हवा मे दो-तीन गोलिया दाग दी। खटाखट सबकी खिड़किया-दरवाजे बन्द हो गये। बिंदा ने लपककर लड़की को पकड़ लिया और कन्धे पर लादकर वापस चाल में ले गया। लड़की हाथ-पैर पीटती रही, रोती-छटपटाती रही, जान बचाने के लिए अल्लाह और भगवान के नाम पर गुहार करती रही। अन्दर जाने के थोड़ी देर बाद ही उसकी चीखती-चिल्लाती आवाज रात की खामोशी में गुम हो गई।

"च···च···बड़ा जुलुम हो रहा है।"

"यह करीम भाई की इकलौती बेटी है, देख रहे हो न, यही बिंदा बदमाश है, जिसने लड़की को दौड़ाकर पकड़ा। कल से ही करीम भाई का कुछ अता-पता नही है। लगता है, इसने उनको भी कहीं ठिकाने लगा दिया।"

"अरे रमजान भाई···एक बात···एक बात बतावें, जरा इधर आना ···लेकिन हम्मैं कुछ होगा तो नही···हम जब आ रहा था तो नाके के पास दो आदमी करीम भाई की चाल की ओर से ही आ रहे थे···मैं···मैं डर के मारे पेड़ के पीछे छिप गया···नाके पर जो गटर है न, हुआं आकर उन दोनों ने एक आदमी की लाश निकाला और मूड़ के बल गटर में डाल दिया··· बोरा भी उप्पर से फेंक दिया। उसमें से एक तो वही था, जिसने लड़की को पकड़ा था।" पाचू पांड़े एक बार फिर सिहर उठे थे।

"ऐं···क्या आप सच कह रहे हैं···तब तो मेरा सुबहा सही निकला। बिंदा की आंख बहुत दिनों से करीम भाई की चाल पर लगी है। अब इस

लड़की को भी किसी गटर मे डाल देगा और चाल पर कब्जा कर बैठेगा, फिर किसकी हिम्मत है, जो उसके सामने चू-चा करे ?"

"लेकिन भैया कर्फ्यू लगा बा और बीच सड़क पर दउड़ाय के गुंडा मारत हैं और पुलिस बोलता नही।"

"क्या बोलेगी पुलिस। इसीलिए तो दगे करवाये जाते हैं। कर्फ्यू लगाया जाता है कि बन्द दरवाजो के अन्दर लोग लूट सकें, जनता को। सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे है, गुडे पुलिस और नेता सब भोले-भाले लोगो के खून से होली खेलते हैं, अपना उल्लू सीधा करने के लिए।"

"आह···अरे पेटवा मार-मार के हलुआ कै दिये हैं कसाई सब···ठीकै तो कहत हो भैया···कर्फ्यू लगल बा और मव्वाली सब मारत-काटत बाड़ै, लूटत बाड़ै! उप्पर से पुलिसो गरीबों को ही मारत बा···आह···इ कइसा कर्फ्यू।"

"वही तो कह रहा हूं। कर्फ्यू तो वो होता है कि सबकी हवा बन्द। खाना-पीना टट्टी-पेशाब बन्द। क्या मजाल कि कर्फ्यू मे एक मक्खी भी घर से बाहर निकल जाय। एक चूहा भी अपने बिल से बाहर झांक ले। कर्फ्यू तो लगता था अंग्रेज बहादुर के जमाने में, जब हवा भी कापती थी, शहर मे घुसने से। जिस इलाके मे एक सिपाही घूम गया, सांप सूघ जाता था, वहा के लोगों को। पुलिस-दरोगा भी एकदम कड़क रहते थे। क्या मोवाली और क्या नेता, देखते ही गोली मार देते थे, लेकिन आजकल तो कर्फ्यू भी नकली हो गया है, मिलावटी चीजो की तरह। सब नियम-कानून केवल हम गरीबो के वास्ते ही रह गया है। आजादी है न भैया। इसी को कहते है आजादी। कोई किसी का खून कर दे, बहू-बेटी उठा ले, घर फूक दे, गरीबो को राह चलते मार दे, दूकानें लूट ले और सरेआम दिन-दहाड़े चौराहे पर गोली चला दे। आखिर क्यो न करे, वह भी तो आजाद है, सब कुछ करने के लिए। अब तो ऐसा जमाना आ गया है कि इस देश में गरीबो और शरीफो के लिए कोई जगह ही नही रह गई है। मेरी तो आखों से खून चू जाता है, कलेजा फट पड़ता है, जब इस तरह का जुलुम देखता हू···। अब करीम भाई का ही देख लो। पिछले दगे मे उनके बेटे-बहू मारे गए थे, इस दगे मे उनका पूरा परिवार ही स्वाहा कर दिया गुंडो ने, लेकिन बोलने

वाला कौन है।"

दो दिन बाद तूफान थमने पर कर्फ्यू उठ गया। मुर्दा शहर मे सासे लौटने लगी। सड़कों, बाजारो मे सुगबुगाहटे होने लगी, लेकिन लोगों के चेहरो पर दहशत और भय की छाया अभी भी स्पष्ट झलकती थी। एक बार फिर मे अजनबी हो गए चेहरे एक-दूसरे को पहचानने की कोशिश करने लगे। नफरत की लपटो मे झुलस गए रिश्ते फिर मे बुने जाने लगे। गरीब और मजदूर मजहब की दीवारे फादकर अपने-अपने मालिकों के यहा कामो पर आने लगे। धीरे-धीरे जीवन सामान्य होने लगा।

पाचू पाड़े गाव से रसीद मिया के लिए कुछ सौगात लाये थे। रसूलन भाभी ने अपने मिया के लिए सत्तू, दाना, जौ की ढूंढी, कच्चा आम आदि सामानो की एक पोटली पकड़ा दी थी और चलते समय गांव के बाहर काली माई के चौरा तक कुशल-हाल कहते हुए पीछे-पीछे आई थी। उनका इकलौता बेटा रज्जन बीमार था। यह खबर भी देनी थी और रसीद भाई की अमानत भी पहुंचानी थी। रसीद मिया बिस्कुट बनाने वाले करखाने मे काम करते थे।

रसीद भाई से मिलने के लिए पांचू पांड़े बेचैन थे। दंगे में पता नहीं क्या होगा। रसीद के यहा पाडे पहुचे तो वह माल देने कही बाहर गये थे।। उनके कुछ साथी बेकरी मे काम कर रहे थे। मालिक कारखाने मे ही था। उसने पाचू पांड़े का बहुत आवभगत किया, मिठाई मंगाकर पानी पिलाया, चाय-पान कराया और रसीद भाई का सामान एव समाचार ले लिया। इस दौरान उसने अपने कर्मचारियों के कानो में जहर घोल दिया कि जिस इलाके से पाड़े आये.हैं, वहा बिरादरी के बहुत लोग मारे गये हैं। परिंदा अपने आप फंसा है जाल मे, लौटकर नही जाना चाहिए। कम-से-कम एक कुर्बानी तो वे लोग कर ही दें, मजहब के नाम पर। कर्मचारियों में खलबली मच गई। कोई इसके लिए तैयार नही हुआ। काम छोड़कर चुपके से सब पिछले दरवाजे से बाहर निकल गये। यह देखकर मालिक ने खुद यह काम करने की सोच ली और बेकरी दिखाने के बहाने पांचू पांड़े को अन्दर ले गया। इस दौरान वह उनसे मीठी-मीठी बातें करता रहा और रसीद भाई के बीवी-बच्चो का हाल-चाल पूछता रहा। भट्टी के सामने [illegible]

झटके से उसने पीछे हाथ लगाकर पाडे को दहकती भट्ठी मे उलट दिया और भट्ठी का मुह वन्द कर दिया। कुछ क्षणो तक तड़फड़ाने-कूदने, चीखने-चिल्लाने, घिघियाने-कराहने के बाद तेज चिरायध गंध उठने लगी।

ठीक इसी समय रसीद मियां बाहर से लौट आये। तब तक मालिक दरवाजे पर आ गया था। आते ही उसने रसीद को पोटली पकड़ा दी और लडके की बीमारी की सूचना दे दी।

"कौन आया था, गांव से ? कौन लाया यह सब सामान ?"

"कोई पाड़े था, बाहर से ही सामान देकर चला गया, जल्दी मे था।"

"नही, नही, पांचू पाड़े ऐसा नही कर सकते। मुझसे बिना मिले वह जा ही नही सकते। किधर गए वे, कुछ कहा नही ? कारखाना में यह गध कैसी आ रही है, कुछ मास-बांस जलने जैसी ?" रसीद मिया चकपकाये से कारखाने के अन्दर इधर-उधर ताक-झांक करने लगे।

"गंध ? कैसी गध ? अच्छा, अच्छा, यह तो अडो की गंध है। कुछ अंडे सड़ गए थे, वही मैंने डाल दिया भट्ठी मे।"

"अंडे ? अंडे कहा थे ? एक हफ्ता हुआ कारखाने मे एक अडा नही आया, केक वनाना वन्द हो गया। यह आप कैसी बातें कर रहे हैं···लेकिन यह चड़-चड़···भट-भट···सुन-सुन करने की आवाज कैसी आ रही है··· अरे यह धमाका कैसा हुआ ?" रसीद भाई को शक हो गया, वह दौड़कर भट्ठी की ओर गये और जब तक मालिक उन्हें रोकता, भट्ठी का मुंह खोल दिया। अन्दर आदमी का जलता कंकाल देखकर वह एकदम भड़क उठे और वापस दौड़कर कुरेशी साहब का गिरेबान पकडकर झझोरने लगे, "सच-सच बता दो यह किसकी लाश है ? लगता है, तुम लोगो मे पाचू पाड़े को मार डाला। बाकी···बाकी लोग कहा भाग गए ? मैं तुम लोगों को जिन्दा नही छोड़ूगा, कच्चा चबा जाऊंगा। तुमने पांचू पाड़े को नही, मुझे जिबह कर दिया है।" वह बेतहाशा हांफने लगे थे।

"रसीद भाई, मेरी बात सुनो, क्यो एक काफिर के लिए इतना दुखी हो रहे हो। तुम्हें मालूम है, उसके इलाके में हमारी बिरादरी के कितने लोग मारे गए हैं ? हमने भी अल्ला को एक कुर्बानी दे दी तो क्या गुनाह कर दिया। ये लो कुछ पैसे और घर हो आओ, तुम्हारा लड़का बीमार है।"

"भाड में जाओ तुम और तुम्हारी बिरादरी, लड़का मर जाये, मुझे कबूल है, लेकिन पाचू पांड़े के साथ यह घात क्यों किया? मैं कौन मुंह दिखाऊंगा गाव मे···।"

"रसीद भाई तुम तो खामखा लाल-पीले हो रहे हो। तुम्हें तो खुश होना चाहिए कि हमने भी अपने मजहब के लिए कुछ किया।"

"मजहब, कैसा मजहब? क्या मजहब यही सिखाता है? भाई, भाई का गला काट दे, नाहक एक-दूसरे का खून कर दे, किसी की बसी-बसाई गृहस्थी उजाड दे। मैं नही मानता ऐसे मजहब को। हमारा मजहब तो बस इनसानियत है, इनसानियत। हम गरीबो को तुम्हारी मजहब की दीवारें बाट नही सकती हैं। पाचू पाड़े हमारे बाप और सगे भाई से बढ कर थे। तुमको क्या मालूम उस गाव मे हम केवल चार घर मुसलमान हैं, लेकिन आज तक कभी बालबाका नही हुआ किसी का। कितने तूफान आये और चले गये, लेकिन कभी हमें किसी तरह के खतरे का एहसास तक नही हुआ। गैर मजहबी होने के कारण किसी ने कभी हम पर आख तक नही उठाई। हमें एक जगह जनमे, एक ही मिट्टी में खेले-खाये, एक ही आबोहवा मे पले और बड़े हुए और आज मजहब के नाम पर उसी मिट्टी के साथ, वहा के लोगों के साथ गद्दारी करें। यह मुझसे नही होगा। आज तुमने विश्वास का गला घोट कर हमारे वजूद को ललकारा है। हम तुम्हें माफ नही कर सकते। इस खून का बदला लेकर रहेंगे।"

"रसीद, भूलो नही कि तुम मेरे नौकर हो। ज्यादा बकवास करोगे तो तुम्हे भी उठाकर भट्ठी मे फेंक दूगा। बड़े आये हो वजूद और उसूल बघारने।" कुरेशी ने डपटकर कहा। उसको लगा, रसीद आपे से बाहर होता जा रहा है। गुस्से मे बाहर जाकर कही बात फैला दी तो अंजाम बुरा हो सकता है। उन्होने झपटकर रसीद को गले से पकडने की कोशिश की। रसीद छटककर दूर हट गये और कोयला खोदनेवाला नुकीला छड़ उठाकर कुरेशी पर वार कर दिया। दो ही छड़ में कुरेशी जमीन पर ढेर हो गये। रसीद ने उठाया और जिन्दा ही उनको भट्ठी में झोंक दिया। कुरेशी गिड़-गिड़ाते रहे, मजहब की कसमें देते रहे, लेकिन रसीद ने एक नही सुनी। उसने भट्ठी का मुह बन्द किया और तेजी से कारखाने के बाहर निकल गया।

टिकट

बाबूलाल ने दूर से देखा, दफ्तर के सामने, लोगों का मजमा जमा था। मुख्यद्वार के दोनो तरफ, खंभो के ऊपर, मजदूर सभा के झंडे हवा मे लहरा रहे थे। लोगो मे काफी गहमा-गहमी और उत्तेजना थी। बाबूलाल ने सोचा, शायद आज फिर यूनियन वालों को कोई मसाला मिल गया है। जब देखो तब, मामूली-सी बात पर भी ये लोग दफ्तर पर चढ आते है और हाय-हाय करने लगते हैं। उसके कदम तेज-तेज उठने लगे और जल्दी-जल्दी वह भीड के पास पहुंच गया। द्वार पर, बगल में एक मंच लगा था, जिस पर दरी के ऊपर सफेद चादरें बिछी थीं। मंच पर कादरभाई खादी का झकाझक पायजामा-कुर्ता पहने बैठे थे। उनके पास मे बूढे बेंजामिन और बदलूराम भी बैठे थे। पीछे छुटभैये किस्म के तीन और नेता आसन जमाये थे। बदलूराम के गले मे फूलो की मालाएं पड़ी थीं और चेहरा गर्व से दपदप कर रहा था। उसने सोचा, शायद बदलूराम का ही कोई मामला है, क्योकि यूनियन वाले, जिसको हलाल करना होता है, उसे पहले खूब सजाते है, उछालते है, हीरो बनाते हैं और फिर आहिस्ता से नश्तर चलाकर उसके गर्म-गर्म खून में अपनी आस्तीनें रंग कर नेतागिरी चमकाते हैं। लेकिन बदलूराम तो खुद यूनियन का आदमी है, कादरभाई का खासमखास और खैरख्वाह। उसको क्यों बलि का बकरा बनाया जा रहा है, बाबूलाल हैरान था। एक आदमी माइक लगा रहा था, दूसरा लाउडस्पीकर के तार लंबे करके भोंपू फिट कर रहा था। मंच के चारों कोनो पर यूनियन के छोटे-छोटे झंडे लहरा रहे थे। दफ्तर आने वाले बाबू लोग हाथ में खाने का डिब्बा और झोला दबाए उत्सुकता से मुंह उठाए, एक-दूसरे से धरने का कारण जानने की कोशिश कर रहे थे। माइक फिट कर लेने पर एक गिट्ठा-सा आदमी फुदक कर मंच

पर चढ़ गया और "हैलो ··हैलो···टैस्टिग ··टैस्टिग···वन, टू, थ्री, फोर, फाइव फाइव, फोर, थ्री, टू, वन···टैस्टिग टैस्टिग" बोलने लगा। माइक फिट हो जाने पर स्वयंवर में विजयी योद्धा की तरह कादरभाई हुमक कर उठे, मुंह में घुला पान का पीक, गर्दन झटकते हुए मंच के नीचे फच्च से थूका और दोनों हाथ जोड़कर झुक-झुककर भीड़ का अभिवादन किया। आगे आकर उन्होंने तर्जनी से माइक के मुह पर दो बार खट-खट ठोंका और हवा मे हाथ-पैर झटकते हुए, जैसे लडने की मुद्रा में तैयार हो गये।

"इनक्ला ··आ · आ · ब
जिन्दाबा···आ···आ ··द
मजदूर एकता···आ···आ···आ
जिन्दाबा · आ ··आ···द
जो हमसे टकराएगा···आ···आ
चूर-चूर हो जाएगा ··आ · आ
हर जोर जुलुम के फंदे में···ए···एं···एं
संघर्ष हमारा नारा है·· ऐ ऐ · ऐ"

भीड़ की गड़गड़ाहट से प्रशासन भवन थर्रा उठा।

साथियो,

देश आजाद हुआ, लोग आबाद और खुशहाल हुए लेकिन हम गुलाम के गुलाम और कगाल के कंगाल ही बने रहे। मैं आपसे पूछना चाहता हू, क्या आपने अपनी जिंदगी मे कभी, कही, कोई आजादी और खुशहाली नाम की चीज देखी, उसका स्वाद चखा, जाना, छूआ, महसूसा या भोगा है। अरे वही रेलें, वही पटरिया, वही इजन, वही डिब्बे, वही छक्छक, वही घकधक, वही चाबुक, वही कोडे। हम तागे के घोड़ो की तरह तब भी भागते रहे और अब भी भागते हैं। इन रेलगाड़ियों को चलाने मे, इंजनों को दौड़ाने में हमारा बूद-बूंद खून सूखता जाता है, कतरा-कतरा मास चुकता जाता है, हड्डिया घिस जाती है, खालें छिल जाती है, पर हम सी तक नही कर पाते हैं और इन आला अफसरो की चाबुकों की फटकार के डर से चौबीसो घटे बस दौड़ते ही रहते हैं, भागते ही जाते है। रात हो या दिन, सर्दी हो या गर्मी, आंधी हो या तूफान, जंगल हो या पहाड़, नदी हो या कछार, आग-पानी के

फौलादी तूफान को अपनी हथेलियों में संजोये बस हम भागते ही रहते है। करोड़ो लोगों को अपनी पीठों पर लादकर देश के एक कोने से दूसरे कोने तक ढोते हैं, पर बदले में हमें मिलता क्या ?, भुखमरी, कंगाली, दुतकार और फटकार। अंग्रेज चले गए पर हमारी छाती पर मूंग दलने के लिए अपनी औलाद पीछे छोड गये। वही जी० एम०, वही सी० एम० ई०, वही सी० पी० ओ०, वही सी० एस० ओ० की फौजें आज भी हमारे सिर पर डंडे भाजने के लिए बैठी हैं। मैं पूछता हू, आज इनकी क्या जरूरत है··· हा-हा-हा···हां जरूरत है···हमारा खून चूसने के लिए, हमारे सिर पर डंडे बरसाने के लिए और···और कमीशन खाने के लिए, जनता को बेवकूफ बनाने के लिए, देश को लूटने-खसोटने के लिए इनकी बहुत जरूरत है। और साथियो, जब हम इनकी लूट को पकड़ते है, इनके खिलाफ आवाज उठाते हैं, तो हमें फुटबाल के गेंद की तरह लतियाया जाता है, कूड़े-कचरे की तरह झाड़कर कूड़ेदान में फेंक दिया जाता है या कोई मनगढ़ंत चार्ज लगाकर हमारे पेट पर झाड़ू फेर दिया जाता है।

"आज यह बदलूराम के साथ हुआ है, कल आपके साथ होगा, परसों हम सबके साथ होगा। तो भाइयो, मैं पूछता हूं कि कब तक, आखिर कब तक हम यह जलालत की जिंदगी जीते रहेंगे। इसलिए मैं आज आप सबसे अपील करता हूं कि जागो, उठो, अपने हक और ताकत को पहचानो। अब हम यह अत्याचार और अधिक नहीं सह सकते···बहुत···बस बहुत हो चुका अब···।" इतने में भीड़ से कोई चीख पड़ा—

"कादरभाई···ई···ई···ई।

जिंदाबा···क्ष···आ···द

मजदूर एकता···आ···आ···आ

जिंदाबाद···आ···आ···आ · द"

कादरभाई के भाषण में जादू होता है। उनके गले में इतना जोश, वाणी में ओज और स्वर मे लोच है कि जो एक बार सुन लेता है, उनका मुरीद हो जाता है। लच्छेदार भाषा और लचर लहजे में वह उल्टी बात को भी इस तरह पेश करते हैं कि एकदम सीधी और सच्ची लगती है। जोड़-तोड में तो उनका सानी नहीं। अपनी इसी कला के कारण वह पिछले पंद्रह वर्षों

से संगठन में एकछत्र राज कर रहे हैं। जो उनको खुश कर दिया, उसका उल्टा-सीधा, गलत-सही, चाहे जैसा भी काम हो, अधिकारियों की छाती पर चढ़कर करवा देते हैं, कादरभाई।

बाबूलाल ताड़ गया कि बस—वस बदलूराम के तबादले को लेकर ही यह मोर्चा लगाया गया है। वह मन-ही-मन कादरभाई को धिक्कारने लगा। उसी कार्यालय में एक ही छत के नीचे, एक टेबुल से दूसरे टेबुल पर बदल देना भी कोई तबादला होता है, पर चूंकि सवाल बदलूराम का है, इसलिए कादरभाई इतना गला फाड़ रहे हैं। बदलूराम उसी के सेक्शन में काम करता है। उसे सबसे महत्वपूर्ण भर्ती की सीट मिली हुई है। मुंह में पान दबाए, सूट-सफारी डाले वह दिन-भर कैन्टीन या बाहर सामने सड़क पर बनी खोखेनुमा दुकानों में जाल फैलाये, शिकार की तलाश में, घूमता रहता है और बिना कुछ लिए-दिए कोई केस आगे बढ़ाता ही नहीं। अगर किसी मामले में कोई दबाव या ऊपर की पैरवी आई तो उस केस को यूनियन के हाथ पकड़ा देता है और फिर कादरभाई दफ्तर के सामने हाय-हाय शुरू कर देते हैं। वह तो खुल्लम-खुल्ला कहता है कि जब पूरी रेल पहियों पर चलती है तो कागज-फाइल पैदल कैसे चलेंगे। कागज में चांदी का पहिया लगाओ और मनचाही जगह पहुंच जाओ। अभी-अभी हुई खलासियों की भर्ती में उसने पचासों हजार का वारा-न्यारा किया है, लेकिन इस बार उसकी गोटी फंस गई। नये रेल प्रबंधक बहुत सख्त आदमी निकले, एकदम नियम-कानून के पक्के। जब से आये हैं, यूनियन वालों की नाकों में पानी भर रखा है। सोर्स, सिफारिश और खाने-खिलाने वालों से तो बात तक नहीं करते। खलासियों की भर्ती के मामले को लेकर उन्होंने बदलूराम का तबादला पेंशन सेक्शन में कर दिया और उसके खिलाफ जांच का आदेश भी दे दिया। अब आयेगा मजा बच्चू को। बहुत लूटा-खाया है लोगों को। बाबूलाल मन-ही मन खुश हो रहा था।

बदलूराम कादरभाई का खास आदमी है, इसीलिए कोई अधिकारी उस पर हाथ डालने में डरता है। कादरभाई अपने चमचों को चुन-
सभी मौके की जगहों पर रखवाये है; ताकि तरों का सिर्रा भी बना
लोग उसके आगे-पीछे दुम भी हिलाते रहें। लेकिन आज

परेशान है। नये साहब किसी तरह हाथ ही नहीं रखने देते हैं। कादरभाई ने इस मुद्दे पर मरने-मारने की ठान ली। अगर उनका धमपा पिट गया तो सारी नेतागिरी हवा हो जायेगी।

इसी बीच रेल प्रबंधक की गाड़ी दफ्तर की ओर आती दिखाई दी। कादरभाई के इशारे पर भीड़ कनकना कर सजग हो गई। 'इनक्लाब; जिंदाबाद' के नारों से दिशाएं गूंज उठी। कादरभाई के पीछे-पीछे भीड़ हवा में भुजाएं उछाल-उछाल कर नारे लगाने लगी। गाड़ी द्वार के पास पहुंचते ही उत्तेजित भीड़ ने उसे घेर लिया। कादरभाई मंच से आग उगलने लगे। आवेश में भीड़ ने रेल प्रबंधक को गाड़ी से बाहर खींच लिया और धकियाने-मुकियाने लगी। रेल प्रबंधक ठगा रह गये। क्षण-भर के लिए वह सोच नहीं पाये कि यह सब हो क्या रहा है। अपने-आपको संभालते हुए हाथ उठा-उठाकर भीड़ को समझाने की वह नाकाम कोशिश करने लगे, लेकिन भीड़ तो भीड़ होती है, न उसको सुनने के लिए कान होते हैं, न देखने के लिए आंखें और न ही सोचने के लिए दिमाग। उसके कान, आंख, दिमाग तो नेता के पास होते हैं। थोड़ी देर में भीड़ की उत्तेजना जब शांत हुई तो कादर भाई के आदेश पर बड़े साहब को खींचकर जमीन पर धूल में बैठा दिया गया। मंच से एक-एक करके नेताओं का भाषण जारी था। पीछे खड़े बाबूलाल ने मन-ही-मन कहा, 'यह सरासर दादागीरी है, निरी गुंडागर्दी। ऐसा करने का कादरभाई को कोई अधिकार नहीं है। बड़े साहब को फोर्स बुलाकर भुनवा देना चाहिए, इन गुंडों को ठरठर···ठायं···ठायं।' उसे उनकी हालत पर तरस आ रहा था।

अप्रैल, मई का महीना था। दस बजते-बजते तेज पछिवा हवा के साथ गर्म लूएं चलने लगी। धूल का लुक्कड़ उठने लगा। रह-रहकर तेज बवंडर के साथ सड़क की गन्दगी, कचरा, रद्दी, जूठे पत्ते उड-उडकर रेल प्रबन्धक के सिर पर पड़ने लगे। शरीर पसीने से लथपथ हो गया। खोपड़ी सुलगने लगी और आंखें मिचमिचा आई। खल्वाट सिर पर लावा फूटने लगा। गर्मी और प्यास के मारे वह हाफने लगे। उन्होंने इशारे से पानी मांगा। थोड़ी देर में खौलते पानी का एक गिलास उनके सामने रख दिया गया। वह तिल-मिलाकर रह गये। उधर मंच से कादर का विषवमन जारी था। वह

उंगलियों से नीबू का आकार बनाकर, भीड को समझा रहे थे, "आपने नीबू तो देखा होगा, कितना चिकना और खूबसूरत होता है देखने में, लेकिन क्या बिना काटे रस देता है। उसी तरह ये रेल के अफसरान भी चिकने और गोल-मटोल होते हैं। जब तक इन्हें नींबू की तरह काटकर निचोडा नहीं जायेगा, रस नहीं निकलेगा।"

अधिकारी लोग पिछले दरवाजे से दफ्तर आ गये थे और अपने-अपने कमरों की खिडकियां खोल-खोलकर तमाशा देख रहे थे। कुछ अधिकारी मन-ही-मन खुश हो रहे थे। जब से आया है साला, नींद हराम कर रखी है। जो हो रहा है, बहुत अच्छा हो रहा है। थोडी और पडनी चाहिए। अक्ल ठिकाने लग जायेगी बच्चू की। कुछ अधिकारी, जो यूनियन का जलवा झेल चुके थे, आतंकित थे और बडे साहब की हालत पर अश-अश कर रहे थे। बडे साहब को कोई रास्ता नही सूझ रहा था। इस विषय में कादर भाई पहले कई बार उनसे मिल चुके थे। हर बार उन्होने फटकार दिया था। अंत में उन्हे टूटना पडा। धरना खत्म करने पर अंदर बुलाकर कादर भाई से बात करने का उन्होने प्रस्ताव रखा। कादरभाई का तुर्रा और चढ गया। उन्होंने प्रस्ताव ठुकरा दिया और यहीं, मौके पर बदलूराम का आदेश रद्द करने की मांग की। हार कर बड़े साहब ने कार्मिक अधिकारी को बुलवा कर वही आदेश रद्द करवाया।

घेराव विजय-जुलूस में बदल गया। लोगों ने दौडकर बदलूराम को कंधो पर उठा लिया और कादरभाई की जय-जयकार करते हुए सडको पर निकल पड़े।

बाबूलाल का मनोबल टूट गया। वह पराजित महसूस करने लगा। सरेआम चोरी, घूसखोरी और गुण्डागर्दी की जीत ने उसे झकझोरकर रख दिया। टूटा बाबूलाल बगलें झाकने लगा। अब तक वह वफादार और निष्ठावान कर्मचारी की तरह रोज सुबह नौ बजे दफ्तर पहुच जाता था और दिन-भर अपनी कुर्सी से हिल नही पाता था। फाइलों मे सिर गड़ाये माथा चकरा जाता था, आंखें चुंधिया जाती थी। ऊपर से कार्मिक अधिकारी दिन-भर पलीता लगाये रहता था और जरा-जरा-सी गलती पर झिड़क देता था या मेमो पकड़ा देता था। जो तनख्वाह मिलती थी, उसमे महीने-

भर की रोटी भी नही चल पाती थी। हर महीने में कतरब्योंत करनी पड़ती थी। एक पैंट और एक कमीज थी, जिसे शाम को धोकर सुबह पहन लेता था। पैंट की नीचे की मोहरी कट गई थी। जूते का तल्ला घिस कर फट गया था और चलते समय ढेर सारी धूल अंदर भर जाती थी। कितने दिनों से सोच रहा था, पत्नी को एक अच्छी-सी साड़ी खरीद दे, कहीं आने-जाने लायक, पर जुगाड़ नहीं बैठ रहा था। घर मे पिताजी की भी मांग आती रहती थी, सो अलग। तनख्वाह का मोटा हिस्सा तो मकान-मालिक ले लेता था। बडी कोशिश की कि सरकारी मकान ही मिल जाय, पर नेताओं और उनके चमचों के आगे उसकी दाल नही गल पाई। दूसरी तरफ बदलूराम, उससे जूनियर है, शिक्षा-दीक्षा और अनुभव मे भी कम। काम एक टके का नहीं करता। दिन-भर हरामखोरी करता फिरता है। अधिकारियों को ठेंगे पर रखता है। फिर भी उसके पास सरकारी मकान, स्कूटर, रंगीन टी० वी०, सोफासेट और जीवन की सारी सुविधाएं उपलब्ध हैं। सूट-सफारी से नीचे वह उतरता ही नही। जेबें नोटों से हर समय भरी रहती हैं और दस-पांच आदमी हमेशा आगे-पीछे घूमा करते हैं। भ्रष्ट बदलू के खिलाफ कार्रवाई से उसका कलेजा ठंडा जरूर हुआ था और मन-ही-मन सोचकर वह प्रसन्न हो रहा था कि बुरे काम का बुरा ही नतीजा होता है। चोरी एक-न-एक दिन पकड़ी ही जाती है, वहां देर है, अंधेर नहीं। लेकिन आज की घटना ने उसके अंदर जैसे लुत्ती लेस दी। वह सोचने लगा, क्या वह भी बदलूराम नहीं बन सकता, नेता नही हो सकता, कादरभाई से दोस्ती नही गांठ सकता। उसमें क्या कमी है। इन सबसे अधिक पढा-लिखा है, अच्छा बोल सकता है, अच्छी तरह संगठन चला सकता है, चुनाव जीत सकता है, फिर क्यों वह यह अभाव और जलालत की जिन्दगी जी रहा है। वह भी क्यों नहीं यूनियन मे शामिल हो जाता, नेता बन जाता और फिर खुलेआम बदलूराम की तरह हेराफेरी करके मौज-मस्ती की शान से जिंदगी जीता। सोचते हुए वह अपनी सीट पर पहुंचा ही था कि कार्मिक अधिकारी ने, लेट आने के लिए, बुलाकर झाड़ दिया।

जुलूस के बाद बदलूराम सेक्शन मे वापस लौटा तो अभी भी भीड़ के पीछे लगी थी। यहां भी विजय की खुशी में दावतें दी गईं, लड्डू

बांटे गये, मेजें थपथपा कर खुशियां जाहिर की गईं और बदलूराम को माला पहनायी गयी। वह गुमसुम अपनी कुर्सी पर बैठा सब देखता रहा, भीड़ छँटने पर उसने भी जाकर बदलूराम को बधाई दी। सेक्शन में अपने काम से काम रखने वाले बाबूलाल जैसे घामड़बाबू मे यह परिवर्तन बदलूराम को क्षण-भर के लिए अटपटा लगा। मन-ही-मन खुश होते हुए उसने चहक कर बाबूलाल का स्वागत किया और हाथ पकड़कर कैंटीन ले गया। चाय-पानी के दौरान बाबूलाल ने अपने दिल की बात कह दी। बदलूराम की खुशी का ठिकाना नही था। ऐसे पढ़े-लिखे लोगों की उसकी यूनियन मे कमी थी। वह कैंटीन से बाबूलाल को सीधे कादरभाई के पास यूनियन के दफ्तर ले गया। कादरभाई ने गर्मजोशी से उसका स्वागत किया। उस दिन के बाद बाबूलाल का अधिक समय कादरभाई के साथ संगठन के काम मे बीतने लगा। दफ्तर मे वह बदलूराम के नक्शे कदम पर चलने लगा। अब बाबूलाल पहले वाला दब्बू और आज्ञाकारी बाबूलाल नही रह गया। उसके अन्दर एक खूंखार और ढीठ आदमी उभरने लगा, जिसके नाखून बघनखों जैसे तेज थे, बदन के रोयें बर्छों जैसे नुकीले तन गये थे, आखों मे अगारे सुलगने लगे थे और आवाज मे शेर-जैसी दहाड़ आ गई थी।

उधर बडे साहब इस घटना से तिलमिला उठे थे। दफ्तर में आने के बाद वह बेचैनी से कमरे मे चक्कर लगाते रहे। इतनी लंबी नौकरी में उन्हें इस तरह से थूककर चाटना नहीं पड़ा था। उन्हें डर था कि अगर ऊपर के अधिकारियों को मालूम हो गया तो अयोग्य करार देकर ऐसी पटखनी देंगे कि सड़ जायेंगे किसी कोने में पड़े-पडे। इस दौरान उनके चेहरे की रंगत पढने के लिए अधिकारी उनके कमरे मे आते-जाते रहे, पर वह गंभीर बने रहे। उन्हे शक था कि इस षड्यंत्र मे इन अधिकारियो का भी हाथ हो सकता है। शायद सब मिलकर उन्हें उखाड़ना चाहते हैं। उन्होंने निश्चय किया कि जोड़-तोड और कल-बल-छल से एक-एक करके इनसे निपटना ठीक रहेगा। मन-ही-मन उन्होंने व्यूह रचना तैयार कर ली और अघोषित युद्ध शुरू कर दिया।

कादरभाई के पंख कुतरने के लिए उन्होने बदलूराम को बढावा देने का निश्चय किया। कुछ दिन बाद बदलूराम को अकेले उन्होंने अपने कमरे

में बुलवाया। आने पर उठकर तपाक से हाथ मिलाया, चाय पिलाई और बातचीत के दौरान कह दिया कि अपनी समस्या लेकर उसे स्वय उनके पास आना चाहिए था। वह आदेश रद्द कर दिये होते। ऐसी मामूली बात के लिए दूसरों के हाथ की कठपुतली बनने की क्या जरूरत थी। वह उसे अच्छी तरह जानते हैं। असल में आधुनिक प्रबन्ध मे उस जैसे पढ़े-लिखे और प्रगतिशील विचारो वाले मजदूर नेताओं की आवश्यकता है। कादर भाई जैसे दकियानूसी और पुरातनवादी नेताओ से आजकल के मजदूरों के हितों की रक्षा नही हो सकती। आज नये प्रबन्ध और नई व्यवस्था के अन्तर्गत सब कुछ बडी तेजी से बदल रहा है। जमाना इक्कीसवी सदी में जा रहा है। मजदूर सगठनों और नेताओं में भी समय के अनुसार बदलाव आना चाहिए। यूनियन का नेतृत्व उसके जैसे शिक्षित नौजवानों को करना चाहिए। चलते-चलते उन्होने सकेत कर दिया कि भविष्य में कर्मचारियों के किसी भी मामले को लेकर वह सीधे उनके पास आ सकता है। कादरभाई को बीच में लाने की कोई आवश्यकता नही है।

बडे साहब की बातों का बदलूराम पर जादुई असर हुआ। उनके कमरे मे निकला तो उसका पैर सातवें आसमान पर पड रहा था। कादरभाई उसके सामने बौना नजर आ रहे थे। उसके बाद मजदूरों का जो काम लेकर वह बडे साहब के पास गया, उन्होंने कर दिया। उसकी साख और लोकप्रियता बढने लगी। दूसरी तरफ कादरभाई जिस काम मे हाथ डालते, वही उल्टा हो जाता। छोटे-मोटे और सही काम भी वह नही करवा पाते थे। धीरे-धीरे लोग उनका साथ छोडने लगे और बदलूराम के इर्द-गिर्द मँडराने लगे। कादरभाई को बदलूराम का यह बदलाव अटपटा लगा। कई बार इसको लेकर तू-तू मैं-मैं भी हो गई। उनको अपने पैरों-तले मे जमीन खिसकती नजर आने लगी। कादरभाई अन्दर-ही-अन्दर बदलूराम को काटने की योजना बनाने लगे और उसकी जगह बाबूलाल को बढावा देने लगे। इधर बडे साहब की मेहरबानी से बदलूराम की गुड्डी चढती गई। वह मजदूर सभा का मडल सैक्रेटरी बनने का ख्वाब देखने लगा, लेकिन कादरभाई रास्ते मे रोडा थे। जब तक कादरभाई बीच से हटते नही, उसका मार्ग प्रशस्त नही हो सकता। वह कादरभाई को हटाने की

ताक में लग गया। दोनों में उठा-पटक का शीतयुद्ध शुरू हो गया। बड़े साहब खुश थे।

संगठन का चुनाव समीप था। टिकट को लेकर कादरभाई और बदलूराम में गुत्थमगुत्थी शुरू हो गई। कादरभाई एक निशाने से दो शिकार करना चाहते थे। शाखा मंत्री का टिकट बाबूलाल को देकर, बदलूराम का वह पत्ता साफ कर देना चाहते थे और बाबूलाल को अपना आदमी भी बना लेना चाहते थे। उधर बदलूराम कादरभाई को रास्ते से हटाकर स्वयं मंडल सेक्रेटरी बनना चाहता था और बाबूलाल के भी पंख कुतर देना चाहता था। बाबूलाल टिकट के लिए कादरभाई के तलुए चाट रहा था। कादरभाई ने टिकट देने का वायदा भी कर दिया था। कादरभाई के अहसान से वह दब गया था। उसने उनको खुश करने के लिए अपने घर पर दावत दी। उसका लक्ष्य तो टिकट लेना था, जिसके लिए वह कुछ भी करने को तैयार था।

दावत मे मुर्ग-मुसल्लम के साथ बाबूलाल ने पीने-पिलाने का भी इतजाम किया था। शाम को आठ बजे के करीब कादरभाई के आते ही बोतल खुल गई और भुने मास के साथ जाम छलकने लगा। बाबूलाल ने कभी शराब छुई तक नही थी। दूसरे पेग मे ही उसको चढ़ने लगी। लेकिन कादरभाई का साथ देने के लिए वह पेग पर पेग चढ़ाता गया। जाम के बाद जब वह खाने पर बैठा तो होशोहवास गुम हो चुका था। नशे मे शरीर लरजने लगा था। बेहोशी के आलम मे वह इतना खो गया कि वही थाली मे ही अललल उल्टी करने लगा। अन्दर की सारी शराब, मुर्गा, चावल, रोटी के टुकड़े फर्श पर चारो तरफ बिखर गये। उल्टी करते-करते बाबूलाल लोट-पोट हो गया। कै मे उसका शरीर सन गया। कपड़े लथपथ हो गये। कादर भाई अपनी थाली छोड़कर उठ गये। उसकी पत्नी ने तत्काल कादरभाई के लिए कमरे मे फिर से दूसरी थाली लगाई। खाने के दौरान कादरभाई उसकी पत्नी से हंसी-मजाक करते रहे और चुटकिया लेते रहे। इसे औपचारिकता समझकर बीना हस-हसकर जवाब देती रही, लेकिन कादरभाई की आखो की चमक देखकर वह सहम जाती थी। उनकी नशीली आखों में किसी वहशी जानवर का खूंखार चेहरा झलक रहा था। भोजन के बाद

हाथ-मुह धोकर जाने के बजाय कादरभाई उसी कमरे मे बैठ गये। बीना ने सोचा शायद दस-पाच मिनट मे चले जाये। ज्यो ही वह पान का बीड़ा लेकर उनके पास गई, वह अपने पर उतर आए और लपक कर दरवाजे की कुडी अदर से चढा दी। वह प्रतिरोध करती रही, हाथ-पैर पीटती रही पर बदर के पजे मे गिरफ्तार बुलबुल की तरह फड़फडाकर रह गई। बन्द कमरे मे बर्बर कसाई ने असहाय गऊ को हलाल कर दिया।

भोर मे करीब तीन बजे के लगभग जब ठंड लगने लगी तो बाबूलाल का नशा टूटा। अपने आपको ऐसी हालत मे देखकर वह हैरान रह गया। पूरे शरीर और कपड़ो से कै की बू आ रही थी। उसकी समझ मे नही आया कि यह सब हो कैसे गया। वह हडबड़ाकर उठा, बाथरूम गया, कपड़े बदले और बाहर निकलकर देखा तो आगन का दरवाजा खुला था। दोनो कमरो के दरवाजे भी खुले हुए थे। पलंग पर पत्नी औंधे मुह पड़ी थी। उसे पत्नी पर गुस्सा आ गया। इसने जगाया तक नही। पता नहीं कादरभाई खाना खाकर गए या वैसे ही बेचारे भूखे पेट लौट गये। वह पत्नी के पास जाकर झिझोड कर जगाने लगा। बीना को रात-भर नीद नही आई थी। पलंग पर पडी-पडी वह अपनी लुटी अस्मत पर बिलखती रही थी। अभी भी वह जगी हुई थी, लेकिन मारे क्षोभ और ग्लानि के कुछ बोल नही रही थी।

बाबूलाल पत्नी को झकझोरता रहा, आवाज देता रहा, उसके हाथ, पैर, सिर पकड़कर हिलाता रहा, पर वह आखे बन्द किए मुर्दे की तरह निर्जीव पड़ी रही। तंग आकर उसने कमीनी, जाहिल, गंवार, मूर्ख, अनपढ सब कुछ कह डाला पर बीना मे कोई हरकत नही हुई। रह-रहकर बाबूलाल को एक ही चिन्ता खाए जा रही थी कि यदि कादरभाई नाराज होकर चले गये होंगे तो टिकट नहीं मिलेगा। किसी भी तरह जब बीना मे कोई हरकत नही हुई तो मारे क्रोध में उसने पलग उलट दी। बीना जमीन पर लुढक गई लेकिन फिर भी उसमे कोई हरकत नही हुई। औंधे मुह वह पसरी पड़ी रही। उसने एक बाल्टी पानी लाकर उसके सिर पर उड़ेल दिया, फिर भी उसने सी तक नही की। बाबूलाल का पारा और चढ गया। तड़-तड़-तड़ चार-पांच झापड़ उसने पत्नी के मुंह पर जड़ दिये और सिर के बाल पकड़

कर, कमरे में कई चक्कर घमीट कर लात-घूसों से हलुआ बना दिया और तैश में पैर पटकता हुआ दूसरे कमरे में जाकर सो गया।

एक दिन, दो दिन, तीन दिन बीत गये। बीना ऊपर से गुमसुम बनी रही लेकिन अन्दर ही अन्दर सुलगती रही। उसके अन्दर ऐसी आग लगी थी, जो न धुआं छोड़ती थी न लपटें उगलती थी पर वह जलकर खाक हुई जा रही थी। दिल हाहाकार कर रहा था। जब तक भेड़िये कादर के बोटी-बोटी नहीं नोच लेगी, मन को चैन नहीं मिलेगा। उसकी विचित्र हालत देखकर बाबूलाल को लगा, शायद उसके शराब पीने से वह कहीं अन्दर तक बहुत आहत हो गई है। उस रात उसने जो मारपीट की थी उसके लिए भी वह शर्मिन्दा था। भूखी-प्यासी पत्नी का उदास चेहरा देख कर उसका जी भर आया। दिल पिघल उठा। उसे अपने व्यवहार प पश्चात्ताप होने लगा। पत्नी को उसने बाहों में भर लिया और रुंधे गले ं माफी मागने लगा। पति का प्यार-भरा स्पर्श पाकर बीना का बाध टूट गय और अन्दर की आग भाप बनकर फूट पड़ी। काफी देर तक पति के सी में मुंह छिपाए वह सिसकती-हिचकती रही। दिल का बोझ कुछ हलका ह गया पर कंठ के स्वर अभी भी पता नहीं किस कुएं में डूबे थे। बाबूलाल भ भावुक हो उठा। उसने वायदा किया कि अब वह कभी भी शराब न पियेगा और न ही शराबियों की सगत करेगा। बीती हुई घटना को ए हादसा समझकर बीना भूल जाना चाहती थी। इस सम्बन्ध में उसने प को आभास तक नहीं होने दिया। धीरे-धीरे सब सामान्य हो गया। इ बीच वह पति को चुनाव लड़ने और नेतागिरी करने से बरजती रही औ कसमें देती रही। पर बाबूलाल चुनाव लड़ने पर आमादा था। कादरभा का जब से साथ पकड़ा था, उसकी पूछ बढ़ गई थी। दस-पाच आदमी आ पीछे घूमने लगे थे। बदली हुई जिन्दगी उसे काफी चटपटी और रसद लग रही थी। काम-धन्धा टके का नहीं, बस जबान चलाओ और मौ उड़ाओ।

कादरभाई बाबूलाल से खुश थे। टिकट बाटने के लिए संगठन की मडल समिति की बैठक होने वाली थी। बाबूलाल ने इस मौके पर एक बार फिर कादरभाई को घर पर बुलाया। बदलूराम के बढ़ते प्रभाव से बाबूलाल

आतंकित था और उसे नाखुश नहीं करना चाहता था। इस बार वह उसे भी बुलाना चाहता था, पर कादरभाई से कहने की हिम्मत नहीं पड़ रही थी। घुमा-फिराकर जब उसने अपनी बात कही तो एक बार तो कादरभाई भड़क उठे, पर तुरन्त ही कुछ सोचते हुए बोले, "ठीक—ठीक है, बुला लो उसको भी। अपना ही यार है।" उन्होंने सोचा वहीं पीने-पिलाने के दौरान कुछ दे देंगे। साला कटाल कट जायेगा। फंसे-फसायेगा तो बाबूलाल। वह तो टगरी झाड़कर निकल जायेंगे। इससे अच्छा मौका नहीं आयेगा। ठीक समय पर दोनों आ गये। न चाहते हुए भी बीना को सब तैयारी करनी पड़ी।

पीने-पिलाने के बाद खाना शुरू हुआ। उस दिन की तरह आज भी बाबूलाल को चढ़ गई था। दो-चार कौर खाने के बाद ही वह टन्न बोल गया और वहीं चटाई पर लुढ़क गया। बीना सन्न रह गई। उसके मन में चोर कूदने लगा कि कहीं जान-बूझकर तो इन्होंने नाटक नहीं किया है। क्या टिकट के लिए वह इतना गिर गये हैं ? क्या इसीलिए आज फिर इस राक्षस को बुलाया है ? उसने मन-ही-मन ठान लिया कि चाहे कुछ भी हो, उनकी नेतागीरी रहे या जाये, टिकट मिले या न मिले, अगर आज इस म्लेच्छ ने बदतमीजी की तो चीरकर रख देगी। इस जलालत-भरी जिंदगी से तो मर जाना बेहतर है, लेकिन बदलूराम के रहने से उसने सोचा, शायद आज बदतमीजी पर न उतरे।

खाना खाते समय, उस दिन की तरह, आज भी कादर ने बोली-ठोली शुरू की पर बीना ठंडी बनी रही। बीना का बदला रुख देखकर कादर ने सोचा, शायद बदलूराम के रहने से शरमा रही है। देहाती है न। दो-चार बार आने-जाने से खुल जायेगी। अंगुलियां चाट-चाटकर वह एक-एक चीज की तारीफ करते रहे और बेबात की बात छेड़कर चुहलबाजी करते रहे, पर बीना आंचल समेटे, नजरें झुकाए सिकुड़ी-सिमटी रही। उसके अंदर की आग फिर सुलगने लगी थी। बदलूराम कादरभाई की हरकतों से पूरी तरह वाकिफ था। इससे पहले कई जगहों पर दोनों एक ही थाली में खा चुके थे। बदलूराम ने सोचा, यह अच्छा मौका है, ज्यों ही कादरभाई दरवाजा बन्द करें, बाबूलाल को भड़का कर यहीं खत्म करवा दिया जाय। एक ही गोली

में दोनों शिकार हो जायेंगे।

खाना खत्म करके नशे में धुत्त कादरभाई उसी दिन की तरह कमरे में जाकर बैठ गये। खरिका ढूंढ़ने के बहाने बदलूराम आंगन से बाहर निकल गया। बीना दूसरे कमरे में चली गई। कुछ क्षण इतजार के बाद कादरभाई ने उसके कमरे मे घुसकर सिटकनी लगा दी और बीना पर टूट पड़े। बीना पहले से सजग थी। उसने कड़ा प्रतिरोध किया। हाथा-पाई और उठा-पटक होने लगी। बदलूराम लपककर अन्दर आ गया। बाबूलाल को उसने झकझोर कर उठाया और कमरे की ओर इशारा कर दिया। बाबूलाल का खून खौल उठा। क्रोध से वह पागल हो गया। बदलूराम ने जेब से पिस्तौल निकाली और बाबूलाल को पकड़ा दी। जब से कादरभाई से अन्दर-अन्दर चलने लगी थी, तभी से वह बराबर अपने पास हथियार रखता था। उबलता बाबूलाल दौड़कर दरवाजा पीटने लगा। कादरभाई सहम गये। उनको इसकी उम्मीद नहीं थी। दरवाजा खोलकर, बात बनाते हुए, ज्यों ही उन्होंने एक कदम बाहर रखा, 'धाय' की आवाज के साथ गोली उनके सीने से पार हो गई और कटे पेड़ की तरह कादरभाई ढह गये।

नाद

गली से निकलकर जब रिक्शा
राहत की सांस ली। गली के खड़जे
खच कर रही थी, जिससे पूरा बदन ह
उठने लगी और जी मितलाने लगा।
झुंझला उठा। एक बार तो मन में अ
कहीं दर्द बढ़ गया तो फजीहत हो ज
सिरफिरे होते है। जनानी सवारी f
सड़क पर आकर उसने गिड़गिड़ाते
हांकना। तबीयत कुछ नासाज…"
में बैठी रेहाना की ओर भेदभरी नज
बी तिलमिला उठी। परले दर्जे का ह

छीट की लुंगी और कालीघाट
बांधे और दाहिने हाथ की कलाई
किसी फिल्मी हीरो से कम नहीं स
चिपोड़कर उसने देवानन्द कट ककुर
करता हुआ एकदम चमचमाता रखर
बन गया। सीट से कमर उठाये,
फिल्मी गीत गुनगुनाते, वह हवा से
पर छरछर उछलने लगा और रास्ते
रिक्शा धचाक-धचाक कूदने लगा।
गई। लगा, रिक्शा अब लड़ा, तब
बदन दलदल हिलने और हिचकोले

उन सड़क पर आ गया, तब रसूलन बी ने
पर रिक्शे की पहिया हच-हच, खच-
चर-हचर हिल रहा था। पेट में हड़बड़ी
रिक्शे वाले पर रसूलन बी का मिजाज
गया, उतरकर पैदल ही चली जाय।
येगी। ये मुहझौंसे रिक्शेवाले भी बड़े
मल गई, तो अफलातून बन जाते है।
हुए कहा, "भैया, रिक्शा जरा धीमे
रक्शेवाले ने पीछे मुड़कर उसके बगल
रों से देखा और मुस्करा दिया। रसूलन
फंगा लगता है, हरामी।
की गजी पहने, गले में लाल रूमाल
काला गडा लपेटे लफू अपने आपको
झ रहा था। सिर पर ढेर सारा तेल
काढ रखी था। रिक्शा भी लकलक
था, वह। सड़क मिलते ही वह पखेरू
नों पैडलों पर झूमते-लहराते, कोई
बातें करने लगा। रिक्शे का टायर सड़क
मे ऊंचा-नीचा गड्ढा-गुच्ची पड़ने पर
रसूलन बी की जान हथेली पर आ
ड़ा, इधर टकराया उधर टकराया।
ाने से पेट का दर्द बढ़ गया।

तमन्ना है कि कम-से-कम एक लौंडा हो जाय। कोई वारिस तो चाहिए ही, खानदान का चिराग रोशन रखने के लिए। लेकिन वह तो चार में ही बनाइन निचुड़ गई। शरीर खोखला हो गया, इसी उमर में। यह भी कोई जिंदगी है, हर समय मुर्गियों की तरह अंडे देते, रहो और फिर चूजे चराते रहो। जी फेवा हो जाता है, दिन-भर चार-चार बच्चों की चरवाही और गू-मूत करते-करते। ऊपर से रोज उनकी भी तिमारदारी करो। जरा भी नहीं सोचते कि किस हालत में है। नस-नस दूह लेते है, बोटी-बोटी तराश देते है, कसाइयों की तरह, भेड़-बकरी समझकर। रहम और मोरोवत नाम की तो चीज ही नही है, उनके अंदर। वह तो ऊब गई है, इस जिंदगी से। समझ में नही आता कैसे निजात पाये। अस्पताल में भी डाकदरनी देखते ही कटकटाने लगती है। हर बार कहती है, नसबंदी करवा ले, ये लगवा ले, वो लगवा ले। वह कैसे समझाये कि उसका बस चले तो वह सब कुछ करवा ले, लेकिन वो माने तब न। कई बार डाकदरनी की बात कही, सोते-बैठते भी समझाया, पर बात शुरू करते ही मरकहा बैल की तरह फुकारने लगते है और डाकदरनी को उल्टी-सीधी बकने लगते है।

सुबह नौ-साढ़े नौ का वक्त था। दुकानें खुल गई थी। बाजार लग गये थे। सड़कों पर गहमा-गहमी और भीड़ थी। लफू भीड़ को बचाता, रिक्शा दायें-बायें काटता, घटी टनटनाता हुआ मस्ती में झूमता तेजी से चला जा रहा था। हमीद बाजार में करीम होटल के सामने पहुचते-पहुचते अचानक सामने आई एक नन्ही स्कूली लड़की को बचाने के लिए ज्यों ही उसने रिक्शा दाहिनी ओर काटा, तेज रफ्तार से आती हुई एक मोटर साइकिल ने पीछे से धड़ाम से टक्कर मारी। रसूलन बी गेंद की तरह उछल कर बीच सड़क पर जा गिरी। रिक्शा उलट गया। रेहाना रिक्शे के नीच दब गई। रिक्शा-वाला छटक कर दूर जा गिरा। मोटर साइकिल भी दाहिनी तरफ उलट गई। उसका सवार एक नौजवान छोकरा था। वह सरकस के खिलाड़ी की तरह उछलकर बाल-बाल बच गया। रिक्शे की अगली और पीछे की दाहिनी पहिया मुड़तुड़ गई। रसूलन बी बीच सड़क पर फैली कुछ क्षण तड़पकर ठंडी पड़ गई। बुर्का घिसटकर कई जगहों से फट गया था और कपड़े अस्तव्यस्त हो गए थे। मुह के बल गिरने से चेहरा धुनकर छिल गया था और छिली

जगहों एव नाक से खून बहने लगा था। पेट में गहरी चोट लगी थी और खून जाने लगा था। उसको गश आ गया था।

देखते-देखते भीड जमा हो गई। सडक के दोनो ओर सवारी गाडियां रुक गई। साइकिलों, रिक्शों, कारो और बसों के भोंपुओं की मिली-जुली चीख से कुहराम मच गया। काफी दूरी तक ठकाठक जाम लग गया। कुछ लोगों ने दौडकर रिक्शा पलट दिया और नीचे दबी रेहाना को निकालकर सड़क के किनारे ले आये। उसे मामूली खरोंचे आई थी, लेकिन घबराहट काफी थी। रिक्शेवाले को भी काफी चोटें आई थी। आगे का चिमटा टूटकर उसकी जाघ के अन्दर घुस गया था और तरतर खून वह रहा था। वह सडक पर पड़ा तड़प रहा था। कोई उसके पास नहीं गया था। नौजवान मोटर साइकिल सवार तुरत-फुरत अपनी मोटर साइकिल उठाकर नौ-दो ग्यारह हो गया।

बुर्केवाली को खून में सना, बीच सडक पर देखकर एक वर्ग के लोगों का पारा चढ गया। भीड मे बाहर निकलते हुए कुछ लोग जोर-जोर से चिल्लाने लगे और हायतोबा मचाने लगे। तब तक भीड और बढ गई। इतने मे बाजार में तैनात दो सिपाही डंडा भाजते हुए वहा आ पहुचे और भीड़ को तितर-बितर करने के लिए हवा में लाठी घुमाने लगे। लेकिन भीड और बढ़ती गई। एक सिपाही ने थाने मे इत्तला कर दी। आन-फानन मे दस आदमियों की टुकड़ी वहां पहुंच गई और भीड़ को खदेडने लगी। लोगों में भगदड मच गई। कुछ लोग सड़क से हटकर गलियों मे जमा हो गये। एक वर्ग के लोग उत्तेजित हो उठे और नारे लगाने लगे। पुलिस ने भीड़ को तितर-बितर करने के लिए लाठीचार्ज कर दिया। भागती भीड़ पुलिस पर ईंट-पत्थर, सोडा-बोतल बरसाने लगी। पुलिस और भीड के बीच लुका-छिपी का युद्ध शुरू हो गया। इस दौरान नारों के जवाब में दूसरे वर्ग के लोगों ने भी नारे लगाने शुरू कर दिये। स्थिति बडी तेजी से बिगड़ने लगी। पुलिस दनादन आसूगैस छोडने लगी। लोगों मे कुहराम मच गया। भागते समय भीड लूटपाट पर उतारू हो गई और दुकानें लूटने लगी। स्थिति पर काबू पाने के लिए पुलिस ने गोलियां चलानी शुरू कर दी। गोली लगने से कुछ लोग घायल होकर गिर पड़े। भागती भीड़ दूसरे वर्ग की दुकानों-

मकानो मे आग लगाने लगी। जितने मुंह उतनी बातें होने लगी। तरह-तरह की अफवाहों से बाजार गर्म हो गया। देखते ही देखते सारा शहर सुलगने लगा। जगह-जगह से लपटें उठने लगी। तब तक मौके पर पुलिस के आला अफसर और जिला मजिस्ट्रेट पहुच आये। एहतियात के तौर पर पूरे शहर मे कर्फ्यू लगा दिया गया। हंसी-खुशी और गहमागहमी वाला शहर पुलिस की संगीनो के साये मे सिसकने लगा। सड़कों और गलियों के सीनो पर भारी बूटो की हलचल शुरू हो गई। शहर के ऊपर आकाश मे चील-कौवे मंडराने लगे।

शहर के छोर पर, सड़क के साथ बहने वाले गंदे नाले पर बाकर अली की दूकान थी। दुकान क्या थी, लकड़ी का खोखा खड़ा कर रखा था। मुंह अंधेरे ही कसाईवाड़े से वह माल ले आता और उजाला होने से पहले ही गिराकर छील-काटकर दुकान लगा देता। रोज की तरह आज भी वह खलील खलीफा से पूरे साढ़े-सात सौ मे एक बकरा और दो बूढ़ी बकरियां ले आया था। आज का माल कुछ फायदे का मिला था। पचास तो खरे थे ही। माल सही उतर गया, तो पूरा पत्ता भी बन सकता था। दोनो बकरियों को पहले हलाल कर उसने खाल उतार ली और दो खड कर टुकड़े ठीहे के पास लगा दिये। पिछली रानें उसने छड़ के हुक मे फसाकर लटका दी। रानों के ग्राहक अधिक आते है। बकरे को सबसे बाद में जिबह किया और आधी खाल खीच कर सामने लटका दिया। बकरे के साथ बकरियों का गोश्त भी वह साट देता है। डोमो को तो वह निरी बकरियो का ही गोश्त टिका देता है। डोम राजा के ही कारण उसकी दूकान चलती है। शहर की सफाई करके, दो-दो घुच्चड़ चढ़ाकर जब डोम राजा मस्ती मे गाते-बजाते अपनी झोपड़ियों को लौटते हैं, तब वे हवाई घोड़ो पर सवार होते हैं। पाव भर, आध पाव, जिसकी जैसी बिसात हुई, बनवाकर ही आगे बढ़ता है। पर्व-त्योहार के दिन तो वह बड़े जानवरो की गोल बोटी भी चला देता है। ऐसे मौकों पर उसकी कमाई अच्छी हो जाती है। आजकल के ग्राहको को सच्चा माल बेचकर तो रोटी नसीब होने से रही। सब साले छटा टुकड़ा मागते हैं, चाप, तो मछली, तो पुठ, तो गर्दन तो चुस्ता, तो गुर्दा।

ऊपर से आजकल हाकिम-हुकूम बरसाती मेढको की तरह इतने बढ़ गए

हैं कि उनको खुश करने मे तो लुट ही जाये। कभी सफाई का दरोगा है, तो कभी बाट का इंसपेक्टर, तो कभी थाने का सिपाही-दीवान तो कभी दरोगा का आदमी, नेता का चमचा, इलाके का गुडा, सब सालों को फोकट का चाहिए। वह भी बड़े जानवरों का दस-पाच किलो टिका देता है साथ में, इन हरामखोरो को।

वह दुकान लगाकर बैठा ही था कि, देखा, डोम लोग कंधो पर झाड़ू लिए बदहवाश से बेतहासा लुडमुड भागे जा रहे है, जैसे जंगली शेर उनका पीछा कर रहे हो। किसी ने मुंह उठाकर उसकी दुकान की तरफ देखा तक नही। फिर उसने देखा, गाव से सब्जी-भाजी, गोहठा-गोहरी वाले लोग भी अपनी खचिया-टोकरी सिर पर लादे लदफद दौड़ते-हांफते शहर से गाव की ओर भाग रहे है। उसकी समझ मे नही आया कि मामला क्या है? क्यों सबके सब एकाएक शहर छोड़कर भागने लगे हैं। उत्सुकतावश वह ज्यो ही सडक की ओर लपका, उधर से भागती भीड़ मे से कुछ लोग चिल्ला उठे, "भागो, भागो, दंगा, कत्लेआम, लूट, आग, लाठी, गोली, पुलिस, कर्फ्यू।" उसके होश उड़ गए। कलेजा कांप उठा। बदन थरथराने लगा। पता नही बीवी का क्या हुआ होगा! कही दंगा मे फस गई तो नोच डालेंगे दरिंदे। वह छाती पीटता हुआ उल्टे पाव अपनी दुकान की ओर भागने लगा। हबर-हबर माल उतार कर अदर किया और ताला चढाकर अपने घर की ओर दौड़ने लगा। भागते समय वह पीछे मुड़-मुडकर अपनी दुकान की ओर देख लेता था। थोड़ी दूर ही गया होगा कि उसने देखा, कुछ लोग खोखा तोड़कर माल लूट रहे हैं और लूटने के बाद खोखा झोंककर आग लगा दी है। धू-धू लपटें उठने लगी है।

इस दौरान रसूलन बी होश मे आ गई थी और पुलिस ने उसे पास के अस्पताल मे भर्ती करा दिया था। रेहाना भी साथ में थी।

तरह-तरह की अफवाहो में गिरफ्तार शहर दो दिनो तक जलता रहा, आगजनी, लूट-पाट और छुरेबाजी की घटनाएँ होती रही। दोनो मजहबों के नेता दंगे की आग मे अपनी-अपनी रोटिया सेकते रहे। तीसरे दिन शहर शांत होने लगा। शाम चार बजे कर्फ्यू मे ढील दी गई।

ये तीन दिन बाकर अली के लिए तीन युग की तरह बीते। घर के

अदर वद वह तड़पता रहा, छटपटाता रहा, सिर धुनता रहा, छाती पीटता रहा। नन्ही-नन्ही मासूम बच्चियां मां के लिए रोती-बिलखती रहीं, वह उनको क्या बताता, कैसे समझाता कि शहर में उन्मादी भेडिये और आदमखोर फैल गये है, जो तुम्हारी अम्मी को हवक लिए हैं। इस दौरान बाकर अली की पलकों पर झपकी नही आई। बार-बार मन पटकता रहा कि वह साथ क्यों नहीं गया। यदि साथ रहा होता तो शायद बचा लाया होता इस आग से, किसी तरह। वह अपना माथा पीटता रहा और अपने-आपको धिक्कारता रहा।

कर्फ्यू उठते ही बाकर अली अस्पताल की ओर भागा। गलियां अभी भी सूनी थीं। सड़कों पर सन्नाटा था। इक्का-दुक्का लोग बावलों की तरह इधर-उधर दौड़ रहे थे। शायद राख की ढेर में अपने दिलों के टुकड़ों को तलाश रहे थे, उसी की तरह। अस्पताल में बीवी को सही-सलामत देखकर उसकी आंखें छलक आईं। दिल भर आया। दौड़कर उसने रसूलन को बांहों में भर लिया और मौला का लाख-लाख शुक्र मनाने लगा। रेहाना ने जब उसे पूरा हाल बताया तो वह अल्ला-अल्ला कर उठा।

कर्फ्यू पूरी तरह हट गया था। पर लोगों के दिलों में अभी भी दहशत थी। एक-दूसरे के प्रति मन में चोर बैठा था। धीरे-धीरे बाजार और दुकानें खुलने लगी और सब सामान्य होने लगा।

दिनों-दिन रसूलन बी की हालत बिगड़ती गई। पेट में बराबर दर्द रहने लगा। खून जाना बंद नहीं हुआ। कमजोरी बढ़ती गई। चेहरा पीला पड़ गया। होंठों पर स्याह पपड़ी छा गई। आंखें कोटरों में धंस गईं। बाकर अली परेशान था। दुकान जल चुकी थी। मां के रहते, बच्चे अनाथों की तरह बिलबिला रहे थे। पत्नी उसकी नजरों के सामने ही तिल-तिल कर नाता तोड़ती जा रही थी। बीवी को बचाने के लिए बाकर ने एड़ी-चोटी का पसीना एक कर दिया। जमीन-आसमान छान मारा। जो-जो दवा डाक्टर लिखते गये, वह लाता गया, जो चीज खाने को कहते, जुटाता गया, पर रसूलन की हालत में कोई सुधार नजर नहीं आया। जिंदगी की सारी कमाई दांव पर लगाकर हारे जुआरी की तरह बाकर ठगे-ठगे से बीवी को आहिस्ते-आहिस्ते मौत की गोद में सरकते हुए देखता रहा। दिन-भर वह स्वयं रसूलन

की तीमारदारी मे डटा रहता, पर रात को जनाना वार्ड के कारण रेहाना को रहना पड़ता। एकाएक एक दिन आधी रात के बाद रसूलन की हालत बिगड़ने लगी।

रात लटक रही थी। वार्ड में सन्नाटा था। मरीज बुत थे। रह-रहकर घायल पक्षी की तरह किसी मरीज के कराहने की आवाज से सन्नाटा कांप उठता था। कंपोटर माथ के दवा के कमरे में, खर्राटे भर रहा था। आसमान मे उडता हुआ टिटहरी का जोडा रह-रहकर टिट्टी'''टिही '' टिही टिटियाने लगता था। उसकी टिटियाहट तीर की तरह रात की खामोशी को चीर देती थी।

रसूलन बी दर्द से लगातार कराहने लगी थी। धीरे-धीरे उसका कराहना तेज होता जा रहा था। बीच-बीच मे वह चीख पड़ती थी। नीद में झूलती हुई रेहाना उसके पैताने लुढ़क गई थी। एकाएक पेट में छुरिया चलने लगी, जैसे अंदर बैठा कोई कतरा-कतरा मास काट रहा हो। छटपटाते हुए वह जोरो से चीख पडी। चिहुककर रात खामोशी का चादर फेंक उठ बैठी। कुछ मरीज जग गए। पैर लगने से पैताने सोती रेहाना भी अकबका कर जग गई और उछलकर बिस्तर से नीचे खड़ी हो गई। वह अपने आप पर खीझ उठी। इस निगोडी नीद ने न जाने कब धर दबोचा। पता नही कब से बिचारी तड़प रही है। पलकों पर अभी भी मन-मन भर का बोझ लदा था और बदन बेकाबू हो रहा था। गुस्से में उसने हथेलियो से पुतलिया मलमला दी और बदन ऐंठकर तोड़ दिया पर मुई नीद की खुमार घुडसवार की तरह अभी भी बदन पर जीन कसे चढी बैठी थी।

बडी बहन को दर्द से छटपटाते देख वह बेचैन हो उठी, विक्षिप्त रसूलन पेडू पकड़ कर मछली की तरह तड़प रही थी और इस पाटी, उस पाटी पछारा खा रही थी। रेहाना घबडाई-सी बदन सहलाने लगी। ज्योही उसकी नजर कमर के नीचे गई, मुंह से चीख निकल पड़ी। बिस्तर खून से तर था और लगातार ताजा-ताजा खून बह रहा था। उसने बत्ती जला दी और डाक्टर के कमरे की ओर भागी। डाक्टर अपने कमरे में नही था। वह नर्स की केबिन की ओर दौड़ी। वहा भी केबिन सूनी थी। उसकी समझ मे नहीं आया, अब क्या करे, इतनी रात में कहा जाये? जी रुआसा हो गया। वह

दौड कर फिर बहन के पास आई। उसका तड़पना और तेज हो गया था। साथ के कमरे मे कपोटर की नाक खड़खड़-गडगड़ बोल रही थी। कंपोटर की याद आते ही वह उसके पास जाकर जगाने लगी, पर कपोटर का खर्राटा नही टूटा। वह तो जैसे घोड़ा बेचकर सो रहा था। उसने उसके पैर के अगूठे को पकड कर हिलाया। कोई हरकत नही हुई। हाथ पकड़ कर झकझोरने पर कंपोटर जग गया। गिड़गिड़ाते हुए उसने मरीज की बिगड़ती हालत के बारे में बताया और डाक्टर को बुलाने की विनती करने लगी।

"अरे काहे को नाटक करती है। तुझको सोना है न, आ जा मेरे पास, सो जा बगल में।" उसका आंचल पकड़ कर खीचते हुए शरारत से कंपोटर ने कहा।

आचल झटककर वह दो कदम पीछे हट गई। गुस्से से उसका बदन कांपने लगा, पर विवशता में गुस्सा पीते हुए उसने फिर घिघियाकर डाक्टर के बारे मे पूछा।

"बड़ी ऐंठ रही है, तो भाड़ में जा। खामखां में इतनी मीठी नीद खराब की। कोई तेरे बाप के नौकर नहीं है कि आधी रात को भागते फिरे। चली जा यहां से।" वह फिर मुह ढक कर सो गया।

"भाई साहब···भाई साहब, मेहरबानी करके डाक्टर को बुला दीजिए। मेरी बहन मर रही है, दर्द से तड़प रही है, लगातार खून जा रहा है।"

"अरे कुछ नही होता, पाच मिनट मे। कह तो रहा हू, आ जा, थोड़ी देर सो ले, फिर बुला लाते हैं डाक्टर को और दवा भी दे देते हे अच्छी-सी।" मुह खोलकर उसकी ओर बाहें फैलाये शरारत से कंपोटर ने फिर कहा।

लाचार होकर वह वापस वार्ड मे लौट आई। उसे जीजा पर गुस्सा आने लगा। ऐसी हालत मे अकेले छोड़कर चले गये। यही बरामदे मे सो गये होते तो क्या बिगड़ जाता। डाक्टर कोई उनका नौकर है कि बैठा रहेगा, उनकी बीवी की नाड़ी पकड़ कर। उसी क्षण उसकी नजर कोने मे पड़ी लाश पर गई। वह सिहर उठी।

दगे के दौरान ही यह जली औरत आई थी। आज अचानक जब उसकी हालत बिगड़ने लगी तब डाक्टर और नर्स दोनो मौजूद थे। उसको दवा-दारू दिया, पानी चढ़ाया। बारह बजे के आसपास जब मर गई, उसके बाद

पता नही कहा गायब हो गए। जली औरत की याद आते ही उसके रोंगटे खड़े हो गए और बदन मे झुरझुरी दौड़ गई। औरत की चादर से ढकी लाश अभी वार्ड के कोने में शौचालय के पास एक बेड पर पड़ी थी। उधर देखते ही उसका कलेजा थरथरा जाता था। कैसा खौफनाक रूप हो गया था, एकदम डायन जैसा।

उदास मन वह बहन के पलंग की पाटी से सट कर खड़ी हो गई। रसूलन अब बदहवास-सी छटपटाने और सिर धुनने लगी थी। रेहाना से देखा नही गया। वह फिर डाक्टर की तलाश मे कमरे से निकल पड़ी और सभी कमरो, बरामदों मे देखती रही, अस्पताल के आगे-पीछे भूत की तरह डोलती रही, पर डाक्टर या नर्स का कही अता-पता नही था। रह-रहकर अंधेरे गलियारो मे गुजरते हुए जब जली औरत की याद आ जाती तो भय से उसका पूरा बदन सिहर उठता। थक-हार कर वह वार्ड मे लौटी तो देखा एक कुत्ता रसूलन की खाट के नीचे कुछ चाट रहा था। दौडकर उसने कुत्ते को दुरदुरा कर भगा दिया। पूरा बिस्तर खून से भीग गया था। आखे उलट गई थी और हाथ-पैर ठंडे पड़ने लगे थे। पास आकर ज्योंही उसने सहलाने के लिए पैरों को छुआ, उसको जैसे बिच्छू ने डक मार दिया। चौंककर क्षण-भर के लिए उसने हाथ खीच लिया। आखो की ओर देखकर वह रो पड़ी। जली औरत की मौत वह देख चुकी थी। उसके मुह से चीख निकल पड़ी। वह दौडती हुई फिर कंपोटर के पास गई और उसको झकझोरने लगी, जैसे उसको उन्माद चढ़ गया हो। कपोटर हड़बड़ा कर उठ बैठा और स्थिति की गभीरता को भापते हुए उसने जाकर मरीज को देखा। उसे लगा, यदि जल्दी कुछ नहीं किया गया तो केस हाथ से निकल जायेगा। वह जाकर केबिन नबर एक का दरवाजा भडभड़ाने लगा। डाक्टर ने अदर से ही डाटकर पूछा, "कौन है?" जब उसने मरीज का हाल बताया तो डाक्टर भुनभुनाते हुए दरवाजा खोलकर बाहर निकल आया। उसके पीछे-पीछे नर्स भी निकल आई। तब तक चार बज चुके थे। डाक्टर ने मरीज को जाचा-परखा। हालत गंभीर थी। रह-रह नाड़ी डूब जाती थी और मरीज बेहोश हो जाता था। डाक्टर ने एक सुई लगाई और तत्काल बड़े अस्पताल ले जाने के लिए पर्चा बना दिया, क्योकि खून मे मांस का कतरा गिरने लगा था। आपरेशन जरूरी

काफिरो ने कत्ल कर दिया। मार डाला किसी मिया भाई को।" यह सुनते ही भीड़ भड़क उठी और आवेश में नारे लगाते हुए अहमक की तरह तोड़-फोड पर उतर आई। थोडा आगे, सड़क के पास सुदरलाल अस्पताल की वही गाड़ी खडी थी। भीड ने गाड़ी पर पथराव शुरू कर दिया और पास पहुच-कर गाडी उलटकर उसमें आग लगा दी। रेहाना चीखते हुए निकलकर भागने लगी। भीड़ ने दौड़कर उसे पकड़ लिया और जलती आग में झोक कर जला डाला।

वाकये का पता लगते ही, लाशों के वारिस मौके पर कुछ ही समय मे, आ पहुचे। उनको देखकर दोनो वर्गों के लोग अपनी-अपनी भूलो पर अश-अश कर उठे।

हादसा

मैं काशी विश्वनाथ से लखनऊ जा रहा था। ए० सी० टू टायर में मेरे सामने की सीट पर, खिड़की से सटकर, एक सज्जन बैठे थे। हथेली पर अपनी ठोढ़ी टिकाये, शीशे से बाहर कहीं शून्य में वह नजरें गड़ाये थे। उनका सिर खल्वाट और मूछें खिचड़ी थीं। चेहरा उदास और गमगीन था, जैसे कोई पीड़ा अंदर-ही-अंदर मथ रही हो। ऊपर की दोनों बर्थें खाली थीं। गाड़ी जब चल दी और यार्ड से बाहर निकल गई, तब मैंने ही, परिचय जानने की गरज से, बातचीत शुरू की, हालांकि नाम वगैरह मैंने चार्ट में पढ़ लिया था।

"क्षमा करेंगे, आप दिल्ली तक जायेंगे?" मैंने विनम्रता से पूछा।

"आपको कैसे मालूम?" बड़ी बेरुखी से उन्होंने प्रश्न का प्रश्न से ही उत्तर दिया।

"आप रेलवे अधिकारी हैं न?"

"किसने बताया आपको?" वह थोड़ा चौंके।

"पास नंबर बाहर चार्ट पर लिखा है न।"

"ओ।" उन्होंने सायास हंसने की कोशिश की, पर आवाज फटी खजड़ी की तरह खनखना कर रह गई।

"मैं भी रेलवे अधिकारी हूं। लखनऊ तक जा रहा हूं, आफिस के काम से।" मैंने आत्मीयता जतलाते हुए कहा।

"अच्छा, अच्छा।" वह थोड़ा सामान्य हो गये, जैसे उनके अंदर की गांठें कुछ ढीली हो गई हों।

गर्मी का मौसम था। मैंने कुछ संतरे ले लिये थे। लिफाफे से एक संतरा निकालकर उनकी ओर बढ़ाते हुए, मैंने कहा, "लीजिए साहब, संतरा

खाइए ।"

वह डरकर एकदम चौंक उठे, जैसे संतरा नही, साप रख दिया गया हो उनके सामने। उछलकर दोनों पैर उन्होंने बर्थ के ऊपर रख लिये और हाथ हिलाते हुए कहने लगे, "देखिए साहब यही ठीक नही है। सफर मे किसी अपरिचित व्यक्ति से कोई खाने-वाने का सामान नही लेना चाहिए। मैं भुक्तभोगी हू। वो तो ईश्वर की कृपा थी कि किसी प्रकार जान बच गई, वर्ना···वर्ना तो···।" उनके चेहरे से लगा, जैसे किसी बहुत बड़े हादसे से गुजरे हो।

मैं झेंप गया और अपनी झेंप मिटाने के लिए खामखा 'हें···हे···हे' करते हुए आश्चर्य से पूछा, "अच्छा! क्या हो गया था, आपके साथ?"

"कुछ मत पूछिए साहब। अभी आज तक उस खौफ का साया मौत की तरह सिर पर मडराता रहता है। पता नही कब क्या हो जाय।"

"ऐसी कौन-सी बात हो गई थी साहब, आपके साथ कि आप इतने···।"

"यही खाने-पीने को लेकर ही तो हुई थी।"

"अच्छा। लगता है, चोर-उचक्कों के चक्कर मे फस गये थे आप।"

"अरे साहब किसी के माथे पर तो लिखा नही है। और फिर चोर-उचक्के तो ऐसा रूप बनाते हैं कि आप उन पर शक कर ही नही सकते।"

"आखिर हुआ क्या था, आपके साथ?" मैंने हमदर्दी दिखाते हुए पूछा।

"हुआ यह कि कुछ साल पहले मैं सपत्नीक एक शादी मे बनारस आया हुआ था। मैं यही का रहने वाला हूं न। जमीन-जायदाद का भी कुछ मामला लटका पड़ा था, जिसे रफा-दफा करना था। सो सब कर-करा कर, मैं पत्नी के साथ, इसी काशी विश्वनाथ से वापस दिल्ली लौट रहा था। आप तो जानते ही हैं, हजार मना करने के बावजूद, शादी-ब्याह के मौके पर हम लोगो की बीवियां कुछ जेवर वगैरह तो रख ही लेती है। सो दो-चार थान जेवर पत्नी के बदन पर भी था। जमीन का जो चालीस हजार मिला था, वह भी मैंने नकद ही सूटकेस मे रख लिया था। सोचा, किसी को क्या मालूम कि पास मे इतनी नकदी है।"

"इतनी नकदी लेकर चलना तो खतरे से खाली नही होता। आप तो

पढ़-लिखे आदमी है, साहब ।"

"बस यही तो गलती हो गई। तो उस दिन क्या हुआ कि संयोग से हमें नीचे की दोनों सीटें मिल गई। ऊपर की बर्थों पर कोई यात्री आया नही था, लेकिन गाड़ी चलने के कुछ देर बाद ही ऊपर की सीटों पर एक जोड़ा आ गया। साहब, औरत क्या चीज थी, फन्ने खा कि बस पूछिए मत। लगता था, फिल्म की हीरोइन हो। छरहरा बदन, लबा कद, कमर के नीचे तक लहराते बाल, भरा हुआ सीना, पतली कमर और साहब नैन-नक्श तो ऐसे थे कि अब मै क्या बताऊं। लेकिन आदमी महा खूसट, थुल-थुल और सड़ियल लग रहा था।"

"तो क्या मियां-बीवी नही थे वे दोनो?" मैंने जिज्ञासा से पूछा।

"भगवान ही जाने साहब। आते ही औरत हमारे सामने की सीट पर बैठ गई और बुलबुल की तरह फुदक-फुदक कर लगी चहकने। बातें करने मे इतनी माहिर कि हम तो उसका मुह ही देखते रह जाते। और साहब बात करते-करते वह एकदम मेरे सामने झुक जाती और क्या बताऊं, बार-बार आंचल नीचे सरक जाता या जानबूझ कर सरका देती। इतने मे उसका आदमी कही और जाकर बैठ गया था। वह कह रही थी, 'पहले मैं माडलिंग करती थी। फिल्म मे भी साइड हीरोइन का काम किया है। लेकिन फिल्म लाइन बड़ी गदी होती है।' हीरोइन बनते-बनते लड़कियां कहां से कहा पहुच जाती हैं। सो साहब कहने लगी कि उसके मां-बाप को फिलिम-विलिम वाली लाइन पसन्द नही आई और उन्होने जबरदस्ती इस व्यापारी के साथ उसकी शादी कर दी। बात करते-करते कभी वह मेरा हाथ छू देती, तो कभी कधा। कभी-कभी तो जांघ पर भी हाथ रख देती। क्या बताऊ साहब मेरा तो बुरा हाल हो गया। उधर पत्नी ! ह सब देख-देख कर कुढ़े जा रही थी। उसने यह बात भाप ली।"

"बड़े भाग्यशाली थे आप।" मैंने चुटकी ली।

"भाग्यशाली नही खाक थे। अरे साहब अभागा कहिए अभागा, क्योंकि मैं उस चुड़ैल की चाल पहचान नही पाया और उसके जाल मे फसता चला गया।

"सो कैसे?"

"अरे साहब वह इतनी खिलाड़ी थी कि मुझसे बात करना बद करके एकदम पत्नी की ओर मुड़ गई और बहन जी, बहन जी करके लगी तारीफ करने, उनकी एक-एक चीज की। कलाई की चूड़ियों को छूकर कहने लगी, ऐसा सोना अब कहा मिलता है बहन जी। क्या लहरदार सिकड़ी है, आपकी। तीन तोले से कम नही होगी। इस गढ़न का झुमका तो अब कही दीखता ही नही। पत्नी फूल कर कुप्पा हो गई। और साहब, उनकी साडी क्या, ब्लाउज क्या, चप्पल क्या, सब तो सब जब उनके मोटापे की तारीफ करने लगी तो मैं तो पानी-पानी हो गया। लेकिन पत्नी थी कि उसकी बारीक बाते समझ ही नही पा रही थी। लगी अपने मायके का बखान करने कि बचपन की खाई-पीयी देह है। उस समय मायके में दूध-घी की नदी बहती थी। क्या बतायें साहब, खा-खाकर तो उनकी यो तोंद निकल आई है, जैसे हर समय नौमासा ही लगा हो।" कहते-कहते वह झेंप से गये, जैसे कुछ गलत बोल गये हों। फिर वह चुप हो गये। थोड़ी देर बाद स्वय चालू हो गये।

"हां तो मैं कह रहा था, जब खूब घुला-मिला लिया पत्नी को, तब थर्मस से दो कप कॉफी निकाली, एक कप पत्नी को दी, दूसरा मुझे देने लगी। मुझे कॉफी सूट नही करती, सो मैंने माफी मांग ली। फिर अपने आदमी को कॉफी देने के बहाने वह उठकर चली गई। श्रीमती जी बखान कर-करके कॉफी पीती रही। तब तक साहब कोई ढाई-तीन बज गये थे। कॉफी पीने के बाद श्रीमती जी लेट गईं। लेटते ही उन्हें नींद आ गई और खर्राटे भरने लगी। थोड़ी देर में हीरोइन लौट आई। उसका पति दूर ही बैठा रहा। आकर बड़ी बेतकल्लुफी से वह एकदम मेरी बगल में बैठ गई और ऐसी-ऐसी बातें करने लगी कि मर्द होते हुए भी मुझे शर्म आने लगी। उसका पल्लू था कि बार-बार सरकता जाये। कितना भी रोकू, पर नजरें थी कि बार-बार उधर को फिसल जायें। मेरी मति मारी गई थी। मैं भी पिघलता गया और उसकी जाल मे फंसता गया। पत्नी खर्राटे भर रही थी, सो मैं भी निश्चित था। पर्दा पड़ा ही था। आप तो जानते ही हैं साहब, कि गाड़ी के सफर में मौका मिलने पर बड़े-बूढ़े भी दायें-बायें आख सेंकने से नहीं चूकते। रेगिस्तान में अचानक बहार आ गई थी। मैंने भी सोचा, लूट

लो जितना लूट सकते हो। फिर साहब क्या हुआ कि प्रतापगढ़ आने वाला था। चाय वाला आर्डर लेने आया। उसने मना कर दिया। कहा, मेरे पास ढेर सारी कॉफी रखी है। फिर बैग से उसने एक डिब्बा निकाला, जिसमे काजू की बर्फिया थी। दो टुकडे उस चुडैल ने मेरे हाथ पर रख दिए। नहीं करते नही बना। बस वही मेरे विनाश का कारण हो गया।"

"काजू की बर्फी नहीं पची क्या ?" बीच मे ही मैने टोक दिया। सोचा, कैसा चूमट आदमी है कि ऐसे माहौल का भी फायदा नही उठा पाया।

"आप समझे नही," थोड़ा झल्लाकर उन्होने कहा। "बर्फिया तो मैंने खा ली। एक प्याला कॉफी भी उसकी पी ली। लेकिन कॉफी पीते ही मुझे नशा-सा छाने लगा। सिर घूमने लगा। नजरो के सामने लाल, पीली, हरी, नीली चिनगारिया फूटने लगी। लगा, धूप पीली पड़ती जा रही है। फिर लगा आकाश में एक ओर से घटाटोप अंधेरा छाता आ रहा है। दिमाग में जैसे आधी उठने लगी। कानों मे तेज हवाए सांय-साय सीटिया बजाने लगी। लगा, कान का पर्दा फट जाएगा, खोपडी टुकड़े-टुकड़े उड़ जायेगी। फिर एकाएक सिर मे भयकर दर्द उठने लगा। वह दर्द सपोलो की तरह धीरे-धीरे रेंग कर नीचे की तरफ उतरने लगा और लगा एक साथ ढेर सारी सुइया मेरे सीने, कलेजे, फेफड़ों मे, अदर ही अदर धसती जा रही हैं। बाहो, पेट, पीठ और कमर मे भी वैसी ही सुइया चुभने लगी। मैं दर्द से तड़पने लगा। मैंने कराहना चाहा पर आवाज नही निकली, चीखना चाहा लेकिन स्वर नही फूटा। हाथ-पैर हिलाने की कोशिश की लेकिन, लगा, पूरा शरीर, सलीबो मे जकड़ दिया गया है। आखे खोलनी चाही, लेकिन पलको पर चट्टान पडी थी। फिर लगा, मेरी गाड़ी किसी अधी गुफा मे दौडती चली जा रही है। गाड़ी के सारे डिब्बे खाली हैं। इजन को कोई जल्लाद चला रहा है। गुफा के अन्दर बहुत सारी गुफाए हैं। उन गुफाओं मे तरह-तरह के भयावह चेहरे लाल-पीली हरी-नीली बत्तियां लेकर दौड़ रहे हैं और हर डिब्बे मे मुझे ढूढ रहे हैं। एकाएक गाड़ी एक संकरी गुफा में जाकर फस गई। मैं चुपके से उतरा और गुफा से बाहर निकलने के लिए बेतहाशा भागने लगा। वे भयावह चेहरे मेरा पीछा करने लगे। बाहर निकलने की

बजाय मैं और गह्वर गुफाओं में फंसता गया। एकाएक अंधेरे में तैरते हुए ढेर सारे कंकालों ने मुझे घेर लिया। उनके बड़े-बड़े नुकीले दांतों और हाथों की लंबी उंगलियों के तेज नाखूनों से ताजा-ताजा लहू चू रहा था, जैसे अभी-अभी किसी का खून पीकर आ रहे हों। डर के मारे मैं जोरों से चीख पड़ा और कस कर आंखें भींच ली।"

मैं हक्का-बक्का-सा उनका मुंह देखने लगा। उनकी आंखें बंद थीं, जैसे अभी भी उन अंधी गुफाओं में वह उतरते जा रहे हों। वह बोले जा रहे थे—

"फिर जब मुझे होश आया तो देखा अस्पताल में पड़ा हूं। कमरे में सन्नाटा था। कुछ मशीनें और औजार मेरे सिर पर औंधे लटक रहे थे। बगल में स्टूल पर कुछ दवाएं पड़ी थीं। मुझे लगा, मैं या तो अभी भी बेहोश हूं, या कोई स्वप्न देख रहा हूं। आंखें खोलते ही दौड़कर एक नर्स मेरे पास आई और मुस्कराते हुए पूछा, 'कैसी तबीयत है?' फिर वह तेजी से कमरे से बाहर चली गई। कुछ ही क्षणों में एक डाक्टर के साथ वह लौट आई। डाक्टर ने तरह-तरह के औजारों से मेरा सीना, पेट, पीठ, सिर और गला जांचा-परखा और आंखों की पलकें उलट कर देखीं। उसने उंगली की टीपी से और फिर एक हथौड़ीनुमा औजार से मेरे जोड़ों को ठोंका-ठठाया और फिर नश्तर जैसी नुकीली चीज लेकर मेरे बदन में जगह-जगह कोंचने लगा। दर्द से मैं सी-सी करता रहा, पर जब उसने मेरे बायें हाथ और पैर में नश्तर चुभोये तो मुझे कोई अनुभूति नहीं हुई। एकाएक उसके माथे पर बल पड़ गये और वह जैसे चिंतित हो उठा। मेरा बायां अंग सूना हो गया था। उस डाक्टर ने बड़े डाक्टर को बुलवाया। बड़े डाक्टर के आते ही कुछ सलाह-मशविरा करने के बाद एकाएक स्ट्रेचर मंगाकर मुझे नीचे लाया गया और एम्बुलेंस में डालकर दूसरे बड़े अस्पताल में भिजवा दिया गया।"

यह सब कहते हुए उनके चेहरे पर भय की छाया स्पष्ट दिखायी दे रही थी। बोलते-बोलते उनके होंठ थरथराने लगे थे, जैसे उन यातनाओं से वह पुनः गुजर रहे हों। मैंने सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा "च···च···बहुत बुरा हुआ आपके साथ।"

"अभी क्या हुआ साहब। बुरा तो आगे हुआ। तो मैं कह रहा था, मुझे दूसरे अस्पताल भेज दिया गया। वहा नये सिरे से मेरी जाच-पड़ताल की गई। फिर स्ट्रेचर पर मुझे एक कमरे में ले जाया गया, जिसमे एक वहुत बड़ी मशीन लगी हुई थी। उस मशीन के सामने एक पटरा-सा लगा था। स्ट्रेचर से उठा कर मुझे उस पटरे पर सुला दिया गया। सिर में हेल-मेट जैसी कोई चीज *बाध कर मेरा सिर उस मशीन के अंदर डाल दिया* गया। एकाएक मेरे सिर के चारो तरफ जैसे कोई वहुत वडा घर्पण यत्र घर्र-घर्र घूमने लगा। मुझे लगा वह मेरी खोपड़ी पीसते हुए अंदर भेजे में घुस जायेगा। दो-तीन मिनट की घरघराहट के वाद, हुच्च-हुच्च मेरे सिर को तीन झटका लगा और सिर मशीन से थोडा बाहर निकल आया। फिर वही घर्र-घर्र घर्पण शुरू हुआ। इस प्रकार मशीन तीन बार मेरे भेजे को पीसती रही। फिर मुझे वहा से निकालकर न्यूरोसर्जिकल वार्ड मे, तीसरे माले पर पहुचा दिया गया।"

"शायद दिमाग का फोटो लिया होगा। लेकिन आपकी पत्नी का क्या हुआ?" मैंने जिज्ञासा से पूछा।

"वो तो केवल कॉफी पी थीं न, सो उन पर असर कम हुआ। दिल्ली पहुंचने पर उनको होश आ गया था। लेकिन मैंने दो जहरीली बर्फियां भी खा ली थी। इसी कारण तो मरते-मरते बचा।"

अपनी भूल पर मैं झेप गया। फिर उस औरत को कोसते हुए कहा—

"बड़ी गदी औरत थी। सामान और रुपये-पैसे का क्या हुआ?"

"सो तो सब चला ही गया। पत्नी के सारे जेवर, सूटकेस, रुपये, कपड़े सब ले लिया, उन ठगों ने। केवल वेहोश लाशे पीछे छोड़ गये थे।"

"*हां तो न्यूरोसर्जिकल वार्ड मे आप पहुच गये।*" मैंने आगे कहा।

"ओफ ऐसे-ऐसे रोगी भी होते हैं, यह मैंने पहली बार देखा वहाँ पर। अरे, साहब, जैसे नर्क मे यमराज यातना देते है न, ठीक वही हाल था, उस वार्ड के रोगियों का। पागलखाने से भी वदतर, यातना शिविर से भी दर्द-नाक। एक तो ऐसा भभका उठ रहा था उसके अदर कि जाते ही जाते मुझे मितली आने लगी। पता नही किस चीज की बू थी, दवा-दारू की गध थी,

या मरीजो के कटे-फटे सडते अगो की दुर्गन्ध थी, या वार्ड की गदगी थी, या उसमे ऐसी गैस छोड़ दी गई थी। लेकिन साहब, वार्ड में भरती लोगो की हालत देखकर मैं तो इतना घबरा गया कि लगा मेरा दिल ही बैठ जायेगा।"

"अच्छा इतना खराब हाल था वहा।"

"आपने दवाओं की कोई प्रयोगशाला देखी है कभी, जिसमें बदर, चूहे, मेढक या अन्य किस्म के जानवरो को तरह-तरह की दवाएं खिला कर एक का मस्तिष्क, दिल, फेफडा, नसें, आंतें, हड्डियां या चमडो की चिप्पिया दूसरो मे लगा कर या अंग-भंग करके अलग-अलग तापमानो मे शिकजो मे लटका दिया जाता है, फिर नई दवाए देकर उनके असर का परीक्षण किया जाता है। जानवर दर्द से कराहते रहते है, मिमियाते रहते हैं, पिंजडो के अंदर तडपते और उछलते रहते हैं, लेकिन परीक्षण जारी रहता है, बस वही हाल था, वहा के मरीजो का।"

मेरे रोगटे खड़े हो गये। जब जानवरो में इतनी तड़प होती है तो आदमियो का क्या हाल होगा। आगे सुनने के लिए मैं तैयार नही था, पर वह बोले जा रहे थे।

'दुर्घटना, चोट, अगभंग, मारपीट, पागलपन, फालिज, मिरगी के जितने भी मरीज थे, सब वहा। मैं तो पगला गया, देख कर। पहली बार मुझे मालूम हुआ कि आदमी की हर तरह की बीमारी का ताल्लुक सीधे मस्तिष्क से होता है। लगा, सारी दुनिया ही मस्तिष्क की किसी न किसी बीमारी से पीड़ित है। लेकिन साहब, कोई भी साबुत आदमी मुझे अन्दर नही दीखा। किसी का पूरा अंग मारा गया था, तो किसी का आधा, किसी की एक टाग नही उठती थी, तो किसी के दोनो हाथ झूल गये थे। किसी का मुह खुला है तो खुला ही है, जबडा ही नही बन्द होता। मुह से बराबर गदी लार टपकती रहती है, त्रिशकु की तरह। किसी की आखे कौडी की तरह बाहर निकल आई हैं और पलके ही नही बद होती। चौबीसों घटे वह घूरता ही रहता है, शनीचर की तरह। किसी की रीढ़ के अन्दर सरिया डाल कर तखत से जकड़ दिया गया है, तो किसी के घुटने मे राड का टुकड़ा घुसेड़ कर वजनी प्लेट नीचे लटका दी गई है। कोई महीनो से अचेत

पड़ा है, तो किसी को नींद ही नहीं आई, कई महीनों से। एक-एक आदमी की खोपड़ी चार-चार बार चीरी गई थी। शरीर के अंगों को कई-कई बार चीरा-फाड़ा, काटा गया था, भेड़-बकरियों की तरह। बस साहब यह समझिए कि विक्षिप्त लोगों की वह एक अलग दुनिया ही थी। जो एक बार अन्दर चला गया, वह साबुत बाहर नहीं निकल पाया।"

बयान करते-करते उनके चेहरे पर पसीना चुहचुहा आया। आंखों की पुतलियां नाचने लगीं, होंठ थरथराने लगे, चेहरा पीला पड़ गया, जैसे मौत का पंजा उनके गले पर कसता जा रहा हो।

मुझे लगा, मैं भी पागल हो जाऊंगा, ये सब बातें सुन-सुन कर।

"छोड़िए साहब, आप साबुत निकल आये न। भूल जाइए उस दुनिया को अब।" मैंने बात टालने की कोशिश की।

"आप क्या समझते हैं, मैंने भुलाने की कम कोशिश की। लेकिन डाक्टरों ने जो एक वहम धरा दिया है, वह निकलता ही नहीं, दिमाग से। बस यही लगता है कि कोई काला साया हमेशा मंडराता रहता है, सिर पर।"

"ओह, यह तो बहुत बुरी बात है। लेकिन मुझे तो लगता है, यह वहम बेबुनियाद है। दिमाग से ये सब बातें निकाल दीजिए। जैसे कभी कुछ हुआ ही नहीं। अब आप भले-चंगे दीखते हैं। छोड़िए इस बात को। और कोई बात करिए।" मैंने फिर बात पलटने की कोशिश की, क्योंकि धीरे-धीरे मेरे अन्दर भी भय समाता जा रहा था और पहले कभी की गई अपनी ऊल-जलूल हरकतों को मैं अपने दिमाग की खराबी से जोड़ने लगा था।

"कोशिश तो मैं बहुत करता हूं। लेकिन उस मशीन की घरघराहट, दिमाग के फोटो उतरते ही नहीं चित्त से।"

"कौन-से चित्र?" अनायास ही मेरे मुंह से निकल गया।

"वही जो कैट स्कैन, मेरा मतलब है, घरघराने वाली मशीन से लिये गये थे। जानते हैं, बड़े अस्पताल में पहुंचते ही मेरे केस की फाइल बन गई। एक डाक्टर भाटिया आये। उनके हाथ में दिमाग के ढेर सारे एक्सरे थे। मेरे बेड के पास खड़े होकर, रोशनी के सामने, वह एक-एक चित्र देखने लगे। इतने सारे चित्र देखकर मैं तो घबरा गया। देखने-परखने के बाद

उन्होंने सारे एक्सरे एक लिफाफे में डालकर मेरे पैताने रख दिया। उन्होंने कुछ और डाक्टरो को बुलवाया। दो-तीन नर्सें कुछ औजार ले आई। मुझे करवट कर दिया गया और घुटनों को नाक से सटा दिया गया। रीढ़ धनुष की तरह बाहर निकल गई। चार आदमियो ने मुझे कस कर पकड़ लिया। फिर मेरी पीठ पर कोई ठडी चीज लगाई गई और रीढ की हड्डियों मे कोई मोटी सुई घुसेड़ दी गई। ओफ! साहब, मत पूछिए, इतना भयंकर दर्द हुआ कि लगा कोई बहुत मोटा जलता हुआ राड मेरी रीढ में डाल दिया गया हो। मेरा तो मेरुदण्ड ही टूट गया। लगा, टूटकर शरीर के दो खण्ड हो गये। मुझे गश आ गया और थोडी देर के लिए मैं बेहोश हो गया, होश आया तो डाक्टर जा चुके थे। लेकिन जो भयकर शूल उठनी शुरू हुई, तो बस यही लगे साहब, कि ब्रह्मांड फट जायेगा। न हिलते-डुलते बने, न बोलते-खासते बने, न उठते-बैठते बने। शरीर में जरा-सी भी हरकत हो कि शूलें बढ जायें। पहली बार लगा साहब, आदमी का पूरा शरीर उसके मेरुदण्ड पर ही टिका है।"

"ओफ, बडी तकलीफ उठानी पडी आपको।"

"अरे साहब, तकलीफ की आप बात कर रहे हैं, तकलीफ तो आगे सुनिए," कहते-कहते उनका मुह खुला का खुला रह गया, जैसे वह कहीं खो गये हों। मुझे तो लगा कोई हादसा न हो जाय उनके साथ। डर के मारे मैं अपने-आपको खीचने का प्रयास करने लगा।

"हा साहब, तो मैं कह रहा था कि डाक्टर भाटिया ने बताया कि आपके दिमाग की कुछ शिराए निष्क्रिय हो गई हैं या अन्दर गांठ पड गई है, जिसके कारण बाया अंग अपाहिज हो गया है। दिमाग का आपरेशन करना पडेगा। लेकिन उसके पहले कल सुबह आपका एंजियोग्राम टेस्ट किया जाएगा। मैं तो साहब, एकदम डर गया। जानते हैं, एंजियोग्राम टेस्ट क्या होता है? यह जो गला है न, गला, इसमे से दो मोटी-मोटी नसें ऊपर दिमाग की ओर जाती हैं। इसी मे एक नस पचर करके, एक फाइबर ग्लास अन्दर दिमाग तक डाला जाता है और बाहर से दिमाग के अदरूनी हिस्से का फोटो लिया जाता है।".

"तो क्या हुआ सुबह में, टेस्ट हुआ आपका?"

"मैं तो उनके चंगुल में फस ही चुका था। सुबह इंजेक्शन वगैरह लगाकर टैस्ट वेड कर ले गये और साहब सीधा सुलाकर गले में दायीं तरफ करीब पचासों सुइयां भक-भक उन्होंने कोची होंगी। लेकिन डाक्टर अनाड़ी था, नस नही मिली। मेरे सिर के ऊपर टी० वी० कमरा लगा हुआ था, जिससे टेस्ट का चित्र डाक्टरो की एक क्लास मे टेलीकास्ट हो रहा था। बड़े डाक्टर वही क्लास में ही थे। सूइया कोंचते-कोंचते जब मेरा गला छलनी हो गया, और मेरे हाथ-पैर तड़पते-तड़पते ठंडे पड़ने लगे, तो बड़ा डाक्टर क्लास से भागा-भागा आया और उस अनाड़ी डाक्टर पर बरस पड़ा। फिर मुझे वार्ड में पहुंचा दिया गया।"

"चलिए जान बची और लाखों पाये।"

"अरे साहब जान कहा बची ? इसके बाद और भी बड़ी आफत आई। क्या हुआ कि शाम को डाक्टर भाटिया फिर आये और कहे कि एंजियोग्राम टेस्ट तो फेल हो गया। बिना दिमाग की अदरूनी हालत जाने आपरेशन करना ठीक नही होगा। सो कल सुबह फोर वेसल टेस्ट होगा।"

"यह कैसा टेस्ट होता है ?" मैंने आश्चर्य से पूछा।

"यह जो खोपडी है न, इसके अन्दर दिमाग के चार हिस्से होते हैं। बाये तरफ का दिमाग, शरीर के दाहिने हिस्से के अगो को नियन्त्रित करता है और दाईं तरफ का दिमाग बाये हिस्से को···।"

"अच्छा। यह तो नई चीज बताई आपने।"

"हां तो फोर वेसल टेस्ट में ये जो जाघ का पट्टा होता है न, पट्टा, वहा से दो मोटी-मोटी नसें नीचे टांगों की ओर जाती हैं। कमर से ऊपर ये ही नसें जाकर रीढ़ की मोटी नस मे मिल जाती हैं। इसी पट्टे की नस को काटकर, इसमे से रीढ की नस में होते हुए, लम्बा फाइबर ग्लास का पतला पाइप दिमाग तक चढ़ाया जाता है और फिर बाहर से दिमाग के अन्दर का फोटो लिया जाता है। और जानते है, नसों की धड़कन के साथ यह पाइप धीरे-धीरे दिमाग तक, काफी समय में, चढ़ता है। यह बहुत ही घातक और कष्टकर टेस्ट है। इसमे रोगी अपाहिज भी हो जाता है।" कहते-कहते उनके रोंगटे जैसे खड़े हो गये। बदन कापने लगा और गला सूख गया।

ऐसा कष्टकर टेस्ट सुनकर मेरे अन्दर भी झुरझुरी दौड़ गई और एक अदृश्य भय की छाया मुझे ग्रसने लगी। मन मे आया, उठकर कही और बैठ जाऊं या अगले स्टेशन पर गाड़ी से उतर जाऊं। मुझे अपने अंगों के सूने पड़ने की आशंका होने लगी।

"मेरे सामने वाले बेड पर एक रोगी तीन महीने से पड़ा था।" शून्य मे आखें गडाये वह फिर आगे बोलने लगे, "उसकी बीवी बता रही थी कि छत पर गुड्डी उडाते समय वह सिर के बल नीचे गिर पड़ा और सरिया का एक टुकड़ा सिर मे धस कर एक आख से पार हो गया। अन्दर की गुद्दी क्षत-विक्षत हो गई, जिससे नीचे का सारा शरीर अपाहिज हो गया। उसके दिमाग के चार आपरेशन हो चुके थे, पर वह ठीक नही हो पाया था। एक आख तो निकल ही गई थी। उसके गड्ढे से बराबर बदबूदार पीब का स्राव होता रहता था। जब रोगी होश मे रहता तो दर्द से तड़पता रहता। इसलिए उसको दवा देकर बराबर नीद मे रखा जाता था। जानते है, उसका क्या हुआ। एकाएक आधी रात को वह जाग गया और दर्द से तड़पने लगा। चौथा आपरेशन अभी हाल मे ही हुआ था। दर्द के मारे छटपटाते हुए वह बेड की पाटी पर सिर पटकने लगा। बैंडेज खुल गया, खोपड़ी के टाके फट गए और खून-पीब से सना हुआ भेजा बाहर झूल गया। औरत चीखने लगी। नर्सें आईं, डाक्टर आए। भेजा अन्दर डालकर फिर से पट्टी बाधी गई, पर सब बेकार। थोड़ी देर बाद सफेद चादर से लाश ढक दी गई।"

मुझे मितली आने लगी, सिर घूमने लगा। मैंने हथेलियो से कस कर आखे बन्द कर ली। जी में आया चीख पड़ूं। बस भाई बस। अब और अधिक सुनने की हिम्मत नही है। लेकिन मैं कुछ बोल नही पाया।

वह बोले जा रहे थे, "मौत की ठडी सिहरन मेरी रगो मे दौड़ गई। मुझे विश्वास हो गया कि आपरेशन के बाद मेरा भी यही हश्र होगा। जी में आया उठ कर भाग जाऊ, अस्पताल से, पर अग जैसे निष्प्राण हो गए। मैं मुर्दे की तरह पलग पर पड़ा-पड़ा छत निहारता रहा। दूसरे दिन कोई नेता मर गया। अस्पताल में छुट्टी हो गई। मेरा टेस्ट नही हुआ।"

"चलिए अच्छा हुआ। अब आप थोड़ा आराम कर लें। रायबरेली आ

रही है। यहा कॉफी अच्छी मिलती है। कहिए तो ले आऊं।" मैंने फिर प्रसग बदलने के विचार से कहा।

"देखिए साहब, आप फिर कॉफी पिला कर मुझे···मेरा मतलब है, वह हादसा दोहराना चाहते हैं।" वह खिन्न हो गए।

मैंने अपनी भूल कर दांतों-तले जीभ काट ली।

"लेकिन साहब कुछ भी हो। उस नेता ने स्वयं मरकर मेरी तो जिन्दगी बचा ली।" राहत की सांस लेते हुए उन्होंने कहा।

"सो कैसे ?" मेरे मुह से अनायास निकल गया।

"न नेता मरता, न उस दिन अस्पताल बन्द होता। फिर तो मेरा फोर वेसल टेस्ट करके, आपरेशन करके, मार ही डालते डाक्टर लोग।"

"तो फिर आप बचे कैसे ?"

"वही तो कह रहा हू। मेरी बगल मे पन्द्रह-सोलह साल का एक और किशोर रोगी था। कभी क्रिकेट खेलते समय उसके सिर मे गेंद लग गई थी। कुछ वर्ष बाद उसके दिमाग के अन्दर का घाव पककर फोड़ा बन गया। विपत्ति का मारा वह भी उसी अस्पताल में आ मरा। दो बार सिर का आपरेशन हुआ, पर फोड़ा ठीक नही हुआ। उसको रह-रह कर सिर में भयंकर दर्द उठता और वह उछलने-कूदने लगता। जब पीप की ढेर सारी कै हो जाती तो दर्द कम हो जाता। दूसरे दिन शाम को उसको वैसा ही दर्द उठा। छटपटाता रहा। उसकी मा डाक्टरों के पीछे दौड़ने लगी। फिर एकाएक अललल पीप की कै होने लगी। पीप के साथ कै में खून और मास के लोथड़े भी गिरने लगे। सारा वार्ड सड़ांध की बू से गंधा उठा। पास-पड़ौस के मरीजों को मितली आने लगी। कै करते-करते उसकी आखे उलट गईं, जैसे मुझे ही घूर रहा हो, क्योंकि चेहरा मेरी तरफ था। फिर उसको दो-तीन हिचकियां आईं और फिर हाथ-पैर काप कर··· ।"

"छोड़िए भी साहब, उन बातों को। अब तो भूल जाइए।" मुझे मितली आने लगी थी।

"वही तो मैंने किया। मैंने ठान लिया कि अब वहा से चाहे जैसे हो भाग जाना है, क्योंकि वहा रहने का मतलब था मौत। नर्स से कहा, डाक्टरों से गिड़गिड़ाया पर किसी ने छुट्टी नही दी। करीब आधी रात के बाद,

जब सब सो गए, धीरे से मैं वार्ड से बाहर निकल आया और सीढ़ियों से भागता हुआ जब निचले तले पर पहुंचा और गैलरी से पिछली चहार-दीवारी की ओर भागने लगा कि सामने से एक चौकीदार ने कड़क कर आवाज लगाई, 'कौन है।' मैं दाहिनी ओर की गैलरी मे मुड़ गया, जिधर अंधेरा अधिक था और भागता हुआ गैलरी के छोर पर बने एक कमरे में घुस गया। वह आदमी मेरा पीछा करता हुआ कमरे तक आया। मैं झट से किसी लम्बी ताबूत जैसी चीज के पीछे जमीन पर लेट गया। उस आदमी ने कमरे मे आकर बत्ती जलाई, चारो तरफ नजर दौड़ाई और फिर बत्ती बुझाकर 'साला कर्नल का भूत अभी तक दौड़ रहा है।' कहता हुआ हनुमान चालीसा पढ़ने लगा और जल्दी में दरवाजा भेड़कर तेजी से वहां से चला गया। अन्दर मेरा तो बुरा हाल हो गया। लगा किसी भी क्षण दम निकल जायेगा, दिल की धड़कन बन्द हो जायेगी। मेरी रूह काप उठी, कलेजा पत्ते की तरह हिलने लगा और पसीने से मैं नहा उठा।"

"क्यों ऐसा बुरा हाल क्यों हो गया आपका ?" मैंने हैरत से पूछा।

"अरे साहब वह मुर्दाघर था और मैं लाशों के बीच लेट गया था। ओफ ! ऐसी बदबू भरी थी कमरे मे, लगा कि पूरा फेफड़ा ही सड़ जायेगा।"

मेरी घिग्घी बंध गई। रोंगटे खड़े हो गये। लगा, उस मुर्दाघर की सड़ाध यहा भी फैल गयी है। मेरे इर्द-गिर्द सड़ी लाशें पड़ी हैं। वहा बैठना मेरे लिए मुश्किल हो गया। शौचालय के बहाने, उठकर मैं वहां से जाने को हुआ कि उन्होने फिर कहना शुरू किया।

"मैं अधिक देर तक उन मुर्दों के बीच मे रहता तो डर कर मर जाता। मैंने सोचा, जो होगा, देखा जायेगा। कुछ ही क्षणों मे दरवाजा खोलकर मैं बाहर की ओर बेतहाशा भागा। वही चौकीदार बाहर सहन मे जोर-जोर से हनुमान चालीसा पढ़ते हुए डडा पीट रहा था। मुझे भागते देखकर 'भूत-भूत' चिल्लाता हुआ, गिरता-भहराता वह दूसरी ओर को भागने लगा। इतने मे मैं पिछली चहारदीवारी फाद कर सड़क पर आ गया था।" कहते-कहते वह जोरों से हाफने लगे, जैसे कई मील से दौड़ कर आ रहे हों।

शरीर पस्त हो गया था। चेहरा पीला जर्द हो गया था, जैसे मुर्दे का चेहरा हो। आखों की कापती पुतलियों मे मौत की मंडराती छाया स्पष्ट झलक रही थी। मुझे लगा, कही इनको कुछ हो न जाय। मेरा बदन भी बेकाबू हो रहा था। कलेजे की थरथराहट रुक नही रही थी।

"जानते हैं, अस्पताल वाले टेस्ट केस बनाकर, मुझ पर खोज करना चाहते थे। अपने ट्रेनी डाक्टरो को प्रशिक्षण देना चाहते थे, जैसे प्रयोग-शालाओं मे बन्दरों, चूहो और जानवरो के साथ किया जाता है। गोया मै आदमी नही बन्दर हू, जानवर हू। लेकिन साहब जब-जब उस नागिन की याद आती है, उसके दश की जहरीली लहर मेरे दिलो-दिमाग पर छाने लगी है। मन मछली की तरह तड़पने लगता है और दिमाग में ढेर सारे सपोले रेंगने लगते है। तब यही लगता है, बस मै अब गया तब गया।" कहते-कहते उनकी आवाज डूबती गई और वह आंखें बन्द करके बर्थ पर लेट गये। फिर थोड़ी देर बाद बोले, "यह धूप पीली क्यों हो रही है?"

मुझे बड़ा अजीब लगा। मैंने कहा, "साहब, अब तो अंधेरा हो गया है। धूप कहा है! लखनऊ आने वाला है। शाम के साढ़े सात बज रहे हैं।"

"ये लाल-पीली हरी-नीली ढेर सारी बत्तिया क्यों जल उठी···गाडी गुफा मे क्यो उतर रही है···मेरा सिर···मेरा सिर फट रहा है—पलकें··· पलकें नही खुल रही है···च···च···ओफ ये सुइया क्यों चुभ रही हैं··· आह, मेरा कलेजा छलनी हुआ जा रहा है। अरे···अरे हाथों-पैरों मे भी सुइयां चुभ रही है···साहब···साहब कोई टिकिया-विकिया है···दवा है··· मेरी जेब में डायरी···एक डायरी है·· आप पढ लें···जरूर पढ लें···मेरा सिर···मेरा हाथ···मेरा पैर···अरे-रे कुछ नही उठ रहा है·· दर्द·· सुइया ···गुफा···ककाल···मुर्दाघर मु···र···दा···घ···र ···।" बोलते-बोलते वह बेहोश हो गये।

मेरे हाथ-पाव फूल गये। मन में आया, चुपचाप भाग जाऊं, पर रेलवे का अधिकारी भाई होने के नाते मैं ऐसा नही कर सका। इतने में गाड़ी लखनऊ स्टेशन पर पहुच आई। मैंने दौड़कर कडक्टर से कोई डाक्टर बुलाने के लिए कहा। कडक्टर डाक्टर की जगह जी०आर०पी० की पुलिस

बुला लाया। पुलिस ने आते ही पहले मुझे पकड़ लिया और फिर उनके जेबों की तलाशी लेने लगी। ऊपर की जेब से एक डायरी निकली, जिसमें लिखा था—

गोपाल तिवारी, सहायक इंजीनियर,
उत्तर रेलवे मुख्यालय, बड़ौदा हाउस,
नई दिल्ली।

अकाल मृत्यु की स्थिति में, कृपया सूचित करें :—

श्रीमती गीता तिवारी, पत्नी
श्री महेश तिवारी, पुत्र
कु० रीता तिवारी, पुत्री
एक्स-वाई-22, सरोजिनी नगर,
नई दिल्ली।

मुख्य कार्मिक अधिकारी,
मुख्य लेखा अधिकारी,
उत्तर रेलवे मुख्यालय,
नई दिल्ली।

प्रबन्धक, जीवन बीमा निगम,
कस्तूरबा गांधी मार्ग, नई दिल्ली।

वेतन बिल यूनिट नं० 4578
भविष्य निधि खाता न० 11428
जीवन बीमा पालिसी नं॰ 5266772
स्टेट बैंक एकाउंट नं०-एल सी 5276
बड़ौदा हाउस, नई दिल्ली।

पुलिस सारा विवरण नोट करती गई। बीच-बीच में वह मुझसे भी बेतुके प्रश्न करती रही। मेरे तो हाथ-पाव फूल गये। ये सज्जन खुद तो गये ही, साथ में मुझे भी लपेटते गये। दिल घबडाने लगा, सिर दर्द से फटने लगा। आखो के आगे लाल-पीली, हरी-नीली चिनगारियां फूटने लगी। लगा, अन्दर दर्द के सपोले रेंग रहे है। हाथो-पैरों में सुइयां चुभ रही हैं। मैं बेचेन हो उठा। कही उनके हादसे की छाया मेरे ऊपर भी तो नही मडरा रही है। इतने में गार्ड ने सीटी दे दी। गाड़ी चलने वाली थी। पुलिस ने लाश नीचे उतार ली और मेरा नाम-पता नोट करने के बाद मुझे छोड़ दिया। लड़खड़ाता हुआ मैं स्टेशन से वाहर जाने की कोशिश करने लगा।

●●●

मुद्रक : रुचिका प्रिण्टर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 981